युवादृष्टि

नई सृष्टि का प्रतीक मासिक

वर्ष : २६ अंक : ६-७ जून, जुलाई, १९९८

प्रधान संपादक: कमलेश चतुर्वेदी | संपादक: पुखराज सेठिया | अतिथि संपादक: ललित गर्ग

आचार्य श्री तुलसी स्मृति विशेषांक

कहां क्या ?

- सम्पादकीय -पुखराज सेठिया 3
- आचार्य श्री तुलसी के अवदानों में अपनी शक्ति..... -आचार्य श्री महाप्रज्ञ 5
- आचार्य तुलसी का साहित्य -साध्वी सुनंदा 10
- बीसवीं शताब्दी के महासूर्य : आचार्य तुलसी -साध्वी प्रमुखा कनकप्रभा 11
- वे बहुत काम छोड़कर गए हैं -युवाचार्य महाश्रमण 15
- अध्यक्ष की कलम से -सुखराज सेठिया 19
- श्वास का अर्घ्य श्री तुलसी को -मुनि मोहजीत कुमार 21
- विदेशों में आचार्य तुलसी -समणी नियोजिका मुदितप्रज्ञा 23
- इतिहास के अमर नायक -मुनि सुमेरमल लाडनूं 33
- आधुनिक भारत के सुकरात -मुनि रमेश कुमार 37
- युगप्रधान कौन -साध्वी प्रियंवदा 41
- राष्ट्रीय एकता के प्रतीक पुरुष -मुनि लोकप्रकाश 'लोकेश' 43
- मानवीय एकता के पक्षधर -बालमुकुंद त्रिवेदी 47

संपादकीय कार्यालय
युवालोक
पो०बॉ० १६ लाडनूं-३४१३०६ (राज०)

तेयुप प्रकाशन
तार-युवालोक
फोन-(०१५८१) २२११४

शुल्क
एक प्रति ९ रुपये, वार्षिक १०० रुपये, त्रैवार्षिक २५० रुपये, आजीवन १००० रुपये

'युवादृष्टि' में प्रकाशित सामग्री से संपादक की सहमति का होना आवश्यक नहीं है ।

लेजर टाइपसेटिंग
अक्षर इंटरप्राइजेज

राजस्थान सरकार द्वारा पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत
(प्रधान संपादक, संपादक अवैतनिक)

● कर्मप्रधान व्यक्तित्व के धनी	-मुनि शुभकरण	51
● युगप्रवर्तक गुरुदेव श्री तुलसी	-हीरालाल जैन	52
● महिला समाज के उन्नायक	-शांता पुगलिया	53
● युग-धर्म के सृजक	-साध्वी अमितप्रभा	55
● नमन तुम्हें राजर्षि शतबार!	-डॉ0 रामजी सिंह	56
● प्रेरणापुंज आचार्य तुलसी	-साध्वी योगक्षेम प्रभा	57
● वे संजीवनी आंखें	-साध्वी राशिप्रभा	59
● कालजयी व्यक्तित्व गुरुदेव तुलसी	-सरोज दूगड़	63
● सुदूर दृष्टि वाले संत	-कुन्दन वागरानी	64
● सिद्धयोगी गुरुदेव श्री तुलसी	-मुनि किशनलाल	65
● आचार्य श्री तुलसी शक्तिपुंज महामानव	-साध्वी रचनाश्री	69
● अणुव्रत अनुशास्ता को तलाशती लाखों निगाहें	-साध्वी संघप्रभा	73
● नख-शिख में बसा सौन्दर्य	-साध्वी यशोधरा	77
● कहानी : दोस्ती	-समणी प्रसन्नप्रज्ञा	81
● अध्यात्म चेतना के शिखर पुरुष	-मुनि मदनकुमार	87
● कहां है वह चैतन्य पुरुष	-साध्वी शुभप्रभा	93
● बीसवीं शताब्दी के शिखर पुरुष	-मुनि राकेशकुमार	97
● आचार्य तुलसी - अणुव्रत आन्दोलन के प्राण	-साध्वी सरलयशा	101
● जब युवा क्षमताएं बांसों उछलने लगती थीं	-पदमचंद पटावरी	105
● परम चक्षुमान गुरुदेव तुलसी	-मुनि धर्मचंद 'पीयुष'	109
● एक सुदर्शन व्यक्तित्व	-साध्वी जिनप्रभा	121
● गुरुदेव तुलसी : मेरे संस्मरणों में	-रतनलाल शर्मा	125
● विभूति वैभव आचार्य तुलसी	-समणी मंगलप्रज्ञा	129
● जगद्वन्द्यः विशदचरितो नाम तुलसी	-डॉ0 गौतम कोठारी	133
● वात्सल्य रस की अनुपम वर्षा	-साध्वी रतनश्री	137
● अब तुम ठीक हो रहोगी	-साध्वी पुण्ययशा	141
● काश हम समझ पाते	-साध्वी कल्पलता	145
● आचार्य तुलसी : वसुधा के वैभव	-साध्वी स्वस्तिकाश्री	151
● सन्निधि के आईने में	-साध्वी शारदाश्री	155
● खामोश हो गया जहां	-साध्वी श्री मंजुरेखा	159
● अणुव्रत एक महत्वपूर्ण आन्दोलन	-समणी अक्षयप्रज्ञा	169
● अद्भुत गुरु : अद्भुत शिष्य	-विश्रुत विभा	171
● मर्यादा पुरुष : गुरुदेव तुलसी	-श्रीमती नीलम बोरड़	175
● पर्यावरण चेतना के जनक	-पन्नालाल मूंधड़ा	176
● विशाल, तेजस्वी पुंज के धनी	-भगतराम जैन	177
● जीवन के सच्चे कलाकार	-भूपेन्द्रकुमार मुथा	179
● मौत का पश्चाताप	-साध्वी सविताश्री	181
● संगीत सम्राट आचार्य तुलसी	-साध्वी स्वर्णरेखा	183
● महान् यायावर आचार्य तुलसी	-मानिकचन्द पुगलिया	189
● उनका जीवन बिना दिवारों को मंदिर था	-साध्वी कनकश्री	201
● नैतिक चेतना के अग्रदूत आचार्य श्री तुलसी	-डॉ0 आनन्द प्रकाश त्रिपाठी	205
● दादा का पत्र	ंकालाल मेहता	209

सम्पादकीय

उस दिव्य रोशनी को नमन!

पुखराज सेठिया

बाबा आमटे को पूछा गया कि क्या आप मृत्यु के बाद पुनः जीवन पर विश्वास करते हैं, तो उन्होंने कहा - मैं इस जीवन में कई जिन्दगियां जीने में विश्वास करता हूं। आचार्य तुलसी ने भी जीवन को इसी नजरिये से जीया। उन जैसे महापुरुष हमें बार-बार नहीं मिलेंगे। लेकिन उनका एक जीवन अनेक जीवनों की पूर्ति कर गया।

महावीर, बुद्ध, अशोक, अकबर और गांधी की पंक्ति का व्यक्तित्व, इस धरती पर हम लोगों के बीच ८३ वर्ष जीया और जीकर जनमानस को प्रेरित किया, जिसने सारा जीवन और शक्ति मानव मन को राजनैतिक अनैतिकता, आर्थिक विषमता, सामाजिक दमन, अनैतिक आंधी, सांस्कृतिक प्रदूषण, चारित्रिक दुर्बलता, एवं व्यक्तिगत चंचलता से उबारने के लिए लगा दिया। जिसका सारा कर्ममय जीवन केवल भारत नहीं बल्कि दुनियां और मानवता के लिए युद्ध, अंधकार, निराशा और अवसाद के खिलाफ शांति, रोशनी, आशा और सुख के लिये समर्पित था।

उनके त्यागमय जीवन के प्रति, उनके अटूट साहस के प्रति, दुर्घर्ष धैर्य के प्रति, उनके अनथक मानव कल्याण के प्रयत्नों के प्रति, उनके नैतिक मूल्यों की स्थापना के लिये किये प्रयत्नों के लिये सभी के मन में समान आदर एवं श्रद्धा है

विश्वबन्धुत्व के लिये वे एक प्रदीप्त बनकर उभरे।

लोकतंत्र शुद्धि के प्रयत्नों के लिये सभी राजनीतिक दलों में उनका आदर था।

उन्होंने मनुष्य मनुष्य के बीच भेद की दीवारों को तोड़ा।

वे अन्तिम आदमी तक अपनी बात पहुंचाने के लिये एक लाख किलोमीटर चले।

उन्होंने धर्म को मन्दिरों-मस्जिदों-गुरुद्वारों-गिरजाघरों से निकालकर मनुष्य के कर्म से जोड़ा।

आचार्य तुलसी ने कितने वजन वाली बात कही थी कि अगर प्रेरणा देनी है तो स्वयं प्रेरित हो। किसी को शुद्ध बनाना है तो स्वयं शुद्ध बनो।

जहां दोष एवं दुश्मन दिखाई देते हैं वहां संघर्ष आसान है। जहां ये अदृश्य हैं, वहां लड़ाई मुश्किल होती है। अनीति एवं विचारों का प्रदूषण हटाकर प्रामाणिकता का पर्यावरण लाना है तो आचार्य तुलसी के जीवन-आदर्शों को अपनाना होगा। आचार्य तुलसी को अपनाने के लिये हमें कहीं चलकर जाना नहीं है, किसी पोथी को टटोलना नहीं है, किसी सम्प्रदाय-धर्म की रूढ़ताओं को ओढ़ना नहीं है। क्योंकि उनका धर्म तो मनुष्य मात्र के लिये है और वे उनसे कहते हैं--अपने

अंदर झांको। आचार्य तुलसी तो दर्पण हैं, जिसके सामने खड़े होकर हम अपने आपको देखें।

आचार्य तुलसी के प्रति श्रद्धांजली अर्पित करते हुए हम अपने प्रति नैतिक बनें। हम दूसरों की बुराइयों को टटोलने की बजाय स्वयं की बुराइयों को दूर करें।

प्रथम पुण्यतिथि का प्रसंग है- यानी आचार्य तुलसी को याद करना। याद तो उन्हें करते हैं, जिन्हें भूल जाते हैं। आचार्य तुलसी भूलने वाली चीज नहीं हैं और जो भूलने योग्य है, उनको हम एक क्षण भी नहीं भूलते।

क्या कभी वह रोशनी खत्म हो सकती है, जो आचार्य तुलसी ने इस देश एवं दुनिया में असली ? आज से हजार वर्ष बाद भी यह रोशनी चमकेगी और इस देश-एवं दुनिया को चमकायेगी।

उस दिव्य रोशनी को नमन!

आचार्य श्री तुलसी एक उदात्त प्रेरणा बनें

आचार्य श्री तुलसी का अर्थ था, अहिंसा और अपरिग्रह का सशक्त प्रवक्ता, अध्यात्म और आचार्य तुलसी एकार्थक बने हुए थे। भौतिकता प्रधान और पदार्थवादी युग की समस्या के समाधान का जहां प्रश्न आया वहां आचार्य श्री तुलसी की उपस्थिति अनिवार्य रही।
अध्यात्म ही उनका सिद्धान्त था और वही उनका चमत्कार। उनके स्मृति दिवस का आयोजन मानवता की अर्चना का उपक्रम है। इसमें भाग लेने वाले सभी मानवता की सुरक्षा में संभागी बनकर अपने आपको धन्य अनुभव करें।
युवादृष्टि का आचार्य तुलसी विशेषांक इस सन्दर्भ में एक उदात्त प्रेरणा बनें।

–आचार्य श्री महाप्रज्ञ

एक भी खिड़की खुल गई तो . . . . . .

तेरापंथ के नवम अधिशास्ता आचार्य श्री तुलसी के अवदानों का एक पृष्ठ संघीय पत्र-पत्रिकाएं हैं। उनमें अ.भा.ते.यु.प. का पत्र युवादृष्टि पूरे परिवार के लिए पठनीय पत्र है। समय-समय पर युवादृष्टि के विशेषांक भी सामने आते रहे हैं। जून का महीना आचार्यश्री की अविस्मरणीय स्मृतियों से जुड़ा हुआ है। प्रत्येक पत्र-पत्रिका से सम्बंधित व्यक्तियों की भावना रही कि परम पूज्य आचार्यश्री की पुण्य वार्षिकी पर उनके बारे में कुछ लिखा जाए। लिखने के लिए तो इतना कुछ है कि सब लेखक पूरे वर्ष तक उनके बारे में लिखते रहें फिर भी बहुत अधिक लिखना शेष रह जाएगा। वैसे उस विराट व्यक्तित्व को शब्दों की सीमा में समेटना संभव ही नहीं है। युवादृष्टि ने एक छोटा-सा प्रयास किया है। उससे आचार्यश्री के व्यक्तित्व की एक भी खिड़की खुल पाई तो पाठकों को नया प्रकाश और ताजा हवा पाने की सुविधा मिलेगी। प्रस्तुत पत्र का जून अंक पठनीय और संग्रहणीय अंक बनेगा, ऐसा विश्वास है।

–साध्वी प्रमुखा कनकप्रभा

आचार्य तुलसी के अवदानों में अपनी शक्ति का नियोजन करें

आचार्य श्री महाप्रज्ञ

विक्रम संवत् २०००, शान्ति निकेतन, गंगाशहर में चातुर्मासिक प्रवास। संध्या प्रतिक्रमण का समय। उस समय प्रतिक्रमण सामूहिक नहीं होता था। सब अपने-अपने नियत स्थान पर प्रतिक्रमण करते थे। प्रतिक्रमण के पश्चात् मैं गुरुदेव को वंदना करने गया। वंदना के पश्चात् वार्तालाप शुरू हुआ है। मंत्री मुनि गुरुदेव के पास विराज रहे थे। उन्होनें मेरी ओर इशारा करते हुए कहा- अन्नदाताधिराज! नत्थू (आचार्य महाप्रज्ञ) आजकल बहुत ग्रन्थ पढ़ रहा है। आपने ध्यान दिया या नहीं? कहीं खतरा तो नहीं है? मंत्री मुनि को यह आशंका रहती थी। जब तक जैन आगम शास्त्रों को आचार्य भिक्षु के ग्रन्थों को परिपक्व रूप में पढ़ न लें तब तक दूसरे ग्रन्थों को पढ़े तो खतरा हो सकता है। गुरुदेव ने कहा - 'कोई खतरा नहीं है। सब मेरे ध्यान में है। आप निश्चिंत रहें।' उस वर्ष मैंने काफी नये-नये ग्रन्थ पढ़ने शुरू किये। वे इस परम्परा में नहीं पढ़े



आचार्य महाप्रज्ञ आचार्य श्री तुलसी से मंत्रणा करते हुए

जाते थे। मंत्री मुनि की यह आशंका उचित थी कि यह नये-नये ग्रन्थ पढ़े जा रहा है। केसा रहेगा? मेरा जो भी अध्ययन होता, गुरुदेव की दृष्टि के विना नहीं होता। प्रत्येक कार्य उनकी प्रेरणा और जानकारी में होता। मेंने समाजवाद के ग्रन्थ भी पढ़े, साम्यवाद के ग्रन्थ भी पढ़े। विज्ञान के ग्रन्थ भी पढ़े। गुरुदेव के सिवाय कोई भी पक्ष में नहीं था। यह गुरुदेव की दूरदर्शिता थी कि इस युग में इन ग्रन्थों को पढ़ना आवश्यक है। इनके आधार पर हमें आगमों की व्याख्या करनी है। अगर उस समय प्रतिवन्ध हो जाता, नहीं पढ़ता तो न अच्छा आगम संपादन होता, न प्रेक्षाध्यान होता, न जीवन विज्ञान होता ओर न आध्यात्मिक वैज्ञानिक व्यक्तित्व के निर्माण की वात हमारे हाथ में होती न अनेक समस्याओं का ताला खोलने की चावी हमारे हाथ में होती। विक्रम संवत् २००० में वह क्रम शुरू हुआ इसलिए दस वीस वर्ष वाद क्रमशः विकास होता चला गया।

यह पूज्य गुरुदेव की दृष्टि सम्पन्नता का एक निदर्शन है। आचार्य को केसा होना चाहिए? आचार्य की जो सम्पदा वतलाई गई है, उसमें एक है दृष्टि सम्पन्नता। जो दृष्टि संपन्न नहीं होता, वह बहुत यशस्वी आचार्य नहीं वन सकता। दृष्टि सम्पन्न होना, अन्तर दृष्टि का जागरण होना, युग की नब्ज़ को पहचानना वहुत महत्वपूर्ण है। युग एक दिशा में जा रहा है और धर्म दूसरी दिशा में जा रहा हे तो दोनों में टकराव होता है। धर्म भी सफल नहीं होता। धर्म के द्वारा युग को कोई लाभ नहीं मिलता। अध्यात्म एक सवसे वड़ी शक्ति हे पर उस शक्ति का उपयोग कव हो सकता है? युग के साथ चलें तव उपयोग हो सकता है, अन्यथा हो नहीं सकता।

गुरुदेव में नये-नये ग्रन्थ पढ़ने की, नई वस्तुओं को ग्रहण करने की अद्‌भुत क्षमता थी। मैं अनेक वार कहता हूं - मैंने अपने जीवन में गुरुदेव जेसा ग्रहणशील व्यक्ति नहीं देखा। वे हर नई वात को पकड़ लेते। छापर का चातुर्मास भुलाया नहीं जा सकता। पट्टोत्सव का कार्यक्रम चल रहा था। गुरुदेव के हाथ में एक पत्रिका आ गई। उसमें रूस के पाठ्यक्रम की विस्तार से चर्चा थी। मैं पास में वैठा था। मुझे कहा - देखो क्या है? मैंने देखा, निवेदन किया - यह पाठ्यक्रम की पुस्तिका है। गुरुदेव वोले हमें भी ऐसा पाठ्यक्रम साधु-साध्वियों के लिए बनाना चाहिए। गुरुदेव का जो आदेश होता वह कार्य हो जाता। तीन दिनों में एक सप्तवर्षीय पाठ्यक्रम तैयार कर लिया। योग्य, योग्यतर और योग्यतम - इस त्रिस्तरीय पाठ्यक्रम से जो विद्यार्थी निकले हैं, आज वास्तव में ही वे योग्यतम हें। साध्वी प्रमुखा तथा अनेक साध्वियां काम कर रही हैं, अनेक साधु भी हें, वे योग्य, योग्यतर, योग्यतम से निकलें है। पता नहीं ऐसे व्यक्तित्व युनिवर्सिटी में क्यों नहीं बनते? हम विश्लेषण करें, जितने उस श्रेणी में तेयार हुए थे, अव क्यों नहीं हो रहे हैं? वह पाठ्यक्रम तत्काल चालू हो गया ओर बरसों तक चलता रहा। जव परीक्षायें होती तव परीक्षा के लिए मुझे भी रहना पड़ता। व्यावर में परीक्षा हुई, गुरुदेव ने विहार कर दिया, वहां मुझे रहना पड़ा। फिर भगवतगढ़ में परीक्षायें हुई, मैं उनकी संयोजना के लिए रहा। मुझे याद है, उन दिनों में सुवह से लेकर रात को दस, ग्यारह वजे तक पढ़ाता रहता, परीक्षा की तैयारी कराता रहता। उस पाठ्यक्रम से धर्मसंघ में अनेक प्रतिभाओं का प्रस्फुटन हुआ।

वही व्यक्ति ग्रहण कर सकता है, जिसमें ग्रहण-की योग्यता होती है। गुरुदेव में यह विलक्षण क्षमता थी। यह माना जाता रहा-विज्ञान ने धर्म का सत्यानाश कर दिया। गुरुदेव ने कहा - विज्ञान ने धर्म का उपकार किया है। यह दृष्टि संपन्नता की बात है कि किस प्रकार नई चीज को पकड़ा जाये। लाडनूं, जैन विश्व भारती में गोष्ठी हो रही थी। एक प्रोफेसर खड़ा हुआ, बोला, गुरुदेव! अर्थशास्त्र के बारे में सबने विचार किया है, बहुत सारा साहित्य प्रकाश में आया है किन्तु जैन दृष्टि से अर्थशास्त्र पर विचार नहीं हुआ है। गुरुदेव ने एक पुस्तक हाथ में देते हुए कहा - देखो क्या है? इसका नाम है महावीर का अर्थशास्त्र। आप कैसे कहते हैं कि जैन दृष्टि से अर्थशास्त्र की मींमांसा सामने नहीं आई?

जो आज की अपेक्षा है, जो भविष्य की अपेक्षा है, उस अपेक्षा को जो नहीं जानता, वह महान नहीं हो सकता, दृष्टि सम्पन्न नहीं हो सकता। जो व्यक्ति भविष्य की आकांक्षाओं, अभीप्साओं, अभिप्ताओं और आवश्यकताओं को जान लेता है, उनका अंकन कर लेता है वास्तव में वही यक्ति महान होता है।

सन् १९८९ में योगक्षेम वर्ष मनाया गया। उसमें आध्यात्मिक वैज्ञानिक व्यक्तित्व के निर्माण की बात प्रस्फुटित हुई। मैं मानता हूं कि आज भी अपेक्षा है कि अब एक और योगक्षेम मनाया जाए। अगर उतना बड़ा नहीं तो कुछ भागों में बांटकर मनाया जाए। चार सौ नहीं, १००-१५० साधु-साध्वियों को वर्ष भर प्रशिक्षण दिया जाए। गुरुदेव ने कहा कि अच्छा तो है देखो कब मनाना है। अब तो जब मनाना है, हमें सोचना पड़ेगा। मैं आज महसूस करता हूं कि कभी न कभी फिर से हमें ऐसा कुछ करना चाहिए। यह आवश्यक है। उस वर्ष का परिणाम हमारे सामने बहुत अच्छा आया। उसके बाद साधु-साध्वियां जहां भी गए, एकदम आधुनिक ढंग से, व्यवस्थित ढंग से काम करने की शैली आ गई। उनके व्यक्तित्व, वक्तृत्व, लेखन और चिंतन में भी अन्तर आ गया। आज भी उसकी अपेक्षा है।

एक संदर्भ है साहित्य का। आज हमारा साहित्य वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अनुप्राणित है इसलिए वह हर किसी को मान्य होता है। प्रिंसिपल डॉ० अरोड़ा का पत्र आया, उन्होंने लिखा कि मैंने प्रेक्षाध्यान की एक भी पुस्तक बिना पढ़े नहीं छोड़ी। इसमें कितना आध्यात्मिक दृष्टिकोण और कितना वैज्ञानिक दृष्टिकोण है, दोनों साथ में हैं। हमारा साहित्य आज जो लोकमान्य हुआ है, लोकप्रिय हुआ है, केवल तेरापंथ समाज में नहीं, दूसरे समाज में भी। उसका कारण यह वैज्ञानिक आध्यात्मिक दृष्टिकोण है। एक भाई ने बताया कि -मैं कच्छ की यात्रा में एक उपासरे में गया। मैंने सबसे पहले तेरापंथ का साहित्य पढ़ा, देखा। मुझे आश्चर्य भी हुआ और हर्ष भी हुआ।

साहित्य की व्यापकता का कारण यह है कि इसमें साम्प्रदायिकता नहीं है, संकीर्णता और रूढ़िवाद नहीं है, झूठी बात का समर्थन नहीं है। शुद्ध, सत्य वैज्ञानिक और आध्यात्मिक दृष्टिकोण है। उसका एक उदाहरण है आगम संपादन। तब हमने आगम संपादन का कार्य शुरू किया,

गुरुदेव ने गोष्ठी बुलाई, कहा देखो तुम यह काम कर रहे हो। एक बात का ध्यान रखना कि इसमें साम्प्रदायिकता न आये। एक संप्रदाय विशेष का आचार्य ऐसी बात कह नहीं सकता। जिसके मन में साम्प्रदायिक कट्टरता हो, वह इस भाषा में सोच नहीं सकता। गुरुदेव ने कहा कि कोई साम्प्रदायिकता की बात नहीं आए, जो मूल आगम में हे वही बात आनी चाहिए। कोई बात अपने संप्रदाय की मान्यता से टकराए तो नीचे फुट-नोट में दे सकते हैं कि इसमें हमारी मान्यता यह है। लिखना वही है जो कि मूल बात है। इतना विशाल दृष्टिकोण था। उसके आधार पर साहित्य लिखा गया।

मैं मानता हूं कि हम आज बहुत समृद्ध हैं। कुशल शासक कहें, कुशल पिता कहें, कुछ भी कहें वह कितना महान होता है, जो अपनी भावी पीढ़ी के लिए अपने पीछे विशाल सम्पदा छोड़कर जाता है। आचार्य तुलसी ने हमारे लिए इतनी सम्पदा छोड़ी है कि आज हमारा साधु-साध्वी संघ, तेरापंथ धर्मसंघ इस दृष्टि से जितना संपन्न है, उतना संपन्न शायद कोई नहीं है। जितना संपन्न गुरुदेव ने इस संघ को बनाया है, जितना साहित्य का अवदान दिया है, यह कितना कठिन काम है। आचार्य तुलसी ने केवल आदेश- निर्देश नहीं किया, स्वयं कितना खपे हैं। चार-चार पांच-पांच घण्टे प्रतिदिन लगाए हैं। कई बार मैंने प्रार्थना की – लोग आते हैं, भीड़ है। गुरुदेव को यह विश्वास था कि मैं नहीं बैठूंगा तो तुम्हारा काम ठीक नहीं होगा। लोग आ जायेंगे और बीच में बाधा डालेंगे। यह भी विश्वास था कि मैं बैठा रहूं तो तुम्हारा काम अच्छा होता है। बात भी सही थी। इतना कठोर श्रम हुआ है। जैनेन्द्र जी ने एक बार कहा कि भारत सरकार ने एक कोश बनाने का काम लिया। चार पांच करोड़ की योजना थी। उसकी प्रायः राशि तो पूर्व तैयारी में ही खप गई। काम तो बाकी पड़ा रहा पता नहीं कितने पण्डित लगेंगे और कितना काम होगा। सारी राशि तो वेतन में चली जायेगी और काम होगा नहीं। आपने इतना काम कर दिया। यह काम करोड़ों में नहीं हो सकता। गुरुदेव ने कहा जो करोड़ों से नहीं हो सकता, वह समर्पण से हो सकता है। हमारे सारे साधु-साध्वियां, काम करने वाले व्यक्ति समर्पित है। आगम सम्पादन में हमारे साथ काम कर रहे संतों ने, इतने समर्पण के साथ काम किया, जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती। पहला नया आयास और अनुभव, कितनी कठिनाइयां, कितनी खोज कहा नहीं जा सकता। अनवरत श्रम किया। जैसे-जेसे हम आगे बढ़े, आगम सम्पादन में नये-नये उपक्रम आते गये। भगवती जोड़ का संपादन हुआ। उसमें कोई नया भाष्य या टीका तो नहीं लिखनी थी। अगर गुरुदेव अपना इतना समय नहीं लगाते, साध्वी प्रमुखा और उनकी सहवर्ती साध्वियां इतना श्रम नही करती तो असम्भव जैसा काम था। गुरुदेव उस कार्य को संपन्न कर गए। अन्यथा अब तो ऐसा लगता है कि वह कार्य पड़ा ही रहता है। जयाचार्य ने भगवती की जोड़ बनाई, उनको पांच वर्ष लगे। उसमें भी साध्वी प्रमुखा गुलाबांजी का योग रहा। गुरुदेव फरमाते है हमें संपादन में १५ वर्ष लगे। तिगुना समय लग गया। कल्पना करे कि जिस ग्रन्थ को बनाने में ५ वर्ष लगे और संपादन में लगे १५ वर्ष। उसमें कितना श्रम हुआ है। मैंने गुरुदेव से लाडनूं में प्रार्थना की भगवती के तीन

कार्य हैं, पहला भगवती की जोड़ का संपादन, दूसरा भगवती भाष्य और तीसरा भगवती की रागों का आकलन। उनकी रागें गुरुदेव के सिवा कोई नहीं जानता। मैंने कहा यदि यह रह जायेंगी तो फिर इनका ज्ञाता कौन रहेगा। संगीत शास्त्र से भले ही इन्हे बांधा जाए। कई बार प्रार्थना की, तब रागों का संगान शुरू किया, शायद कुछ हुआ। कुछ रागों का अमृत वाणी ने संग्रह किया। गुरुदेव ने भगवती की जोड़ गाई पर कुछ बाकी रह गया।

तेरापंथ का अतीत, भविष्य और वर्तमान आज है, उसे समग्रता से जानने वाले गुरुदेव एकमात्र थे और थोड़ा बहुत मैं जानने वाला हूं। दो ही हैं और सब नई पीढ़ी के हैं, बहुत बातों को नहीं जानते हैं, बहुत रहस्यों को नहीं ज़ानते हैं कि संघ की क्या-क्या रहस्यपूर्ण बातें हुई हैं? गुरुदेव ने कहा यह कैसे हो सकता है? एक प्रकार से परम्परा की एक नई शृंखला ही हमारे सामने आयेगी। ऐसा योग है तब क्या करे? कुछ बातें रह ही गई। मैंने कई बार प्रार्थना की आप जैसे अपना संस्मरण लिखते हैं, वैसे अपने प्रशासन के अनुभव भी लिखें। गुरुदेव ने एक बार कहा - शुरू करो, एक अनुभव की पुस्तक बन जायेगी। ६० वर्ष में क्या-क्या स्थितियां आई हैं, आकलन हो जायेगा। गुरुदेव ने कहा भी, सोचा भी, पर हो नहीं सका।

सब बातें पूरी कहां होती है? अब तो उन बातों को मैं ही जानने वाला हूं। सारी अंतरंग बातें हैं। कोई तीसरा जानने वाला है नहीं। अब मैं भी कितना कर पाऊंगा, कह नहीं सकता। बहुत सारे काम हैं, किन्तु अनेक विधाओं, अनेक दिशाओं में साहित्य का जो काम हुआ है, आगम संपादन का जो काम हुआ है, वह अपूर्व है। योगक्षेम वर्ष में एक ग्रन्थ संकलित हुआ था गाथा पण्डित मालवणिया ने लिखा जैन विश्व भारती से जितना साहित्य प्रकाशित हुआ है, उसमें गाथा जितना महत्वपूर्ण ग्रन्थ एक भी नहीं। इतना महत्व उन्होंने आंका। जो काम हमने छापर चौमासे में शुरू किया, उसका परिष्कृत रूप योगक्षेम वर्ष में सामने आया। वस्तुतः साहित्य का विशाल काम हुआ है। आज हर व्यक्ति को ऐसा अनुभव होता है। लोग आते हैं तो सबसे पहले कहते हैं कि साहित्य लेना है, नया साहित्य क्या है। श्रावकों को भी बड़े गर्व का अनुभव होता है। आध्यात्मिक और वैज्ञानिक व्यक्तित्व का निर्माण अध्यात्म और विज्ञान की तुलना तथा उस दृष्टिकोण से साहित्य का निर्माण, यह तुलसी युग का तेरापंथ में ऐसा अवदान है, जो इन शताब्दियों में नहीं हुआ। आज चल रहा है। भविष्य में होगा या नहीं होगा, मैं नहीं कह सकता। इसकी धारा को हमें अक्षुण्ण बनाये रखना है। हमारे साधु-साध्वियां, समण-समणियां इस पर ध्यान दें कि हमें साधारण साहित्य में नहीं उलझना है। गम्भीर, चिन्तनपूर्ण, युग की समस्या को समाधान देने वाला साहित्य हमारी लेखनी से आये और वह तब सम्भव है जब हमारा उतना ही गहन अध्ययन हो, मनन और मंथन हो। मैं विश्वास करता हूं कि हमारे सभी साधु-साध्वियां, समण-समणियां और श्रावक भी ऐसे साहित्य का काम करें, जो तेरापंथ की श्री को वढ़ाता रहे। हमारी सम्पदा वढ़ती रहे और साथ में जनता का कल्याण हो। आचार्य तुलसी के अवदानों में अपनी शक्ति का नियोजन करना आचार्य तुलसी को चिरंजीवी बनाना है।

आचार्य तुलसी का साहित्य

☐ साध्वी सुनन्दा ☐

संभल सयाने! जो सुख में सुमिरण करे तो उसे जीवन की सार्थक दिशाएं मिल सकती हैं और वह विना किसी विघ्न बाधा के मंजिल की ओर अग्रसर हो सकता है। नहीं तो राजपथ की खोज करते-करते सफर आधी शताब्दी का वीत जायेगा। जिस सफर में एक और नया मोड़ भी है। जो विचार वीर्थी की ओर मुड़ता है। जो भी व्यक्ति वैसाखियां विश्वास की लेकर इस गली से गुजरेगा तो शीघ्र ही जय-अनुशासन के पर्वत पर चढ़ सकेगा जहां पर नैतिक संजीवन की जड़ी-बूटियां हैं और प्रवचन पाथेय की ध्वनि गूंजती रहती है। वह ध्वनि सुनने के वाद उसमें मनोनुशासनम् की भावना सहज ही जागृत हो उठेगी लघुता से प्रभुता मिले वाली वात भी सार्थक हो जायेगी। लघुता से प्रभुता मिलते ही वह अणुव्रत गति०प्रगति की ओर बढ़ने लगेगा। फिर मुखड़ा क्या देखे दर्पण में की अपेक्षा नहीं रहेगी।

पूज्य गुरुदेव ने अपने एक ही अमृत संदेश में युवकों को सचेत करते हुए कहा- भोर भई! जागो! निद्रा त्यागो और कुहासे में उगता सूरज देखो। क्योंकि जब जागे तभी सवेरा। उठो जल्दी उठो कहीं सूरज ढल न जाये। अतीत का विसर्जन अनागत का स्वागत करो और नया समाज नया दर्शन में अपने नाम का हस्ताक्षर कर दो।

नई पीढ़ी नया संकेत पाने के लिए पूछती है कि क्या धर्म बुद्धिगम्य है? पूज्य गुरुदेव उन्हें समाधान की ओर ले जाते हुए उद्बोधन देते हैं कि- सुनो! धर्म एक कसौटी है, एक रेखा है लेकिन मेरा धर्म केन्द्र और परिधि में है, तो समता की आंख और परिधि की पांख खुल जायेगी। अतः गृहस्थ को भी अधिकार है धर्म करने का। यह स्वर तभी मुखर होगा जब गृहस्थ इसे आचरण में लायेंगे। फिर धर्म करने से चाहे दीये से दीया जले या न जले किन्तु मनहंसा मोती चुगे तो अणुव्रत के आलोक में मानवता मुस्काये विना कैसे रह सकती है। दोनों हाथ एक साथ हों तो बूंद-बूंद से घट भरे व दीया जले अगम का अन्यथा बीती ताहि विसारि दे किन्तु महके अब मानव मन की कल्पना कितनी साकार करोगे यह तो दायित्व का दर्पण, आस्था का प्रतिबिम्ब ही बतायेगा।

तुम लोग चाहे तो व्रत दीक्षा या समणदीक्षा लेकर तेरापंथ की विचार दीर्घा में प्रवेश पा सकते हो क्योंकि यहां तो बूंद भी लहर भी की आवश्यकता है। जानते हो खोए सो पाए कूद पाने के लिए कुछ खोना भी पड़ता है। तुम घर खोकर आध्यात्मिकता पा सकते हो आध्यात्मिक विकास के लिए तुम्हें जैन तत्व विद्या का प्रशिक्षण लेना होगा तथा कालू तत्व शतक, जैन तत्व प्रवेश, जैन सिद्धान्त दीपिका, भिक्षु न्यायकर्णिका, श्रावक प्रतिक्रमण आदि कुछ प्रेक्षा अनुप्रेक्षा के प्रयोग भी सीखने होंगे। वर्ना तुम्हें जिज्ञासा के पंख समाधान का आकाश नहीं मिलेगा और शान्ति के पथ पर कदम भी नहीं बढ़ा पाओगे। फिर तो तुम्हारे सामने घर का रासता ही एक मात्र विकल्प रह जायेगा। घर पहुंचने के वाद तुम्हारे आगे की सुधि लेई (लेने) वाला कोई नहीं बचेगा। इसलिये संस्मरणों के वातायन से झांक कर देखो सफलता तुम्हारे द्वार पर अवश्यमेव दस्तक देती मिलेगी।

बीसवीं शताब्दी के महासूर्य : आचार्य तुलसी

❑ साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा ❑

अणुव्रत अनुशास्ता आचार्य श्री तुलसी को मैं एक महासूर्य के रूप में देखती हूँ। सूर्य की दो भूमिकाएँ मानी गई हैं :—रोशनी और रवानी। वह गतिशील है। उसने कब चलना प्रारम्भ किया ? और कब तक चलता रहेगा ? इन सवालों के जवाब गणित की किसी भी पुस्तक में नहीं हैं। वह चलता हुआ दिखाई नहीं देता। फिर भी प्रात: और सायं उसकी उपस्थिति दो विपरीत छोरों पर रहती है। आकाश के जिस दिग्विभाग में वह उदित होता है, उसका नाम पूर्व दिशा है। जिस छोर पर वह हमारी आँखों से ओझल होता है, वह पश्चिम दिशा है।

सूर्य केवल गति ही करता तो मानव या प्राणी जाति का उपकारी नहीं होता। वह प्रकाश देता है। अँधेरे में डूबे हुए विश्व को प्रकाश से नहलाता है। उसके सहयोग से ही हमारी आँखें दृश्य पदार्थों को अपना विषय बनाती हैं। सूर्य अपना प्रकाश नहीं बाँटता तो आँखों का कोई उपयोग ही नहीं हो पाता। सूर्य के पास प्रकाश है और ऊर्जा है। विज्ञान ने सौर ऊर्जा के दोहन की तकनीक विकसित की है। ऊर्जा के सहारे ऐसे कार्य निष्पादित किए जा रहे हैं, जिनके होने की कोई संभावना नहीं थी।

आश्वस्ति के केन्द्र

आचार्य श्री तुलसी गति, प्रकाश और ऊर्जा के पर्यायवाची थे। उन्होंने पाँव-पाँव चलकर इस देश की धरती को मापा। वे जहाँ-जहाँ गए, हर वर्ग के लोग उनके सम्पर्क में आए। उन्होंने व्यक्ति, समाज और राष्ट्र की समस्याओं को खुली आँखों से देखा और खुले दिमाग से उनका समाधान खोजा। उन्होंने चिन्तन के नए क्षितिज खोले। उनमें लकीर से हटकर चलने का साहस था। उनका नेतृत्व घटनाओं के प्रवाह में बहने वाला नहीं था। वे हर घटना के रुख को मोड़ना जानते थे। उनके देदीप्यमान ललाट और चमकीली एवं प्रभावपूर्ण आँखों में जादुई सम्मोहन था। पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर जो भी उनके सम्पर्क में आते वे पूरी तरह से उनके होकर रह जाते थे। उनके रोम-रोम से झरने वाले वात्सल्य का परस पाकर पाषाण-दिल लोग भी पिघल जाते थे। उनके निकट बैठने वाले व्यक्ति ऐसा अनुभव करते मानो वे विशाल वटवृक्ष की शीतल छाया में आश्वस्त होकर विश्राम कर रहे हैं।

प्रभावी प्रवक्ता

आचार्य श्री कुशल प्रवचनकार थे । उनके प्रवचन का प्रतिपाद्य शब्दो से अधिक उनकी भावभंगिमा के द्वारा श्रोताओं के मन मे उतरता था । यह क्षमता हर एक प्रवक्ता में नही मिलती । वक्ता की मुद्राओं और शब्दो मे सामंजस्य स्थापित होने से वक्तृत्व जितना प्रभावी होता है, केवल विद्वता से उतना प्रभाव नहीं हो पाता । आचार्य श्री के प्रवचन सुनकर एक प्रबुद्ध व्यक्ति ने कहा– 'प्रवचन का ओजपूर्ण अर्थ इतनी तेजी से संप्रेपित होता है । संप्रेषण की प्रकिया देखकर ऐसा प्रतीत होता है मानो गली हुई धातु एक नमनीय आकृति मे ढल रही है ।' भिन्न-भिन्न परिवेश मे जीने और विभिन्न भाषा बोलने वाले लाखों-लाखों लोगों के मन पर उनके प्रवचन की छाप है ।

"आज विश्व जिस कगार पर खड़ा है, उसे आचार्य तुलसी जैसे महापुरुष के मार्गदर्शन की अपेक्षा है । काश ! इक्कीसवीं शताब्दी में प्रवेश करते समय इस युग को उनका सीधा दिशादर्शन उपलब्ध हो पाता । किन्तु बीसवीं सदी का आखिरी दशक अपने इतिहास के एक पृष्ठ में उस युगपुरुष के महाप्रयाण की गाथा लिख गया । एक वर्ष पूरा होने को है, फिर भी उस घटना पर न आँखों को विश्वास हो रहा है और न कानों को । आँखें उस महापुरुष की छवियों को अपने भीतर सहेजकर रखने के लिए आतुर हैं और कान पदचाप सुनने के लिए उत्सुक हैं । जन-जन की यह आतुरता और उत्सुकता आचार्यश्री तुलसी तक पहुँचे और वे अपने नए लोक से ही इस दुनिया तक कोई संदेश पहुँचाते रहें ।"

बात सन् १९६० की है । कलकत्ता से राजस्थान की यात्रा करते समय आचार्य श्री दिल्ली पहुँचे । दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी मे उनके सार्वजनिक अभिनन्दन का कार्यक्रम था । सुप्रसिद्ध चित्रकर्त्री कुमारी एलिजाबेथ ब्रूनर उस कार्यक्रम में उपस्थित थी । वह आदि से अन्त तक वहाँ बैठी रही । उसकी स्थिरता देखकर किसी को यह आभास ही नही हुआ कि वह हिन्दी नही जानती । आचार्य श्री उससे परिचित थे । कार्यक्रम की समाप्ति के बाद उन्होंने एलिजाबेथ से कहा– 'तुम हिन्दी नही समझती, फिर इतनी देर चुपचाप कैसे बैठी रहती हो ?' वह

बोलीं— प्रेम की भाषा अलग ही होती है । मैं उसे समझती हूँ इसलिए घंटों-घंटों यहाँ बैठकर भी अघाती नहीं ।'

वीतराग चेतना के प्रतीक

आचार्य श्री का आभामंडल जितना उज्ज्वल था, उतना ही आकर्षक था । उनके अवग्रह क्षेत्र में बैठने वाले लोगों को जिस अनिर्वचनीय आनंद की अनुभूति होती, वे उसे जीवन-भर भूल नहीं पाते । शारीरिक और मानसिक दृष्टि से अस्वस्थ व्यक्ति उनकी सन्निधि पाकर इतने आह्लादित हो जाते तो एक बार तो अपनी समस्या को भूल-से जाते । मनुष्य के जीवन में उतार-चढ़ाव आते रहते हैं । चढ़ाव के समय प्राय: सभी लोग अपनत्व दिखा सकते हैं, पर उतार के क्षणों में अपने भी पराए बन जाते हैं । चारों ओर से असहाय व्यक्ति का मनोबल क्षीण हो जाता है । आचार्य श्री ऐसे व्यक्तियों के लिए आलम्बन थे । सघन निराशा के क्षणों में वे आशा के अमर आलोक बनकर व्यक्ति को उत्साह से भर देते थे ।

आचार्य श्री के व्यक्तित्व का एक विशिष्ट अंग था उनकी जिन्दादिली । उनके अपने जीवन में भी अनेक ऐसे क्षण आए, जो धैर्य का बाँध तोड़ने के लिए उत्कंधर थे । किन्तु धैर्य की टूटन तो दूर, उसमें लचक तक नहीं आई । कुछ प्रसंगों में तो उनकी अविचल धृति ने सब लोगों को अभिभूत कर लिया । धर्मसंघ के सर्वोच्च अनुशास्ता होने के कारण उन्हें अनेक बार ऐसे निर्णय लेने पड़े, जिनसे पहले या पीछे व्यक्ति सहज नहीं रह सकता । उन प्रसंगों में आचार्यश्री की सहजता ने उनको स्थितप्रज्ञता के शिखर तक पहुँचा दिया । गंगापुर, सरदारशहर, कलकत्ता, रायपुर, चूरू, दिल्ली आदि क्षेत्रों में घटित घटनाएँ स्मरण मात्र से कंपन पैदा कर देती हैं । उन घटनाओं की आचार्यश्री ने जिस तटस्थता के साथ समीक्षा की, वह बताती है कि उनकी चेतना वीतरागता की दिशा में अग्रसर थी ।

धर्मक्रांति के पुरोधा

आचार्यश्री जैसे युगपुरुष शताब्दियों-सहस्राब्दियों से कभी-कभी युग को दिशाबोध देने के लिए आते हैं । जैन परम्परा में तेरापंथ धर्मसंघ के आचार्य होने पर भी उनका चिन्तन कभी उस सीमित घेरे में नहीं रहा । वे समग्र मानव जाति के बारे में सोचते थे और वैश्विक समस्या का समाधान खोजने में तत्पर रहते थे । उन्होंने धर्मक्रांति के पाँच सूत्र दिए— बौद्धिकता, प्रायोगिकता, वर्तमान-प्रधानता, समाधायकता और सर्वधर्मसद्भाव । धर्म के साथ प्रबुद्धता की बात जोड़कर उन्होंने अंधश्रद्धा के साथ अपनी असहमति प्रकट कर दी । धर्म को प्रयोगभूमि बनाकर उन्होंने धार्मिक कुरूढ़ियों पर सीधा प्रहार किया । वर्तमान जीवन की पवित्रता को धर्म की निष्पत्ति बताकर उन्होंने नरक के भय एवं स्वर्ग के प्रलोभन से किए जाने

वाले धर्म की धारणा बदल दी। भोजन करने पर भी भूख शांत न हो, उस भोजन की कोई सार्थकता नहीं होती। धर्म का आचरण करने पर भी अशांति की समस्या का समाधान न हो, वह धर्म अपनी उपयोगिता के आगे प्रश्न चिह्न लगा देता है। यह विचार देकर उन्होंने धर्म की समाधायक भूमिका से जनता को अवगत कर दिया। धर्म के नाम पर होने वाली लड़ाइयों के इतिहास को बदलने के लिए उन्होंने धर्म के उस स्वरूप को उजागर किया, जो सब धर्मों के प्रति सद्भावना का प्रेरक था।

धर्मक्रांति की इस पंचसूत्री को लेकर आचार्यश्री ने बीसवीं सदी की धार्मिक चेतना में नए प्राण फूँक दिए। अंधश्रद्धा और शुष्क तर्कवाद—दोनों अतिवादों से दूर रहकर उन्होंने धर्म को यथार्थ का ठोस धरातल दिया। उनके धार्मिक प्रवचन सुनकर अपने आपको नास्तिक मानने वाले लोगों ने भी आन्तरिक आस्था के साथ उनके चरण छूकर धर्म को अपनी सहमति दी। आचार्यश्री की विचार-सरणि ने लाखों-लाखों लोगों के चिन्तन को नई दिशा देकर एक युगसन्त के रूप में अपनी उपस्थिति का अहसास करा दिया।

आज विश्व जिस कगार पर खड़ा है, उसे आचार्य तुलसी जैसे महापुरुष के मार्गदर्शन की अपेक्षा है। काश ! इक्कीसवीं शताब्दी में प्रवेश करते समय इस युग को उनका सीधा दिशादर्शन उपलब्ध हो पाता। किन्तु बीसवीं सदी का आखिरी दशक अपने इतिहास के एक पृष्ठ में उस युगपुरुष के महाप्रयाण की गाथा लिख गया। एक वर्ष पूरा होने को है, फिर भी उस घटना पर न आँखों को विश्वास हो रहा है और न कानों को। आँखे उस महापुरुष की छवियों को अपने भीतर सहेजकर रखने के लिए आतुर हैं और कान पदचाप सुनने के लिए उत्सुक हैं। जन-जन की यह आतुरता और उत्सुकता आचार्यश्री तुलसी तक पहुँचे और वे अपने नए लोक से ही इस दुनिया तक कोई संदेश पहुँचाते रहें। गति, प्रकाश और ऊर्जा के प्रतिरूप उस प्रतीक पुरुष के सतत स्मरणीय स्वरूप को श्रद्धासिक्त प्रणाम।

● शत शत प्रणाम !

आचार्य तुलसी जी ने अणुव्रत आंदोलन के द्वारा इस देश में लाखों मील की यात्रा करके जन-जागृति का अद्भुत काम किया है। आचार्य जी का जीवन आदर्श जीवन रहा है। उन्होंने मानव जाति के उद्धार के लिए ही तपस्या की है और सर्व साधारण लोगो को अपना उद्धार करने का रास्ता बताया है। आचार्य जी के जाने से महान क्षति इस देश की ही नहीं मानव जाति की हुई है, ऐसा मैं मानती हूँ। मगर ईश्वर की इच्छा के आगे सिर झुकाना पड़ता है। ईश्वर को किसी और जगह पर उनकी सेवा लेनी होगी, इसलिए हमारे बीच से उन्हे ले गया है। आचार्य जी के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धाजलि यही हो सकती है कि हम उनके बताये हुए मार्ग पर अपना जीवन चलाने का यथाशक्ति प्रयास करें। आचार्य को मेरे शत-शत प्रणाम !

—सुशीला नैयर, गांधीवादी

वे बहुत काम छोड़कर गए हैं

युवाचार्य महाश्रमण

महाप्राण गुरुदेव तुलसी के बारे में यह एक प्रसिद्ध उक्ति है कि वे स्वप्न बहुत लेते थे। नींद में तो बहुत सारे लोग स्वप्न लेते हैं पर गुरुदेव तो दिन में जागते हुए भी स्वप्न लेते थे। उनके उर्वर मस्तिष्क में नई-नई कार्य योजनाएं अंकुरित होती ही रहती थीं । एक काम पूरा होता ही नहीं कि अन्य कामों के बारे में सोचने लगते। अपने जीवन में उन्होंने बहुत काम किया। इतना कि कई व्यक्ति मिलकर भी उतना काम नहीं कर सकते । विश्व के महान वैज्ञानिक अलबर्ट आईंस्टाइन ने महात्मा गांधी को लक्ष्य कर इस आशय की बात कही कि सौ वर्षों पश्चात् लोग इस बात पर विश्वास नहीं करेंगे कि इस प्रकार का कोई हाड़-मांस का पुतला इस धरती पर हुआ था। मैं महात्मा गांधी के साथ पूज्य गुरुदेव की कोई तुलना नहीं करता, पर इतना अवश्य है कि महात्मा गांधी के लिए आईंस्टाइन की उपरोक्त बात कुछ भाषान्तर से पूज्य गुरुदेव पर भी लागू होती है। ऐसा लगता है कि आनेवाली पीढ़ियों के बहुत-सारे लोग मुश्किल से इस बात पर विश्वास कर पाएंगे कि कोई अकेला व्यक्ति अपने जीवन-काल में विकास के विभिन्न क्षेत्रों में इतना कार्य कर सकता है। उनके द्वारा किए गए कार्यों का पूरा लेखा-जोखा तैयार किया जाए तो एक विशाल ग्रन्थ तैयार हो सकता है। उनके कार्यकाल में तेरापंथ ने विकास की अनेक नई-नई दिशाओं में प्रस्थान किया। कहना चाहिए कि वे पुरुषार्थ की एक ऐसी मशाल थे, जो अपने जीवन में कभी बुझी नहीं, मंद नहीं पड़ी।

पर व्यक्ति कोई भी स्थायी नहीं होता। वह आता है और चला जाता है, जबकि विकास तो एक परंपरा है, निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। इस स्थिति में कोई भी व्यक्ति अपने द्वारा शुरू किए गए तथा अपनी परिकल्पना के सारे ही काम पूरे कर ले, यह असामान्य या असंभव-सी कल्पना है। व्यावहारिक बात यही है कि कोई समर्थ से समर्थ व्यक्ति भी विकास की परंपरा को एक सीमा तक ही आगे बढ़ा पाता है। इस प्रयत्न में उसके द्वारा शुरू किए तथा परिकल्पना के कुछ काम पूरे होते हैं, कुछ अधूरे रहते हैं और कुछ कल्पना तक ही रह जाते हैं। इस स्थिति में व्यक्ति की सफलता व असफलता की कसौटी यह नहीं कि वह अपने जीवन में कितना काम कर पाया है और कितना काम नहीं कर पाया है। उसकी कसौटी तो यही है कि विकास की परंपरा को आगे बढ़ाने में उसने अपने समय और शक्ति का कैसा उपयोग किया है। यदि व्यक्ति विकास की परंपरा को आगे बढ़ाने में अपने समय और शक्ति का सही-सही और पूरा-पूरा उपयोग कर लेता है तो वह अपने-आप में सफल ही है, असफल नहीं, भले वह अपने सोचे गए अनेक काम अधूरे छोड़ जाता है अथवा कर ही नहीं पाता। उसके चले जाने के पश्चात् उन कार्यों को करना पीछे के लोगों का दायित्व होता

है। विकास की परंपरा के निरन्तर आगे बढ़ने की यही प्रक्रिया है। पूज्य गुरुदेव ने विकास की विभिन्न दिशाओं में जो विपुल कार्य किए हैं वे प्रत्यक्ष है। उसकी सविस्तार चर्चा करना अभी मेरा कथ्य नहीं है, बल्कि जो कार्य वे पीछे छोड़ गए हैं, उससे आंशिक रूप से परिचित करवाना चाहता हूं।

तेरापंथ की स्थापना की द्विशताब्दी के ऐतिहासिक अवसर पर पूज्य गुरुदव के निर्देश एवं प्रेरणा से आचार्य भिक्षु का पद्यमय साहित्य भिक्षु रत्नाकर, खण्ड १ व २ के रूप में प्रकाश में आ चुका है। कुछ मर्यादा पत्र आदि भी प्रकाश में आए हैं। इनके अतिरिक्त शेष सभी पद्य-गद्यमय कृतियों को सुसंपादित कर प्रकाश में लाना अभी अवशेष है। वि॰ सं॰ २०६० में आ रही आचार्य भिक्षु के स्वर्गवास की द्विशताब्दी के पुण्य प्रसंग को दृष्टिगत रखते हुए उनकी कृतियां संपादित करने की एक अन्य कार्य योजना पिछले वर्षों पूज्य गुरुदेव के दिशा-निर्देश में प्रारंभ हुई थी। पर उसका काम अभी तक अपनी प्राथमिक प्रक्रिया में ही है।

श्रीमज्जयाचार्य हमारे धर्मसंघ के एक विशिष्ट साहित्य-मनीषी आचार्य हुए हैं। साहित्य की विभिन्न दिशाओं में उन्होंने लगभग तीन लाख गाथा परिमाण साहित्य का सर्जन किया है। वि॰ सं॰ २०३८ में उनके महाप्रयाण की शताब्दी के अवसर पर उनकी साहित्यिक कृतियों को सुसंपादित कर प्रस्तुत करने की एक कार्य-योजना पूज्य गुरुदेव के निर्देशन में बनी। उस योजना की क्रियान्विति के रूप में भिक्षुजसरसायन, झीणी चरचा, प्रश्नोत्तर तत्वबोध, आराधना, चौबीसी आदि उनकी अनेक कृतियां उस पुण्य प्रसंग पर प्रकाशित होकर लोगों के हाथों में पहुंची। भिक्खु दृष्टांत नामक ग्रन्थ वैसे पूर्व में प्रकाशित हो चुका था। इस योजना के अन्तर्गत उसे हिन्दी अनुवाद सहित सुसंपादित कर पुनः सामने लाया गया। तेरापंथ : मर्यादा और व्यवस्था के रूप में संघीय संविधान एवं मर्यादाओं-व्यवस्थाओं से सम्बन्धित महत्वपूर्ण सामग्री प्रकाशित हुई है। इसमें पूज्य श्री मज्जयाचार्य की अनेक महत्वपूर्ण कृतियों का समावेश है। जयाचार्य की सर्वाधिक महत्वपूर्ण कृति भगवती जोड़ आधुनिक सम्पादन के साथ सात खण्डों में प्रकाशित हो चुकी है। इस ग्रन्थ को सम्पादित करने में पूज्य गुरुदेव के अनगिनत बहुमूल्य क्षण लगे हैं।

जयाचार्य की अन्य महत्वपूर्ण एवं विशालकाय कृति उपदेशरत्न कथाकोश का सम्पादन का कार्य अपनी अधूरी प्रक्रिया में है। उसे पूरा कर हम उनके एक विशिष्ट ग्रन्थ से लोगों को परिचित करवा सकते हैं।

तेरापंथ की सैद्धान्तिक मान्यताओं को स्पष्ट करने वाला जयाचार्य का एक अति विशिष्ट ग्रन्थ "भ्रम विध्वंसन" यद्यपि पूर्व में प्रकाशित है, पर उसका आधुनिक सम्पादन अभी तक शेष है।

इतने सारे साहित्य के प्रकाश में आ जाने के पश्चात भी जयाचार्य की कुल ११४ कृतियों में से आधी से ज्यादा कृतियों का काम होना अभी तक अवशिष्ट है।

राजस्थानी वांङ्मय को तेरापंथ का अत्यंत उल्लेखनीय योगदान है, यह एक लक्ष्य है। जयाचार्य कृत "भगवती जोड़" राजस्थानी भाषा का संभवतः सबसे बड़ा ग्रन्थ है और जयाचार्य राजस्थानी

भाषा के साहित्यकार। स्वामी जी का अड़तालीस हजार पथ परिमाण साहित्य राजस्थानी वांङ्मय की अमूल्य निधि है। पूज्य गुरुदेव तुलसी तो राजस्थानी भाषा के सिद्धहस्त कवि थे। उनकी कृतियों ने राजस्थानी भाषा को गौरवान्वित किया है। अन्य अनेक सन्तों एवं श्रावकों की रचनाओं ने राजस्थानी वांङ्मय के भण्डार को समृद्ध बनाया है। कठिनाई यह है कि राजस्थानी भाषा एवं साहित्य के अधिकारी विद्वान बहुलांश इस संपदा और योगदान से अपरिचित हैं। इसका कारण भी बहुत स्पष्ट है। इस विशाल साहित्य का बहुत बड़ा भाग अभी भी अप्रकाश्य है। पूज्य गुरुदेव की यह भावना थी कि तेरापंथ के राजस्थानी वांङ्मय को सुसंपादित कर सामने लाया जाय। इस कार्य योजना पर कार्य भी शुरू हुआ पर इस क्षेत्र में अभी तक बहुत कुछ करणीय शेष हैं। जिस दिन इस कार्य योजना के अनुसार तेरापंथ का राजस्थानी वांङ्मय सामने आयेगा, उस दिन लोग आश्चर्य के साथ देखेंगे कि तेरापंथ समाज ने राजस्थानी भाषा एवं साहित्य की कितनी बड़ी सेवा की है।

आगम-साहित्य संपादन की दृष्टि से पूज्य गुरुदेव के वाचना प्रमुखत्व में उनकी विद्यमानता में बहुत ही उल्लेखनीय कार्य हुआ। पूज्यवर इस कार्य को अत्यधिक महत्व दिया करते थे। इस कार्य योजना को अभी पूरा किया जाना अभी शेष है।

पूज्य गुरुदेव ने पिछले वर्षों तेरापंथ-प्रबोध की रचना की। आचार्य भिक्षु एवं तेरापंथ को समग्रता से संक्षेप में समझने की दृष्टि से यह एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसी तर्ज पर जैन धर्म को समझने की दृष्टि से "जैन-प्रबोध" की रचना करने का एक चिन्तन गुरुदेव के मस्तिष्क में था। उसका कार्य सम्भवतः शुरू भी हो गया था, पर आगे नहीं बढ़ सका।

गुरुदेव ने अपनी कलम से अनेक आचार्य एवं साधु-साध्वियों के जीवन चरित्र लिखें। इसी क्रम में शासन स्तंभ कालू जी स्वामी का जीवन चरित्र लिखने की उनकी तीव्र भावना थी। इस दृष्टि से उन्होंने कालूजी स्वामी के जीवन से सम्बंधित सामग्री भी संग्रहित करवा ली थी, पर नियति योग से उनकी वह भावना साकार रूप नहीं ले सकी। देखना है इन दोनों ग्रन्थों का काम कैसे होता है।

पूज्य गुरुदेव की यह तीव्र भावना थी कि तेरापंथ धर्मसंघ के साधु-साध्वियों एवं समण-समणियों में अंग्रेजी भाषा में बोलने-लिखने का अभ्यास बढ़े। इस दृष्टि से अनेक स्तरों पर अनेक बार प्रयत्न भी हुआ। पर पूज्यवर की भावना के अनुरूप स्थिति का निर्माण होना अभी बाकी है।

अंग्रेजी भाषा की तरह ही प्राकृत भाषा के विकास की भी उनकी तीव्र आकांक्षा थी। स्वर्गारोहण पूर्व के अन्तिम दो वर्षों में तो उन्होंने इस कार्य पर अपना विशेष ही ध्यान केन्द्रित कर रखा था। इस दृष्टि से एक पूरी योजना भी वनी। अनेक साधु-साध्वियों एवं समण-समणियां पूज्यवर की प्रेरणा से इस योजना के अनुसार प्राकृत भाषा के अध्ययन में लगे। पर गुरुदेव की विद्यमानता में वह योजना बहुत आगे नहीं बढ़ सकी। करणीय कार्यों की सूची में यह एक विशेष महत्व का कार्य है।

वे जैन समन्वय के कार्य को बहुत महत्व देते थे। इसकी पूरी परिकल्पना और उसको साकार करने की पूरी प्रक्रिया उनके मस्तिष्क में थी। उन्होंने कई बार इस आशय की वात कही थी कि मुझे विश्वास है, यदि सभी जैन सम्प्रदाय मुझे मध्यस्थ मान लें तो मैं समन्वय का कार्य बहुत आसानी

से कर सकता हूं। समग्र जैन समाज की एक संवत्सरी हो- इस दृष्टि से उन्होंने वर्षों तक सलक्ष्य प्रयत्न किया। भले ही उनको अपने इस प्रयत्न में अपेक्षित सफलता नहीं मिली, तथापि इतना सुनिश्चित है कि उनके इस प्रयत्न के फलस्वरूप एक अनुकूल वातावरण बना है। जैन समाज के लिए सचमुच वह बहुत ही गौरव का दिन होगा जिस दिन पूज्य गुरुदेव की भावना के अनुरूप सब लोग मिल-जुल कर एक दिन संवत्सरी मनायेंगे।

जैन समन्वय के परिप्रेक्ष्य में ही गुरुदेव ने एक जैन मंच की परिकल्पना भी की थी। उनके प्रयत्न एवं प्रेरणा से इस कार्य का एक रूप कुछ वर्षों पूर्व सामने भी आया था, पर जैसी गुरुदेव की आकांक्षा थी, उसके अनुरूप इस क्षेत्र में कार्य होना अभी तक शेष है। देखना है पूज्य गुरुदेव की यह परिकल्पना कब साकार होती है।

संघीय परिप्रेक्ष्य में उपासकों के निर्माण की योजना उनके कार्यकाल में गति पकड़ चुकी थी। पर जितनी बड़ी संख्या में प्रशिक्षित उपासकों को वे देखना चाहते थे उस लक्ष्य तक पहुंचना अभी तक शेष है। इस दिशा में कार्य किया जाना अपेक्षित लगता है।

ज्ञानशाला की योजना को आगे बढ़ाने की दृष्टि से गुरुदेव का विशेष ध्यान केन्द्रित था। उनके चिन्तन में यह नींव को मजबूत करने का कार्य था। उनकी दृष्टि एवं प्रेरणा से उसका एक व्यवस्थित और सुन्दर रूप बना है, पर उसको व्यापक रूप मिलना अभी भी शेष है।

तेरापंथ के अधिकृत विद्वान एवं प्रवक्ता तैयार करने की दृष्टि से तेरापंथ प्रवेता की योजना गुरुदेव ने प्रस्तुत की थी। यद्यपि उस कार्य योजना का प्रारम्भ पूज्यवर की विद्यमानता में ही हो चुका था और बाद में उस परिप्रेक्ष्य में एक प्रशिक्षण शिविर भी लग चुका है, पर इस योजना को व्यवस्थित रूप से क्रियान्वित करना अभी लगभग अवशेष ही है।

पूज्य गुरुदेव द्वारा हमारे करने के लिए पीछे छोड़े गये कुछ कार्यों की संक्षिप्त-सी चर्चा मैंने इस आलेख में की। ऐसे ओर भी अनेक कार्य हैं, जिन्हें पूज्य गुरुदेव करना चाहते थे और अब हमें करना है। सौभाग्य से आचार्य महाप्रज्ञ का सक्षम नेतृत्व एवं कुशल मार्ग-दर्शन हमें प्राप्त है। उनके इस नेतृत्व एवं मार्गदर्शन में हम विकास की परम्परा को बहुत अच्छे ढंग से आगे बढ़ा सकते हैं। पूज्य गुरुदेव की प्रथम वार्षिकी का पुण्य प्रसंग सन्निकट है। इस अवसर पर संघ का हर छोटा-बड़ा सदस्य यह पवित्र संकल्प करे कि वह पूज्य गुरुदेव की भावना/कल्पना/स्वप्न को साकार करने में यथासम्भव पूरी शक्ति का नियोजन करेगा। यह कोई महत्वपूर्ण बात नहीं है कि कौन क्या काम कर सकता है? कितना कर सकता है? महत्वपूर्ण बात यह है कि कोई भी अपनी शक्ति का संगोपन न करे। मैं समझता हूं, पूज्य गुरुदेव के प्रति हमारी यह प्रेरक श्रद्धांजलि होगी।

आचार्य श्री तुलसी ने कहा था :-

- सीधे पथ पर चलने की मेरी आदत नहीं, कठिन काम करने में मुझे आनन्द आता है।
- अशान्त वातावरण में भी अपने आपको शान्त रखना स्थितप्रज्ञता का लक्षण है।

अध्यक्ष की कलम से

विनम्र भावांजलि!

सुखराज सेठिया

मुझसे किसे पत्रकार ने प्रश्न किया कि - आचार्य तुलसी की याद आपको किस रूप में आती है? क्या वे पहले की तुलना में अधिक याद आते हैं?

इस प्रश्न का उत्तर बहुत साफ है। आचार्य तुलसी की याद पहले की तुलना में अधिक आती है। उनको याद करने के अनेक कारण हैं, अनेक दृष्टिकोण हैं। उनकी यादें दिनोंदिन सघन होती जा रही हैं। अभी हमने एक वर्ष व्यतीत किया है, इस एक वर्ष की कालावधि ने स्पष्ट कर दिया है कि- आचार्य तुलसी भूलने की चीज नहीं हैं। जब-जब हम अकेले होते हैं, थक जाते हैं, निराशा हमें घेर लेती है, तब-तब आचार्य तुलसी की याद ज्यादा आती है।

अमृता प्रीतम ने एक जगह लिखा है- "यह याद क्या चीज होती है, जो समय को हाथ से पकड़कर ठहरा देती है।" आचार्य तुलसी की यादों के साथ होकर हमारा समय ठहरा हुआ ही होता है। लेकिन इस ठहरे हुए समय में ही हमें मानवता के लिए मुस्कानें चुननी है, जैसे पुष्पों के लिये सूर्य का प्रकाश। यह ठहरा हुआ समय एक सबब है, एक प्रेरणा है, एवं एक जीवतंता है- घटनाबहुल जीवन की। एक जीवन में कितने जीवन का समाये हुए रहा उनका जीवन। वह जीवन साधारण नहीं था। उस जीवन का हर पृष्ठ आश्चर्यों की वर्णमाला से गुंथित महालेख था।

दरअसल ऐसे महापुरुषों का जीवन ही सबसे बड़ा स्मारक होता है, आकाश को देखो, मानवहृदय को देखो। जब तक ग्रह हैं और भावनाएं हैं, जब तक नक्षत्र और भाव नष्ट नहीं हो जाते- उनका नाम मिट नहीं सकता। केवल ऐसे ही लोग स्मारक के अधिकारी हैं, जिनको उसकी आवश्यकंता नहीं है,क्योंकि उन्होंने स्वयं ही लोगों के मनों एवं स्मृतियों में एक स्मारक बना लिया है।

एक दिन चांद की दिव्य आभाओं में नयी संभावना के प्रतिबिम्ब थे। बिम्बों को जिन्होंने देखा वे आश्चर्य के अथाह सागर में डुबकियां लेने लगे। प्रसन्नता और विस्मय के उन क्षणों में उन्होंने देखा और उन्होंने पीड़ित मानवता और शोषित जन-जीवन को त्राण देने का आश्वासन दिया। लोकव्यापी संत्रास, तनाव और अविश्वास में घुटती हुई विश्व-चेतना को कुण्ठामुक्त रहने का प्रशिक्षण दिया। उखड़ते हुए नैतिक मूल्यों को पुनः प्रतिष्ठित करने का कार्य किया। सामाजिक

और आर्थिक विषमताओं से टूटती हुई सौम्यता को बचाने के लिये उसने एक सामाजिक अनुभूति दी और अपनी परम पारदर्शी दृष्टि से लोक-जीवन को धन्यता से अनुप्राणित किया।

उस चांद की चांदनी दिन-ब-दिन घनीभूत हो रही है। वह झिलमिलाती चांदनी शक्तिपुंज होकर, ज्योतिर्मय होकर - कहीं सूरज उगा रही है, कहीं चांद उगा रही है और कहीं फूल खिला रही है। वहां से स्फुरित लयबद्ध सुरीले संगीत की तरंगें मन की सुनसान गलियों को मुस्कानों से आच्छादित कर रही है। उस महान एवं अलौकिक चिरन्तन सत्य को विनम्र नमन।

''युवादृष्टि'' मासिक उस महान युगपुरुष की रश्मियों को अपने पृष्ठों के समेटने का विनम्र प्रयास लेकर "आचार्य की तुलसी स्मृति विशेषांक" के रूप में आपके हाथों में प्रस्तुत है। यह विशेषांक आप सबकी भावनाओं एवं श्रद्धा से सिंचित एक विनम्र श्रद्धांजलि है। हमने उस त्रिकालाबाधित धरती के सुधारक को नये-नये सन्दर्भो एवं रूपों में प्रस्तुति दी है। उस महाप्राण की प्रथम पुण्यतिथि के अवसर पर हमारा विनम्र प्रणाम।

इस विशेषांक को इस रूप में प्रस्तुत करने में अखिल भारतीय तेरापंथ युवक परिषद के पदाधिकारियों एवं कार्यकारिणी के सदस्यों का उल्लेखनीय सहयोग रहा है। विज्ञापनदाताओं एवं लेखकों के प्रति हमारा आभार, जिनके सहयोग से विशेषांक इस रूप में अनेक दिक्कतों के बावजूद इस रूप में प्रस्तुत हुआ है। सभी सहयोगियों के प्रति आभार।

श्रद्धांजलि

शरद चन्द्रमा है यूं फिर भी, बोलो-बोलो चन्द्रचकोर, यह चितवन चिन्तित क्यों है आज
मेघ बरसे फिर भी झूमे नां, बोलो बोलो मन के मोर, यह छतरी संकुचित क्यों है आज
ज्यों ज्यों गम को आज घटायें त्यों गुणन हो जाय, गमों का हो रहा क्या अनुवांद,
ऐसी कोई विधि बतायें भूल सके कोई, किसी की आने वाली याद
स्वयं की सोरभ स्वयं न जाने, स्वयं रहे अनजान, यही है फूलों अवदान,
खुद की कीमद खुद न जाने, युग-पुरुष की तो जमाना कर लेता पहचान
"भिक्षु भारी राय जया ओर मघवा माणक डाल", ध्वजा जहां ''कालू'' फहराई,
उस ध्वजा में ''नई मोड़'' की ''धर्मक्रान्ति'' नवरंग चढ़ाकर दी थी ऊंचाई
सत्ता नहीं सन्तता चाही, स्वयं त्याग निज पाट, सजाई केशरिया क्यारी,
खुश रहे जब पास ही थे, दार्शनिक आचार्य ''महाप्रज्ञ'' उत्तराधिकारी
युग प्रवर्तक, युग दिग्दर्शक, गणीधिपति गुरुदेव, अमर हो गये जय जय ''तुलसी''
तन से नहीं हो, किन्तु यहीं हो, रहेगी हरदम ये तुम्हारी मूरत चित्त में बसी

-छत्रसिंह बच्छावत (चाड़वास)

'श्वास का अर्घ्य श्री तुलसी को'

❑ मुनि मोहजीत कुमार ❑

भारत देश ऋषि-मुनियों का देश है। यहां शहरी सभ्यता का नहीं गांवों की संस्कृति का प्रभाव है। यहां विमानों और हेलीकॉप्टरों में घूमने वालों को नहीं, अपने पांवों की मिट्टी से धरती मापने वाले संत-जनों को पूज्य भाव से देखा जाता है। संत किसी नाम, जाति, देश या धर्म से अनुबन्धित नहीं होते। वे अनाम आते हैं पर जाते समय नाम छोड़ जाते हैं। वे मरणासन्न मानव को अध्यात्म और नैतिकता का नवअमृत पिलाकर जीवंत बना देते हैं।

ऐसे संतों की कड़ी में अणुव्रत अनुशास्ता गणाधिपति श्री तुलसी का नाम प्रथम पंक्ति में आता है। अणुव्रत अनुशास्ता एक धर्म संघ के नेता थे। सात सौ से अधिक साधु-साध्वियों और कई लाख श्रावकों का नेतृत्व उनके यशस्वी हाथों में था। गणाधिपति श्री तुलसी का व्यक्तित्व ही उनके नेतृत्व की सफलता का साक्षी है। पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर कोई भी व्यक्ति उनको निकटता से देखता तो प्रतीत होता कि मानो वे अपनी आभा से पूरी दुनियां को दीपित करने पर लगे हुए हैं।

गुरुदेव श्री तुलसी का सम्यक् चिंतन और प्रखर तेज उनके परिसर में रहने वालों पर जो अमिट प्रभाव पड़ता वह अद्वितीय होता था। आपके चिंतन की विशालता, हृदय की उदारता, व्यवहार की मधुरता, संघर्षों में अप्रतिम सहिष्णुता और निर्भीकता ऊर्ध्वमुखी व्यक्तित्व की एक लघु झलक है। आप विशाल धर्मसंघ के नेता होते हुए भी मानवता के त्राता थे।

आपका जन्म २० अक्टूबर १९१४ लाडनूं (राजस्थान) की पुण्य स्थली पर आदित्य की रश्मियों के साथ निर्मल आभा लिए हुआ। जन्म के साथ ही अध्यात्म के संस्कारों का पुट तथा बाल्यावस्था में उन संस्कारों का संपोषण और संरक्षण के परिणामस्वरूप आपके चरण अध्यात्म की धरा पर बढ़ने हेतु समुत्सुक हो उठे थे। जीवन की प्रथम पूर्णाहुति के साथ ही आपने अध्यात्म की मंजिल पर चरण न्यास कर दिया।

पूज्यपाद श्रीमद् कालूगणि के श्री चरणों में समर्पित हो, आपने अध्यात्म को जीवनगत करने हेतु अपने-आपको गहन अध्ययन, चिंतन के लिए सुनियोजित किया। गुरु का अप्रतिम वात्सल्य आपके जीवन को समग्र रूप से सजाने-संवारने में कार्यरत था। जीवन के सर्वांगीण विकास का उपक्रम निर्बाध चल रहा था। परिणामतः आगमिक अध्ययन के साथ-साथ काव्य, दर्शन, न्याय आदि अनेक विधाओं में गहनता प्राप्त कर अपने आप में प्रतिष्ठित वन गए।

आपके व्यक्तित्व को शब्दों में बांधना सूर्य को दीपक दिखाना है। आप अपने परिचय में सर्वप्रथम अपने आपको मानव की पंक्ति में अवस्थित करते थे। आप जातिवाद, सम्प्रदायवाद से दूर रह कर मानवीय मूल्यों को प्रस्थापित करने का प्रयास अथ से इति तक करते रहे। आपके

वहुआयामी व्यक्तित्व को किसी एकमुखी प्रवाह में बांधना अति दुष्कर कार्य है। धारणाओं के संकीर्ण घेरे में वंधे, चूहे-विल्ली की व्याख्याओं से अनुवन्धित तेरापंथ को जैनधर्म का पर्याय वनाने का दुरूह कार्य आचार्य तुलसी की सम-सामयिक सूझ-बूझ, पुरुपार्थ और प्रस्तुति का ही परिणाम है।

आपने कृतित्व का इतिहास अनूठा और अपूर्व है। आपकी कर्मठता, नेतृत्व-क्षमता, विद्वता, वक्तृता, सृजनशीलता आदि ने महामानव के प्रतीक पुरुष के रूप में अवस्थित किया।

भारत विदेशी दासता की काल कोठरी में छटपटा रहा था आत्म बलिदानी नेताओं और देशभक्तों के अहिंसात्मक प्रतिरोध के सम्मुख विदेशी दासता के पांव उखड़ गए। भारतीय प्रबुद्ध राजनयिकों ने प्रशासन की बागडोर संभाली। उन्होंने भारत उत्थान की रूपरेखा में भौतिक विकास को अत्यधिक महत्व दिया। उन्होंनें नैतिक और चारित्रिक मूल्यों की प्रतिष्ठापना करने की दृष्टि से कोई कदम नहीं उठाया। इसका परिणाम यह रहा कि भारतीय जनता आज भी मानसिक दासता से मुक्त नहीं हो सकी। उस समय आचार्यश्री ने कहा - मानसिक दासता से मुक्ति ही सही अर्थों में स्वतन्त्रता है। इसी लक्ष्य के आधार पर आपने अणुव्रत आन्दोलन का सूत्रपात मानवीय आचार संहिता के धरातल पर किया। अणुव्रत के मंच से आजाद भारत के नागरिकों को आह्वान किया कि - "हे भारतवासियों! नैतिक आदर्शों के प्रति सजग रहें। जन-जन में मानवीय मूल्यों का प्रादुर्भाव हो। समन्वयवादी दृष्टिकोण का विकास हो। जीवन व्यवहार में चारित्रिक मूल्यों की प्रस्थापना हो। महत्वाकांक्षा और अस्पृश्यता के मनोभाव न प्रकटे"। अणुव्रत की इस संजीवनी घोषणा/आह्वान ने जनमानस के विचारों को उद्वेलित किया। आज इस आन्दोलन का स्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय बन गया।

इस आह्वान की गूंज को जन-जन तक पंहुचाने के लिए गांव-गांव, नगर-नगर, ढाणी-ढाणी, व्यक्ति-व्यक्ति तक सीधा सम्पर्क स्थापित किया। उनकी दृष्टि में पहले मानवता थी, चारित्रिक मूल्य थे, फिर जाति, सम्प्रदाय, उपासना आदि उन्होंने कहा- किसी भी मनुष्य को जाति के आधार पर नीच या अस्पर्श्य मानना मानवीय मूल्यों की हत्या है, हिंसा है, पाप है।

आचार्य तुलसी जहां एक ओर आध्यात्मिक समस्याओं के समाधायक थे वहां दूसरी ओर जनतान्त्रिक, राजनैतिक, सामाजिक, पारिवारिक आदि समसामयिक समस्याओं के भी महान समाधायक के रूप में प्रतिष्ठित थे। २०वीं सदी का इतिहास जब भी लिखा जायेगा आपका स्थान अद्वितीय रहेगा। आपका अदम्य उत्साह भावी उपलब्धि का भरा भण्डार था। आप अनेक रूपों में रहते हुए भी अपने आप में भिन्न थे। आपका जीवन उपलब्धियों का महा समन्दर था। आप द्वारा किया गया हर कार्य और देखा गया हर स्वप्न अपने आप में परम उपलब्धि थी। आपने अपने जीवन को विभिन्न आकारों ओर प्रकारों में जीने का प्रयास-अन्त तक किया। ऐसे ऊर्ध्वमुखी मानवीय चेतना के धनी की यादें ही बस अवशेष वची हैं। उन अवशेष यादों को श्वास का अर्घ्य समर्पित।

विदेशों में आचार्य तुलसी

समणी नियोजिका मुदितप्रज्ञा

भारत की पुण्य वसुन्धरा पर भ्रमण करते हुए हवाई युनिवर्सिटी के प्रोफेसर ग्लेन डी पेज की राष्ट्र के महान् सन्त आचार्य तुलसी से भेंट हुई। पहली भेंट में ही आचार्य तुलसी के बाह्य एवं आन्तरिक व्यक्तित्व ने उस विदेशी भाई को चुम्बक की तरह खींच लिया। पवित्र आभामण्डल से मण्डित उनका व्यक्तित्व उस विदेशी सज्जन के हृदय के और दिमाग में प्रतिष्ठित हो गया। अपने देश लौटते समय डॉ॰ पेज ने उस महामानव से आत्मनिवेदन करते हुए कहा-आप विदेश चलिए। गुरुदेव ने उसके मन की भावना को पढ़ा और साधु जीवन की मर्यादा को बताते हुए कहा -'हम वायुयान में नहीं बैठते हैं।' डॉ॰ पेज ने समाधान के स्वर में बोला - 'अच्छा। ठीक है, आप बैठें नहीं, पर खड़े-खड़े चल सकते हैं।'

गणधिपति गुरुदेव सदेह अवस्था में भारत से बाहर नहीं भी गये, फिर भी सैकड़ों लोग उनके बाह्य एवं आन्तरिक व्यक्तित्व से परिचित एवं प्रभावित हैं।

व्यक्ति सीमित होता है। किन्तु विचार सीमित भी होते है और व्यापक भी। सीमित दायरे में बंधे हुए विचार व्यक्ति को सीमित बना देते हैं और विचारों की व्यापकता व्यक्ति को व्यापक बना देती है।

गणधिपति गुरुदेव का व्यक्तित्व विश्वव्यापी था। उनके व्यक्तित्व की व्यापकता का मूल घटक तत्त्व था उनका व्यापक दृष्टिकोण।

अध्यात्म, अनुशासन, कला आदि तो उन्हें प्रिय थे ही उससे भी अधिक प्रिय था अनेकान्त। अनेकान्तप्रिय व्यक्ति की चिन्तन शैली, विचारशैली एवं कल्पनाशैली एकान्तप्रिय व्यक्ति की चिन्तन, विचार एवं कल्पनाशैली से पूर्ण भिन्न होती है। गणाधिपति गुरुदेव ने भगवान् महावीर द्वारा उपदिष्ट जैनधर्म के महत्वपूर्ण सिद्धान्त अनेकान्त का न केवल उपदेश ही दिया बल्कि उसे आत्मसात् किया। उसे अपने जीवन का दर्शन बनाया।

अनेकान्त उनके जीवन में गंगोत्री की तरह प्रतिष्ठित था। उस गंगोत्री से उद्भूत निर्मल आचार, पवित्र विचार एवं मधुर व्यवहार की स्त्रोंतस्विनी बहती बहती सात समन्दर पार पहुंच गई। समण श्रेणी के माध्यम से गुरुदेव तुलसी एवं आचार्य महाप्रज्ञ के विचार व साहित्य विश्व के विभिन्न राष्ट्रो में पहुंचे हैं। अमेरिका, यूरोप, एशिया, आस्ट्रेलिया जैसे महाद्वीपों में उनके विचारों ने एक नया प्रकाश दिया है जो अन्धकार में भटकती हुई मानव जाति के लिए सशक्त आलम्बन हैं।

अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान, जीवन विज्ञान, जैन जीवन शैली, जैन विश्व भारती, समण श्रेणी - ये

उनके व्यापक दृष्टिकोण की ही निष्पत्तियां हैं जिनसे धार्मिकों, वैज्ञानिकों, शिक्षकों, एवं अन्य विद्वानों में एक हलचल पैदा हुई है। आध्यात्मिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं शैक्षणिक क्रान्ति के धागे से अनुस्यूत उनके युगानुकूल विचारों ने न केवल भारतीय जनमानस को वल्कि विश्व मानस को प्रभावित किया है। केलिफोर्नियों की राजधानी सेक्रोमेन्टो, जहां लगभग दो सालों से समण-समणीजी जा रहे हैं। जैन-जैनेतर, भारतीय, भारतीयेतर लोगों में भगवान् महावीर, गुरुदेव तुलसी एवं आचार्य महाप्रज्ञ के मिशन की चर्चा करते हैं। वहीं उनका सम्पर्क अमेरिका प्रवासी आमा नाम की एक जिज्ञासु अफ्रीकन महिला से हुआ। वह वोद्ध धर्म से प्रभावित थी। जैन धर्म को जानने के लिए तीव्र उत्कण्ठा रखती थी। इन्टरनेट के माध्यम से जैन सोसायटी सेक्रोमेन्टो के डायरेक्टर भाई नरेश जैन से परिचय प्राप्त कर उनका वहुत सूक्ष्मता से अध्ययन किय। समाणीजी ने गुरुदेव की प्रसद्धि उसने समणीजी से सम्पर्क किया। समणीजी से जैनत्त्व का परिचय पाया तथा जैन धर्म से सम्वन्धित अनेक अग्रेंजी पुस्तकों को प्राप्त कर रचना भगवान् महावीर का अग्रेजी अनुवाद Lord Mahavira पुस्तक उसे पढ़ने को दी। पुस्तक पढ़कर अपनी प्रतिक्रिया प्रस्तुत करते हुए उसने कहा - इस पुस्तक ने मेरे मन को इतना प्रभावित किया है, जितना आज तक किसी ने नहीं किया। इस पुस्तक ने मेरी जीवनधारा को वदल दिया। वौद्ध धर्म में दीक्षित होने को समुत्सुक उस वहन ने अपना विचार स्थगित कर दिया। उसने अपने अनेकों मित्रों को इस पुस्तक की अवगति देकर पढ़ने की प्रेरणा दी।

सचमुच गणाधिपति गुरुदेव के विचारों में प्रेरणा, स्फुरणा और शक्ति संचार करने की ताकत है। निराशा से आशा, अन्धकार से प्रकाश और कुमार्ग ले सम्मार्ग पर से चलने की क्षमता है। क्षमता ही नहीं अनेकों को जीवन दान दिया है। यही वजह है कि आज भी उनको देखने के लिए आंखें तरस रही है। सुनने के लिए कान लालायित हो रहे हैं। गुणों की गौरवगाथा गाते-गाते मुंह थकता नहीं है। उनका उज्ज्वल यश और कीर्ति चहुंदिशि में व्याप्त हो चुकी है।

सूरत से कीरत बड़ी, बिन पांखे उठ जाय।
सूरत तो दीसै नहीं, कीरत ही रह जाय।

कवि की ये पक्तियां इस सच्चाई को प्रकट कर रही है कि सूरत से कीर्ति बड़ी होती है जो व्यक्ति को अमर बना देती है। देश और काल की सीमाओं से मुक्त कर देती है।

गणाधिपति गुरुदेव की यशोगाथा दिगृदिगन्त में व्याप्त होकर उनकी प्रथम पुण्य तिथि पर उनको श्रद्धांजलि समर्पित कर रही है।

आभार :- युवादृष्टि के आचार्य श्री तुलसी स्मृति विशेषाक के लिए विज्ञापनदाताओं, लेखकों एवं अन्य लोगों ने जो सहयोग प्रदान किया उसके लिए हम अत्यन्त आभारी है। स्थानाभाव के कारण अनेक लेखकों की रचनाएं हम इस विशेषांक में सम्मिलित नहीं कर पाये है, इसका हमें खेद है। पुनः सभी सहयोगियों के प्रति आभार विशेषांक आपको कैसा लगा अपनी प्रतिक्रिया हमें अवश्य लिखें। -पन्नालाल पुगलिया, महामंत्री



पूर्व गृहमंत्री शंकरराव चव्हान से चर्चा करते हुए आचार्य श्री तुलसी





आचार्य श्री तुलसी
इतिहास के अमर नायक

मुनि सुमेरमल (लाडनूं)

जीवन पानी की लकीर है, प्रतिक्षण आगे बढ़ता है, पीछे से सब कुछ सिमटता जाता है। पानी की लकीर का क्या अस्तित्व ? उभरी और विलीन हुई। अनेक लोगों के जीवन का भी यही हाल है, बहुत सारे तो जीवित अवस्था में भी गुमनाम रहते हैं। मरने के बाद तो समय लगभग लोगों की यादों को समाप्त कर देता है, अपने में लील लेता है। कुछ ही कालजयी व्यक्तित्व उभरते हैं जो समय के साथ अपने को बनाए रखते हैं। भले वे स्थूल शरीर छोड़ दें, अपने सतोगुणी पुरुषार्थ को वज्रमय बना देते हैं। वे इतिहास के अमर नायक कहलाते हैं। उनकी यादों पर देश, काल की आंधी से उड़ने वाली मिट्टी नहीं गिरती। समय के साथ उनके पुरुषार्थ की याद और तीव्र हो जाती है।

अणुव्रत अनुशास्ता श्री तुलसी उन कालजयी व्यक्तियों में से एक थे। वे अदृश्य होकर भी दृश्य हैं, स्थूल जगत् से विदा होकर भी सबके भीतर समाये हुए हैं और कृत कार्यों के माध्यम से आज भी अपनी उपस्थिति, सन्निधि दर्ज करवा रहे हैं। इस कालजयी व्यक्तित्व की शुरूआत एक साधारण बालक के जन्म के रूप में बिना किसी हलचल के हुई थी। राजस्थान नागौर जिले के लाडनूं कस्बे में बयासी वर्ष पूर्व २० अक्टूबर, १८१४ को आपका जन्म हुआ था। ऋजुमना माँ वंदना ने पुत्र प्राप्ति को सहज भाव से लिया। आपसे पहले चार पुत्र वदना जी के थे। उन्हें क्या पता था यह संतान अन्य संतानों से भिन्न है, इसका पुरुषार्थ इतिहास का दस्तावेज बनेगा, भारत के लाखों-लाखों व्यक्ति इसके कदमों का अनुगमन करेंगे। ये राष्ट्र के चरित्र निर्माताओं में शीर्षस्थ माने जाएँगे।

सूर्य को उदय होना होता है तो भोर अपने आप हो जाती है। किसी का अभ्युदय होना हो तो परिस्थितियाँ अनुकूल बन जाती हैं। यही बालक तुलसी के साथ हुआ था। पूज्य कालुगणि के पास दीक्षित हुए उनका सान्निध्य पारस का काम कर गया। जीवन की छुपी शक्तियाँ महापुरुष के स्पर्श से उभरकर सामने आ गईं। सत्तर-सत्तर साधु बड़े होने पर भी पूज्य कालूगणी की दृष्टि में आप सर्वोपरि हुए। आपकी क्षमताओं पर विश्वास करके उन्होंने आपको तेरापंथ जैसे विशाल धर्मसंघ का आचार्य बना दिया।

वर्चस्वी आचार्य

योग्यता और अवस्था का तालमेल कम रहता है, बड़ी उम्र होने पर भी कइयो में प्रशासनिक क्षमता नही होती, आपकी अवस्था छोटी होते हुए भी सोच मे प्रौढ़ता थी, परिपक्वता थी। सही व तत्काल निर्णय लेने की गजब की क्षमता थी। एक वार निर्णय लेने के वाद उस पर अटल रहने की अद्‌भुत साहसिकता थी। महापुरुष की यह पहचान होती है, शीघ्र निर्णय, सही निर्णय, फिर उस पर अटलता। परिस्थितियाँ आती है, जाती है, महापुरुष अपने निर्णय पर अटल रहते है। प्रारंभ किये कार्य को कभी बीच मे नहीं छोड़ते, बाधाओं को चीरने की क्षमता महापुरुष की पहली पहचान है। पूज्य गुरुदेव इन क्षमताओ के समवाय थे। जो निर्णय वड़े-वड़े नही कर पाते उस पर तत्काल निर्णय लेकर क्रियान्विति शुरू कर देते।

मानवता के मसीहा

आचार्य होना अलग बात है, उदात्त व उदार होना अलग बात है। अधिकतर महंत, मठाधीश, धर्माचार्य सामान्य व्यक्ति से भी अधिक संकीर्ण, अपने घेरे मे प्रतिबद्ध देखे गए, पढ़े गए। उनकी ऊर्जा, क्षमता अपनी घेरेबंदी को मजवूत करने में ही लगती है, इतना कर पाने मे ही वे अपने को सफल समझते हैं। इतिहास कट्टरता के इतिवृतो से भरा पड़ा है। आचार्य तुलसी इसके अपवाद साबित हुए। उन्होने एक सम्प्रदाय के आचार्य होते हुए भी जन-जीवन को ऊँचा उठाने मे अपनी क्षमता का नियोजन किया। अपने शिष्य समुदाय को संप्रदायातीत कार्यक्रम मे जोडा। बुजुर्ग लोगों की धारणा थी—आचार्य तुलसी गलती कर रहे हैं, अपने शिष्यो को इतने खुले कर रहे है, इसका परिणाम आएगा तब पता लगेगा। किन्तु जब परिणाम अनुकूल आया, आचार्य तुलसी के शिष्य वर्ग ने प्रबुद्धता के साथ अपने गुरु के प्रति समर्पण का परिचय दिया तो सब दंग रह गए। उन्होने दलित एवं व्यसनों मे पतित मानव जाति को ऊँचा उठाने का बीड़ा-सा उठा लिया था। अणुव्रत आंदोलन के नाम से एक अभियान चलाया, संप्रदाय मुक्त मानवतापरक उस अभियान में बिना भेदभाव के लोग जुड़ने लगे।

पूज्य गुरुदेव के चुंवकीय व्यक्तित्व ने जैन-अजैन सभी को आत्मीयता की डोर से बाँध लिया। तभी पूज्य गुरुदेव की परिषद में सतरंगी सभा जुड़ती थी। अलग-अलग धर्म संप्रदायों में आस्था रखने वाले, अलग-अलग क्रियाकांड करने वाले उनकी परिषद मे मिलते, उनके मानवतापरक कार्यक्रम मे जुड़कर गाँव-गाँव मे अलख जगाते। आज भी अणुव्रत कार्यकर्त्ताओं में तेरापंथी से ज्यादा इतर तेरापंथी, नॉन जैन ज्यादा हैं। वे जिम्मेवारी से अणुव्रत का काम कर रहे हैं। वास्तव मे आचार्य तुलसी के सामने मानव प्रथम था, मानवता मूल भित्ति थी।

वे कहा करते थे मैं पहले मानव हूँ, फिर धार्मिक जैन, तेरापंथी और आचार्य हूँ। इतिहास उन्हें मानवता के मसीहा के रूप में याद करेगा।

वाचना प्रमुख

असांप्रदायिक कार्य करते हुए भी वे अपने सिद्धांतों पर अटल आस्थावान थे। अनेक बार वे फरमाया करते थे— सभी धर्मग्रंथों में अपने-अपने स्तर पर अध्यात्म की, सत्य की, अहिंसा की व्याख्या मिलती है। सबका परायण करने पर मुझे ऐसा लग रहा है— अध्यात्म की सर्वांगीण व्याख्या जैन आगमों में हुई है। उन्होंने आगमों के हिंदी अनुवाद व शोध, टीप्पण, कोश आदि का कार्य हाथ में लिया। अपने अंतेवासी प्रबुद्ध शिष्य मुनि श्री नथमल जी (अब आचार्य महाप्रज्ञ) को इस कार्य में विशेष रूप से नियोजित किया। स्वयं समय निकालकर प्रतिदिन इस कार्य को आगे बढ़ाते। बयालीस वर्षों से अनवरत आगम संपादन कार्य चल रहा है, इस महान अनुष्ठान में अनेकानेक साधु-साध्वियों, समण-समणियों, श्रावकों का श्रम लगा है, लग रहा है। इनके वाचना प्रमुखत्व में पाठ संशोधन का समग्र काम हो चुका, दसवैकालिक, उत्तराध्ययन, आयारो, सूयगड़ो, ठाणं, समवाओ, का अनुवाद टीप्पण आदि का काम हो चुका है, भगवती का काम भी सम्पन्नता पर है। जिस विद्वान ने पढ़ा उसने सराहा। आज जैन समाज में आगमों की माँग जैन-विश्व भारती से प्रकाशित आगमों की है। अर्थ में टिप्पण में कहीं पर संप्रदायवाद की बू नहीं, तटस्थ, मध्यस्थ भाव से जो संगत लगता है, उसी का प्रतिपादन किया गया। आचार्यवर बहुत बार कहा करते थे— 'सत्यं संप्रदाय से ऊपर है। सत्य को प्रकट करना ही श्रुत की बड़ी सेवा है।

प्रबुद्ध शिष्य समुदाय

गणाधिपति तुलसी के शिष्यों की संख्या ७७५ के करीब है, प्रबुद्धता व विनम्रता में बेजोड़ है। समर्पण भाव तेरापंथ का अद्भुत है। इतिहास को पढ़े तो बड़े-से-बड़े आचार्य की ऐसी प्रबुद्ध, समर्पित शिष्य संपदा नहीं थी। आचार्य विनोबा भावे ने एक प्रसंग में कहा था— आचार्य तुलसी के पास जीवनदानी संयमी, समर्पित कार्यकर्त्ताओं की जो फौज है, मेरे पास उसका अभाव है, यही कारण है मेरे कार्यक्रमों में शिथिलता आ रही है, उनके कार्यक्रम व्यवस्थित चल रहे हैं।

सचमुच पूज्य गुरुदेव ने अपनी विरल विशेषताओं से, दुर्लभ क्षमता व कर्मठता से जिस इतिहास का सृजन किया है उससे वे इतिहास के अमर नायक बन गए हैं।

आचार्य तुलसी ने कहा

- किसी पर हुकूमत करना अन्याय है, शोषण है।
- मैं भविष्य की अपेक्षा वर्तमान में अधिक विश्वास करता हूं।

तरस रहे नयन हमारे

□ साध्वी कल्पमाला □

ओ महाप्राण तुलसी ! तुमने दिये जग को अनगिन अवदान !
युगों-युगों तक पावन धरा पर गूंजेगा पल-पल तेरा यशगान ।।
गंगाणे की पुण्यधरा पर प्रभु ने किया महाप्रयाण ।।
जिस दिन प्रभुवर स्वर्ग पधारे
स्वप्न अधूरे रहे हमारे !
रह न पायी साथ तुम्हारे,
ओ वंदना के लाल दुलारे।।
मौन हो गये उस दिन सारे अरमान।।१।।
अन्तर शक्ति का सबको अहसास दिया,
टूटे दिलों को तुमने विश्वास दिया !
बिखरे सब कणों को आभास दिया,
सम्यक् जीवन जीने का आश्वास दिया।।
तुम्हीं मेरे राम तीर्थंकर देव समान ।।२।।
तरस रहे हैं नयन हमारे, तुलसी को हम कहां पुकारें।
चन्दा में प्रभु छवि निहारें, कैसे मन समझाये नयन सितारें।।
देव धरा के बन गये महान।।३।।
श्रद्धा से तेरी स्तवना कर पायें।
आदर्शों पर हम चरण बढ़ायें।
घर घर में अणुव्रत ज्योत जलायें,
संकल्प दिवस को सार्थक कर पाये।।
भूल न पाये तुम्हें जब तक प्राण ।।४।।
शान्ति प्रतिष्ठान बना मनहारी, खिल रही वहां पर केसर क्यारी।
गंगाणे की छटा निराली, श्रद्धा से शीश झुकाते नर नारी ।।
शीघ्र पधारो ओ मेरे भगवान ।।५।।

संत श्री तुलसी

आधुनिक भारत के सुकरात

❑ मुनि रमेश कुमार ❑

भारत की गौरवशाली संत परंपरा के संवाहक संत श्री तुलसी ने मानवता के मसीहा के रूप में पहचान बनाई । आपका विराट व्यक्तित्व स्फटिक के समान पारदर्शी, पवित्र एवं स्वच्छ था, जिसे शब्दों में अभिव्यक्ति देना मेरे जैसे के लिए असंभव है । मेरे हृदय के आराध्यदेव ने अपने व्यक्तित्व, कर्तृत्व, नेतृत्व को इतना विशद् बनाया था कि जिसमें से प्रस्फुटित होने वाली प्रत्येक किरण से हर व्यक्ति को आलोक मिल रहा है । आपका अंतरंग व्यक्तित्व एक सिद्धयोगी के समान रहा । ध्यान, जप, आसन-प्राणायाम, स्वाध्याय एवं अध्ययन, अध्यापन में रह-रहकर ज्ञान की गंगा सदा प्रवाहित होती रहती । बाह्य व्यक्तित्व भी इतना आकर्षक, तेजस्वी था कि आने वाला हर व्यक्ति आपका भक्त बन जाता । व्यक्ति व्यक्ति की समस्याओं को समाहित कर उसमें नई ऊर्जा एवं चैतन्य का संचार कर देते । जन-जन में अपनत्व की पुट को इस तरह बिखेर देना आपके व्यक्तित्व की नैसर्गिक विशेषता थी ।

कुशल अनुशास्ता

गुरुदेव स्वयं अनुशासन प्रिय थे । आप स्वयं अनुशासन में रहे । आचार्य एवं अनुशास्ता बनकर उसमें और निखार आया । शासक शासितों के साथ घुल-मिल जाए, यह अनुशास्ता की कसौटी होती है । आप इस कसौटी में पूर्ण सफल रहे । आज अनुशासन करने की तमन्ना हर व्यक्ति में व्याप्त हो रही है, लेकिन उसके दायित्व को समझने का प्रयास कहाँ है ? अनुशासन करना पृथक कार्य है, उसे दायित्व के रूप में ग्रहण करना अलग कार्य होता है । दायित्व के अभाव में अनुशासन लड़खड़ाता है, अन्यथा अनुशासन में उच्छृंखलता पनप नहीं सकती ।

तेरापंथ धर्मसंघ एकतंत्रीय शासन प्रणाली पर आधारित है । इसलिए यह अपेक्षित भी रहता है कि आचार्य योग्यता संपन्न हो । संघ का प्रत्येक सदस्य शासन नियन्ता के रूप में उसे तभी स्वीकार कर सकता है जब उसके मन में सबके प्रति समान दृष्टि हो, सबको साथ में लेकर चलने की क्षमता हो, संघ की सारणा, वारणा में निपुण हो । इस संघ का जो विकास हुआ है वह गुरुदेव के कुशल नेतृत्व के कारण ही हुआ है ।

प्रसिद्ध विचारक जैनेन्द्र जी ने तेरापंथ अनुशासन पर टिप्पणी करते हुए कहा– "जो कुछ मै जानता हूँ उससे इस संगठन के प्रति मुझमे विस्मय का भाव उत्पन्न होता है। तेरापंथ के केन्द्र मे सत्ता नही है। सत्ता को अधिकार, हथियार और सम्पति से सुरक्षित रख उसे और समर्थ बनाया जा सकता है। तेरापंथ को एक ऐसे रूप मे स्वीकार किया जा सकता है सत्ता सम्पति से दूर कुछ परम तत्त्वो से ही अपनी मौलिक पहचान बनाई है। मेरी श्रद्धा है कि यह संगठन जीवन्त एवं शुभ है।" तेरापंथ अनुशासन और गुरुदेव श्री तुलसी को कभी भिन्न नही किया जा सकता। ये अभिन्न है। आपकी छत्रछाया मे अविरल गति से इस संघ ने विकास किया है।

कर्मठ जीवन

संत श्री तुलसी सिद्ध स्वरूप एक योगी पुरुष थे। उनका जीवन गुणों का अक्षय भंडार था। संगठन चातुर्य, गुणग्राहकता, जिज्ञासा वृत्ति, परिश्रमशीलता, अध्ययन-अध्यापन मे कुशल एवं शांत अध्यवसाय आदि न जाने कितनी विशेषताएँ आपमे समाहित थी। प्रतिदिन प्रात: ४.०० बजे से रात्री के ११.०० बजे तक अनवरत परिश्रम करते उन्हे कभी भी देखा जा सकता था। बिना विश्राम के अनेकानेक कार्यो को आप सहजतापूर्वक करते। अति परिश्रम के पश्चात् भी कही थकान नही, कभी भी देखो चेहरे पर मधु मुस्कान रहती। तेरापंथ धर्म सघ के साधु-साध्वियो का आपने विद्वान, व्याख्याता, लेखक, कलाकार, संगीतकार के रूप मे निर्माण किया, अध्ययन-अध्यापन के नये आयाम खोले। श्रावक-श्राविकाओ को भी प्रेरणा देकर उन्हें आगे बढ़ाया। संघ का प्रबुद्ध समाज आपके द्वारा दिए हुए आयामो को कभी विस्मृत नही कर सकता। कभी उऋण नही हो सकता।

प्रभावशाली वक्ता एवं साहित्यकार

गुरुदेव ! एक प्रभावशाली प्रवचनकार एवं उच्चकोटी के साहित्यकार भी थे। आपके प्रवचन की शैली सहज, सरल, सुबोध एवं हृदय को छू जाने वाली थी। प्रवचन मे विषय एवं विचारो की मौलिकता स्पष्ट झलकती। जटिल से जटिल तथ्यो को सरल शब्दो मे अभिव्यक्त कर श्रोता के मन एवं मस्तिष्क मे उसे बैठा देते।

संगीत भी प्रवचन का एक अंग होता। आपके मधुर कंठ से जब संगीत की स्वर लहरिया प्रस्फुटिक होती तब सारी सभा को आप संगीत रस मे आकंठ डूबा देते। सारा वायुमंडल संगीतमय बन जाता। हजारो गीतों का आपने सृजन किया है। सोमरस, सुधारस, शासन सुष्मा, शासन-संगीत, नन्दन निकुंज, अणुव्रत-गीत के रूप में आपकी कृतियाँ प्रकाशित हैं।

आपने गद्य-पद्य दोनो ही विधाओं मे अनेक भाषा मे साहित्य का सृजन किया है।

संस्कृत भाषा में जैन सिद्धांत दीपिका, भिक्षु न्याय कर्णिका, मनोनुशासनम् आदि अनेक ग्रंथों का निर्माण किया । हिन्दी भाषा में आपकी शताधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं । उनको हम कुछ हिस्सों में विभक्त कर सकते हैं । संघीय साहित्य अणुव्रत-प्रेक्षाध्यान का साहित्य, युगीन संदर्भ में निबंध एवं व्याख्यानादि । "कालूयशोविलास" राजस्थानी भाषा की अमरकृति है । राजस्थानी भाषा में और भी अनेक कृतियाँ हैं । साहित्यजगत में आप एक प्रकाश स्तम्भ बनकर उभरे जो आने वाली पीढ़ी के लिए निरंतर उजाला फैलाएगी ।

आगम संपादन एवं शोध का गुरुतर कार्य किया है । उससे जैन दर्शन और भगवान महावीर को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नई पहचान मिली । आगम के विशाल कार्य को देखकर जैन दर्शन के मूर्धन्य विद्वान दलसुखभाई मालवणिया ने कहा था कि सरकारी संस्थाएँ करोड़ों रुपये खर्च कर भी इस कार्य को सौ वर्षों में भी नहीं कर सकती थी, जिस कार्य को आपने ३५ वर्षों में किया । देवर्धिगणी क्षमा श्रमण की वाचना के १५०० वर्षों के पश्चात् आगम संपादन का इतना बड़ा प्रयत्न गुरुदेव के सान्निध्य में हुआ । आगम वा[illegible]ा एवं संपादन का सारा श्रेय गुरुदेव एवं आपके यशस्वी उत्तराधिकारी आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी को है । अपनी प्रज्ञा की रश्मियों के द्वारा जो आगमों का कार्य हुआ है, वह भारतीय साहित्य जगत में चन्द्रमा की भाँति चमकता रहेगा ।

अणुव्रत आंदोलन का प्रवर्तन

देश के गिरते नैतिक एवं चारित्रिक स्तर पर आपका ध्यान केन्द्रित हुआ । नैतिकता को पुन: प्रतिष्ठित करने के लिए आपने अणुव्रत आंदोलन का प्रवर्तन किया । यह एक असाम्प्रदायिक आंदोलन है । सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक जीवन में जहाँ नैतिकता को तिलांजली दी जा रही है । ऐसे समय में आपने अणुव्रत के द्वारा नैतिक मूल्यों की स्थापना में अपना संपूर्ण जीवन मानव सेवा के लिए समर्पित कर देश में मानवता के मसीहा के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त की ।

अणुव्रत-दर्शन में लोकतंत्र की उज्ज्वल कल्पना निहित है । अणुव्रत-दर्शन व्यक्ति-व्यक्ति को नैतिक बनाने की आचार संहिता है । इसकी आवाज राष्ट्रपति भवन से लेकर एक गरीब की झोंपड़ी तक गूंजी है । इस नैतिक क्रांति को निरंतर प्रज्ज्वलित रहने के लिए आपने पूरे देश में पद-यात्रा की । गुरुदेव ने कच्छ से कलकत्ता और पंजाब से कन्याकुमारी तक की पदयात्रा नैतिक जन जागरण की महायात्रा है । ७०००० किलोमीटर से भी ज्यादा आपने पद-विहार करके जन-जन से संपर्क किया । पूर्व राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह ने एक बार कहा था—

"आचार्य श्री तुलसी पद-यात्री है । आप समूचे देश में घूम-घूमकर व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के लिए कल्याणकारी काम कर रहे हैं । आप सरकार से कोई मदद नहीं लेते, प्रत्युत सरकार की मदद कर रहे हैं । आचार्यश्री आपको सरकार की जरूरत नहीं है, सरकार को

आपकी जरूरत है ।"

साम्प्रदायिक घेरे से ऊपर उठकर गुरुदेव ने राष्ट्रीय एकता, अहिंसा और शांति के कार्यक्रमों से राष्ट्र को अनेक अवदान समय-समय पर दिए । भारत सरकार ने १९९३ में आपके अवदानों का सम्मान करते हुए "इंदिरा गांधी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार" से सम्मानित किया । आचार्य तुलसी को दिया गया यह सम्मान नैतिक एवं मानवीय मूल्यों का सम्मान था ।

संघर्षों की जीवन्त कहानी

गुरुदेव का जीवन संघर्षों की जीवन्त कहानी है । आपके जीवन में अनेक विरोधों के तूफान आए । हर बार विजयश्री ने आपके चरण छुए । संघर्षों से आपका व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व सहस्त्रगुणित होकर निखरा । सूर्य की तरह आपकी तेजस्विता हर बार वृद्धिगत हुई ।

तेरापंथ धर्मसंघ के आचार्य के लिए संघर्षों को सहना नई बात नहीं है, उसे झेलने की क्षमता उसे परम्परा से प्राप्त है । आपके जीवन में बाह्य व आन्तरिक दोनों तरह के संघर्ष आए । संघर्षों में आप सदा मेरू की भाँति अप्रकम्पित रहे । आप कभी संघर्ष करना नहीं चाहते । जब परिस्थितियाँ वैसी निर्मित हो जाती, तब आप फौलादी संकल्प एवं दृढ़ विश्वास से उसे निरस्त कर देते । विरोध को सहने की आपमें अद्भुत क्षमता थी । ऐसे समय में आप कहते "जो हमारा हो विरोध, हम समझें उसे विनोद ।" सुकरात ने जीवन में एक बार विष पान किया और सभी को सदैव अमृत बाँटा । अपनी अमृतमयी वाणी से इस भू-धरा को सिंचित किया । आध्यात्मिक, सामाजिक, संघीय विकास के उन्नयन में जो आपने अवदान दिए हैं वे सभी के विकास में सहायक हुए हैं । आपके अवदानों को एकत्रित किया जाए तो एक महाग्रन्थ बन सकता है ।

अणुव्रत अनुशास्ता श्री तुलसी के भाष्यकार प्रेक्षा प्रणेता आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी के जो संदेश आज हमें मिल रहे है उसमें गुरुदेव के कार्यों को और ज्यादा गति देने का संकल्प संघीय विकास का द्योतक है । एक बार गुरुदेव ने कहा था—"तुलसी में महाप्रज्ञ को देखो, महाप्रज्ञ में तुलसी को देखो" ये शब्द आज साकार हो रहे हैं । गुरुदेव के व्यक्तित्व के बारे में आचार्य श्री के अति उत्तम एक श्लोक में आपकी पीयूषवाणी बोल रही है :—

"गगनं गगनाकारं, सागरः सागरोपमः ।
गुरु गौरव सीमायां, तुलसी तुलसी समः ॥"

आकाश-आकाश के सदृश है, सागर सागर के सदृश है । आकाश और सागर अमाप्य एवं अनुपम हैं । निःसंदेह संत श्री तुलसी का इतिहास तेरापंथ या जैन समाज का इतिहास नहीं है । बल्कि वह मानवता का इतिहास है । प्रामाणिकता, सच्चाई और भारतीय संस्कृति का इतिहास है । धर्मक्रांति एवं नैतिक मूल्यों का इतिहास है । श्रद्धासिक्त भावों से आधुनिक भारत के सुकरात को प्रणाम !

युगप्रधान कौन?

साध्वी प्रियंवदा

विशेषण, अलंकरण एवं संबोधन आज कौन नहीं चाहता। प्रायः हर व्यक्ति कोई न कोई विशेषण से अलंकृत होना चाहता है पर उसी व्यक्ति का विशेषण सार्थक होता है जिसने विशेषण की गरिमा को शतगुणित किया हो। महापुरुष कभी भी विशेषण प्रात्रि के लिए कोई काम नहीं करते पर उनकी कार्यशैली से प्रभावित होकर विशेषण स्वयं उनके चरण चूमते हैं तथा महापुरुषों के चरणों में नतमस्तक हो स्वयं को महिमामंडित करते हैं।

जैनधर्म में हेमचंद्राचार्य, भद्रवाहु, हरिभद्र आदि ऐसे कई प्रकाण्ड विद्वान आचार्य हुए हैं जो अनेकानेक विशेषताओं के धनी थे। इसी शृंखला में एक ज्वलंत नाम है - आचार्य तुलसी का।

अणुव्रत अनुशास्ता आचार्य तुलसी भी वहुविध विशिष्टताओं के पुंज थे। वे राष्ट्रसंत, हक़ीम खां सूर, वाक्पति आदि अनेक विशेषणों एवं अलंकरणों से अलंकृत थे। उन सवमें उनके नाम के साथ जुड़ा हुआ है एक लोकप्रिय विशेषण - युगप्रधान।

प्रश्न उपस्थित होता है कि युगप्रधान कौन हो सकता है? क्या हर कोई मुनि, हर कोई आचार्य, हर कोई योगी संन्यासी युगप्रधान हो सकता है? नहीं।

युगप्रधान के लिए करणीय चार कार्यों की ओर ध्यानाकर्षित करते हुए प्रस्तुत संस्कृत श्लोक में वताया गया है कि

"कुरुढ़िकर्तनं कृत्वा नवायाम प्रवर्तनम्
प्राग् - वृत्तावर्तन काम्यं, शाश्वतास्थानुवर्तनम्"।

युगप्रधान वह होता है जिसने अपने शासनकाल में कुरूढ़ियों के वंधनों को काट कर समाज को एक नया आलोक एवं सही दिशादर्शन दिया हो।

युगप्रधान वह होता है जिसने अपनी कुशाग्र प्रतिभा एवं दूरदर्शिता से नव विधाओं का प्रवर्तन किया हो तथा जन-जन को नैतिक चेतना के जागरण का शंखनाद सुनाया हो।

युगप्रधान वह होता है जिसने अथक श्रम एवं प्रत्युत्पन्न मेघा से विस्मृत पुरावृत्तों का आवर्तन करके सत्य को उद्घाटित किया हो।

युगप्रधान के चतुर्थ कार्य को परिभाषित करते हुए श्लोक में लिखा है कि युगप्रधान वह होता है जिसने शाश्वत आस्थाओं का अनुवर्तन किया हो।

वाकई में आचार्य तुलसी एक ऐसे देदीप्यमान आचार्य थे जिन्होंने युगप्रधान विशेपण को

सार्थक बनाया है। उन्होंने "नयामोड़" का घोष देकर सामाजिक कुरूढ़ियों के पर काटकर स्वस्थ समाज की संरचना की थी। आचार्य तुलसी एक ऐसे क्रांतिकारी पुरुष थे जिन्होंने नव आयामों एवं नवीन विधाओं का प्रवर्तन कर संघ, समाज एवं राष्ट्र को वास्तविक आध्यात्मिक चेतना प्रदान की है। उनके द्वारा उद्‌घाटित अनेकानेक आयामों में एक आयाम है - अणुव्रत।

प्रेक्षा प्रणेता आचार्य श्री महाप्रज्ञ के शब्दों में "आचार्य तुलसी का पर्याय है अणुव्रत और अणुव्रत का पर्याय है आचार्य तुलसी"। अणुव्रत को अंतर्राष्ट्रीय क्षितिज तक पहुंचाने वाले आचार्य तुलसी अगर कुछ वर्ष और जीवित रहते तो संभवतः अंतरिक्ष में भी अणुव्रत का संदेश गूंज उठता। पर नियति को यही मंजूर था और हम इक्कीसवीं सदी में प्रवेश करें इससे पूर्व ही उस महामानव को धरती की गोद से उठा लिया। और तो और जिस अणुव्रत की आचार संहिता को जन-जन तक पहुंचाने के लिए जिन्होंने लंबी-लंबी पदयात्राएं कीं उसी अणुव्रत की स्वर्ण जयन्ती आने से पूर्व ही वे हमारी आंखों से ओझल हो गये। आगम संपादन का गुरुतर कार्य जिस सुनियोजित तरीके से उन्होंने प्रतिपादित किया वह उनके अतुलित साहस, अदम्य उत्साह एवं गहरी कार्य-निष्ठा का ही परिचायक है। अति व्यस्तता के बावजूद जैन आगमों के शोधपूर्ण ग्रंथ तैयार करके वाचना प्रमुख गुरुदेव तुलसी ने युगप्रधान की तीसरी विशेषता को चरितार्थ कर दिया।

आचार्य तुलसी एक ऐसे ज्योतिपुरुष थे जिन्होंने शाश्वत आस्थाओं का अनुवर्तन किया तथा जीवंत पर्यन्त अपने मौलिक सिद्धांतों की प्राणपण से सुरक्षा की है। इन चार विशिष्ट विशेषताओं के धनी होने के नाते आचार्य तुलसी ने युगप्रधान के गौरव को और अधिक गौरवान्वित कर संसार में अमर हो गये।

यद्यपि आज आचार्य तुलसी हमारे बीच नहीं है पर अध्यात्म में विश्वास रखनेवाले हर व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि वह अणुव्रत अमृत वर्ष के उपलक्ष में अपनी सुप्त शक्ति को जागृत कर उनके स्वप्नों को साकार रूप देने के लिए अपना यथोचित योगदान दे।

उनके मुखारविंद से सहज निःसृत एक पंक्ति है - "प्रशंसा नहीं प्रस्तुति करो।"

वे प्रशंसा नहीं प्रस्तुति चाहते थे अतः हम सब रचनात्मक कार्य प्रस्तुत करके उस महामानव के प्रति सच्ची श्रद्धांजली अर्पित करें।

हम सदा सर्वदा अपने स्मृति पटल पर अंकित रखें इस भावपूर्ण मुक्तक को

"मूरत गई पर कीरत अमर है
सूरत गई पर शोहरत अमर है
बिछोह हो गया तुलसी का जहां से
शरीर गया पर तुलसी अमर है"

आचार्य श्री तुलसी

राष्ट्रीय एकता के प्रतीकपुरुष

मुनि लोकप्रकाश 'लोकेश'

एक पत्रकार ने आचार्य तुलसी से पूछा था :

क्या आप हिन्दू हैं ?

उन्होंने उत्तर दिया नहीं, क्योंकि चोटी नहीं है ।

पत्रकार ने प्रतिप्रश्न किया–तो क्या आप मुसलमान है ?

उन्होंने फिर उत्तर दिया–नहीं, क्योंकि दाढ़ी है ।

पत्रकार ने कहा–तो आप क्या हैं ?

मैं इन्सान हूँ । सिर्फ इन्सान ।

आचार्य श्री तुलसी द्वारा सूत्र रूप में दिये गये इस छोटे से उत्तर में उनके व्यक्तित्व, कर्तृत्व, विचार और दर्शन की स्पष्ट झलक मिलती है । "इन्सान पहले इन्सान, फिर हिन्दु या मुसलमान" आचार्य तुलसी का यह प्रमुख उद्घोष था । इसी विचार और कर्म ने उन्हें मानवतावादी संत के रूप में प्रतिष्ठित किया । विश्व बंधुत्व उनका नारा नहीं, यह उनके जीवन का मिशन था । मानवता की भावना पैदा करने के उनके अभियान का एक मात्र उद्देश्य था अहिंसा और शांति की स्थापना । एक लाख किलोमीटर की पद-यात्रा से उनका यह मिशन अधिक प्रभावी हुआ । हर वर्ग, हर समूह और हर तबके के लोगों ने उनके विचारों को समझा ही नहीं, अपनाया भी । विश्व समुदाय ने उनके विचार और कार्यक्रम को जो सम्मान दिया, वह भारत के लिए गौरव का विषय है ।

सम्प्रदाय-विहीन धर्म अणुव्रत के संस्थापक के नाते उन्होंने वैचारिक समानता खोजने और सामान्य जीवन में आचरण शुद्धता लाने के लिए जीवन-भर संघर्ष किया था । राष्ट्र एवं विश्व मानस को उनके द्वारा दिये गये अवदानों की एक लंबी शृंखला है ।

बात उन दिनों की है जब वे पदयात्रा करते हुए तमिलनाडु पहुँचे थे । उस समय वहां हिन्दी विरोधी आंदोलन प्रचण्ड रूप ले चुका था । अन्नामलै विश्वविद्यालय इस आंदोलन का केन्द्र बिन्दु बन चुका था । उस विश्वविद्यालय के छात्र हिन्दी के विरोध में खुलकर सड़कों पर आ गये थे । कुछ छात्र हिन्दी विरोधी आंदोलन में शहीद हो गये । उसी विश्वविद्यालय में अणुव्रत अनुशास्ता को प्रवचन के लिए आमंत्रित किया गया । कुलपति सहित अनेक प्रोफेसरों ने अणुव्रत अनुशास्ता से अनुरोध किया–आप वहाँ हिन्दी में न बोलें ।

अणुव्रत अनुशास्ता भाषा को लेकर किये जाने वाले इस आंदोलन को समाप्त करवाना चाहते थे । उन्हीं छात्रों की परिषद के समक्ष उन्होंने हिन्दी भाषा में अपना ओजस्वी भाषण दिया । छात्रों ने तालियों की गड़गड़ाहट से उनका स्वागत किया । हिन्दी में वह ऐतिहासिक भाषण देकर अणुव्रत अनुशास्ता ने न केवल हिन्दी भाषा को उजागर किया वरन् हिन्दी विरोधी उस आग का भी शमन

किया। अपने प्रयास से उत्तर-दक्षिण के बीच पड़ने वाली दरार को उन्होंने बचा लिया।

समाज व राष्ट्र के किसी भी वर्ग या भाग में जब भी कोई समस्या उत्पन्न होती, वे उसके समाधान के लिए तत्पर रहते। दिल्ली में आयोजित उनकी श्रद्धाजलि सभा में बोलते हुए पूर्व प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने ठीक ही कहा था कि राष्ट्रीय समस्याओं को समझने और उनको सुलझाने का उनका ज्ञान अद्‌भुत था। पंजाब समस्या के समाधान में उनके योगदान को राष्ट्र कभी नहीं भूल पाएगा।

आतंकवाद से ग्रस्त पंजाब में माहौल जब अत्यधिक भयानक था, दिनदहाड़े गोलियों के धमाके शहरों और गाँवों में सुने जाते थे, उस समय अणुव्रत अनुशास्ता श्री तुलसी ने अपने शिष्य-शिष्यों को वहां भेजा। अणुव्रत अनुशास्ता जानते थे कि आतंकवाद के डर से सैकड़ों परिवार पंजाब छोड़कर भागे जा रहे हैं। ऐसे समय में उनके आत्मविश्वास को बढ़ाना जरूरी है। यह काम सरकार और प्रशासन से भी कहीं बेहतर ढंग से उनके साधु-साध्वियाँ कर सकते हैं। लोगों ने आग्रह किया—पंजाब का माहौल बहुत खराब है, आप साधु-साध्वियों को राजस्थान की ओर बुला लें। अणुव्रत अनुशास्ता ने पलटते हुए कहा—साधु-साध्वियां अपने हैं। वहां रहने वाले हजारों लोग हमारे नहीं हैं ? उन्हें हम असहाय कैसे छोड़ सकते हैं ? हमारे शिष्य कम से कम जनता का मनोबल तो बढ़ाएंगे ही। उसके बाद कुछ और मुनियों के ग्रुप अणुव्रत अनुशास्ता ने वहां भेजे।

स्वयं लोंगोवाल का केन्द्र सरकार से बातचीत करने का कोई मानस नहीं था। वे निराश हो चुके थे। अणुव्रत अनुशास्ता श्री तुलसी और संत लोंगोवाल की दो दौर में लंबी बातचीत चली। उस बात का ठोस नतीजा आया। लोंगोवाल ने केन्द्र सरकार से बातचीत करना स्वीकार किया। अणुव्रत अनुशास्ता की प्रेरणा से लोंगोवाल ने प्रधानमंत्री राजीव गांधी से वार्तालाप किया। उसका निष्कर्ष राजीव-लोंगोवाल समझौते के रूप में देश के सामने आया।

उस ऐतिहासिक पंजाब समझौते की पृष्ठभूमि में अणुव्रत अनुशास्ता की महत्वपूर्ण भूमिका रही। इस कार्य के लिए अणुव्रत अनुशास्ता को केन्द्र सरकार की ओर से बधाई देने के लिए गृहमंत्री एस०बी० चव्हाण आमेट आए। आमेट की सार्वजनिक सभा में गृहमंत्री ने अणुव्रत अनुशास्ता श्री तुलसी के प्रति इस ऐतिहासिक कार्य की सफलता के लिए आभार प्रकट किया।

अणुव्रत अनुशास्ता श्री तुलसी ने धर्माचार्य की भूमिका में रहते हुए भारतीय राजनीति को अपने व्यक्तित्व ओर कर्तृत्व से प्रभावित किया है। संत की गरिमा से हटकर वे राजनीति में कभी लिप्त नहीं हुए। किसी दल के साथ प्रतिबद्ध नहीं हुए। निष्पक्ष और तटस्थ रहकर सभी दलों के प्रमुखों को उन्होंने दिशादर्शन दिया है।

सन् १९९४ में जब संसद की प्रतिष्ठा दांव पर लगी हुई थी, विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्रीय मुल्क उपहास का पात्र बन रहा था, देश के हर नागरिक की धड़कन जिस लोकसभा से जुड़ी हुई है, वह निस्पंद थी, ऐसे में भला राष्ट्रीय एकता समिति के मनोनीत सदस्य, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार से सम्मानित राष्ट्रसंत श्री तुलसी कैसे मोन रह सकते थे। प्रश्न सत्तापक्ष या प्रतिपक्ष का नहीं, राष्ट्र की गरिमा का था।

एक सप्ताह बीत जाने पर भी संसद का गति-रोध खत्म नहीं हुआ वह बढ़ता ही गया। लोकसभा

अध्यक्ष ने गतिरोध दूर करने के अनेक प्रयास किये, पर कोई पक्ष झुकने को तैयार नहीं था। दूरियां बढ़ती गयीं, टकराव के संकेत आने लगे। गुरुदेव श्री तुलसी ने इस अवरोध को खत्म करना आवश्यकत समझा। अणुव्रत अनुशास्ता श्री तुलसी और आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने विभिन्न राजनैतिक दलों के प्रमुख नेताओं को अपना एक विशेष संदेश भेजा।

उक्त संदेश के साथ अणुव्रत अनुशास्ता के प्रतिनिधि के रूप में प्रधानमंत्री व लोकसभा अध्यक्ष सहित विभिन्न अध्यक्षों व अनरूप प्रमुख नेताओं से मैंने बातचीत की। अणुव्रत अनुशास्ता की भावना से उन्हें अवगत कराया।

पक्ष व प्रतिपक्ष के अनेक वरिष्ठ नेतागण अणुव्रत अनुशास्ता श्री तुलसी व आचार्य श्री महाप्रज्ञ के पास इस मसले पर मार्गदर्शन लेने अध्यात्म साधना केन्द्र पहुंचे। अणुव्रत अनुशास्ता ने उन्हें प्रेरित किया कि रस्सी को जिस तरह दोनों ओर से खींचा जा रहा है, यह बहुत खतरनाक है। रस्सी बीच में टूट गई तो दोनों को नुकसान है। किसी बात को इतना ज्यादा न खींचा जाए। आवश्यक है कि सत्तापक्ष और प्रतिपक्ष दोनों ओर से इस तनाव को, इस खिंचाव को कम किया जाए और अनेकान्तवादी दृष्टि से बातचीत कर संसदीय अवरोध को खत्म करने का प्रयत्न हो।

प्रधानमंत्री सहित सभी पक्षों के लोगों पर अणुव्रत अनुशास्ता के संदेश व उनकी मार्मिक अपील का असर हुआ। सभी ने इसे बहुत गंभीरता से लिया। लोकसभा अध्यक्ष ने इस आह्वान से प्रेरित होकर पुनः अपने प्रयास तेज किये।

राजनीतिक दृष्टि से असुविधाजनक होते हुए भी संसदीय गरिमा व अणुव्रत अनुशास्ता की भावनाओं का आदर करते हुए सभी पार्टियों के नेता अवरोध खत्म करने पर सहमत हो गए।

राष्ट्रपति डॉ० शंकर दयाल शर्मा ने मुनि प्रशांत से अंतरंग वार्ता की और इस कार्य के प्रति उन्होंने अपनी प्रसन्नता व्यक्त की। प्रधानमंत्री श्री पी०वी० नरसिम्हा राव ने १७ अगस्त की शाम अणुव्रत अनुशास्ता के श्री चरणों में उपस्थित होकर आभार प्रगट किया। देश के सभी प्रमुख समाचार पत्रों ने संसदीय गतिरोध खत्म करवाने में आचार्य श्री तुलसी के योगदान को प्रमुखता से प्रकाशित किया।

३१ अक्टूबर, १९९३ में अणुव्रत अनुशास्ता को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार से सम्मानित किया गया। यह पुरस्कार राष्ट्रीय एकता के संवर्द्धन में उल्लेखनीय योगदान के लिए उन्हें दिया गया। प्रधानमंत्री नरसिम्हा राव ने इंदिरा गांधी की पुण्यतिथि पर एक भव्य समारोह में यह पुरस्कार उन्हें समर्पित किया।

मध्य प्रदेश से प्रकाशित नई दुनिया समाचार पत्र ने अपने संपादकीय में लिखा–"प्रसिद्ध संत आचार्य तुलसी को वर्ष १९९२ के लिए इंदिरा गांधी एकता पुरस्कार से सम्मानित किया जाना राष्ट्रीय जीवन में नैतिकता के महत्व को रेखांकित करता है। इंदिरा गांधी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार समिति ने तीन हजार से अधिक व्यक्तियों और संस्थाओं के नामों पर विचार करने के बाद आचार्य तुलसी का चयन किया।

राष्ट्रीय एकता पुरस्कार के लिए आचार्य तुलसी से अधिक उपयुक्त व्यक्ति की कल्पना करना कठिन है। आचार्य तुलसी राष्ट्रीय एकता के श्रेष्ठतम प्रतीक हैं।"

जहां कहीं थोड़ी-सी प्रतिकूलता का अनुभव हो, स्वयं को वदलने का प्रयास करो। प्रतिकूलता अनुकूलता में ढ़ल जाएगी।

-आचार्य श्री तुलसी



आचार्य तुलसी
मानवीय एकता के पक्षधर

बाल मुकुन्द त्रिवेदी

ऋषि मुनि जागरण के प्रतीक होते हैं वे स्वयं जागरण को जीते हैं और जन-समुदाय को जागरण का संदेश देते हैं। अणुव्रत अनुशास्ता आचार्य तुलसी भी भारतीय ऋषि परम्परा के उज्ज्वल नक्षत्र थे। मानव जाति के दु:ख-दर्द को अपना दु:ख मानकर उसके निवारण के लिए आजीवन समर्पित रहे। "सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे संतु निरामयाः के ध्येय मार्ग पर चलकर लोक-मंगल की कामना कर आचार्य श्री ने अपना समाजसेवा व्रत निभाया।

लाडनूं (नागौर-राजस्थान) के पिता श्री झूमरमल खटेड़ एवं माता वंदना देवी के परिवार में आचार्य तुलसी का जन्म २० अक्टूबर, १९१४ को हुआ। ग्यारह वर्ष की अल्पायु में सांसारिक माया-मोह के बंधनों को त्यागकर तेरापंथ धर्मसंघ के आठवें आचार्य कालुगणि से ५ दिसम्बर, १९२५ को तुलसी ने लाडनूं में दीक्षा ग्रहण की। २१ अगस्त को वे युवाचार्य बने, २७ अगस्त, १९३६ को गंगापुर में तेरापंथ धर्मसंघ के नौवें आचार्य बनाए गए। सबसे कम आयु के एवं सबसे अधिक समय (लगभग छह दशक) तक इस पद पर आसीन रहे।

अणुव्रत आंदोलन का सूत्रपात

आजादी के बाद देश में जातिवाद, सामाजिक अस्पृश्यता, साम्प्रदायिकता, अमीरी-गरीबी, महँगाई, अशिक्षा, सामाजिक आडम्बर और शिक्षा वृत्ति की समस्याएँ मुँह बाएँ खड़ी थीं। इनसे सामाजिक, धार्मिक और राष्ट्रीय क्षेत्रों में असंतोष व्याप्त था। अनुशासन और चारित्रिक पतन का बोलबाला था। ऐसे विकट समय में आचार्य तुलसी ने २ मार्च, १९४९ को 'अणुव्रत आंदोलन' का सूत्रपात किया, उनका मूलमंत्र था :—

"अणुरपि व्रतस्यैष त्रायतो महतो भयात्।"

समाज को शांति, अहिंसा, अनुशासन, नैतिक संस्कारों, व्यसन-मुक्ति, नारी जागरण, समाज उत्थान के लिए आचार्य श्री ने गाँव-गाँव, शहर-शहर की एक लाख कि०मी० पदयात्रा कर अणुव्रत का संदेश भारतीय जन समुदाय को दिया।

गुरुदेव के शब्दों में "अणुव्रत न कोई जाति है और न कोई सम्प्रदाय, उसका दर्शन विश्व मानव को निष्ठावान बनाता है। निष्टा को आचरणबद्ध कर प्रकाश दीप बनकर विश्व में समता-समरसता का दीप स्तम्भ बनाता है। मानवीय मूल्यों की बुनियाद के रूप में मन

की पवित्रता, शस्त्र का संयम, व्यसन मुक्ति, शिक्षा का प्रसार, मनुष्य जाति की समानता मे विश्वास को अपने जीवन में ग्रहण कर अपना जीवन सुखी बना सकता है ।

अहिंसक क्रांति का शंखनाद

महात्मा गांधी ने एकादश व्रत का प्रावधान मनुष्यो के चरित्र निर्माण के लिए किया था । उनका कहना था :– "समाज की आधार मूल इकाई मनुष्य है । यदि वह सुधर जाएगा तो समाज अपने आप सुधर जाएगा ।" सम्पूर्ण देश को एकता एवं प्रेम के सूत्र में बाँधने के लिए आचार्य विनोवा भावे ने "भूदान यज्ञ" का सूत्रपात किया । यह भी संयोग था कि भूदान आंदोलन के साथ-साथ आचार्य तुलसी के अणुव्रत आंदोलन से अहिंसक क्रांति का शंखनाद हुआ ।

स्वामी विवेकानंद ने कहा था– "जिस दिन धरती का मानव सही अर्थो में मानव हो जाएगा उस दिन इस धरती पर स्वर्ग उतर आएगा ।" आचार्य तुलसी इस पावन धरा को स्वर्ग समान बनाना चाहते थे । ऐसी पूज्य-भूमि जिसमें कोई किसी के खून का प्यासा न हो, किसी तरह के शोषण और अत्याचारों से मुक्त हो । माँ-बहनो की अस्मिता का सौदा न हो, दहेज की बलिवेदी पर किसी नारी का शृंगार न उजड़े । बाल-विवाह के बोझ तले किसी बालिका का बालपन न छिन जाए । युवा शक्ति पाश्चात्य-संस्कृति के लुभावे मे न आवे । नारी अधिकारो की समानता आदि का व्यवहार हो ।

सामाजिक पुनरुत्थान

आचार्य श्री का कहना था कि "केवल व्यक्ति को सुधारने का ही नही वरन् सम्पूर्ण समाज एवं राष्ट्र को सुधारने का मैंने व्रत लिया है । सबसे पहले व्यक्ति अपनी आदतों को सुधारे, समाज व्यक्ति से सुधरेगा तो राष्ट्र स्वयं सुधर जाएगा ।" सामाजिक कुरीतियो को जडमूल से उखाड़ फैंकने का संकल्प मैंने लिया है ।

आचार्य तुलसी ने तेरापंथ समाज मे डेढ़ हाथ लम्बे घूँघट और गहनो से लदी नारी शक्ति को पर्दा प्रथा के बंधनों से मुक्त कराया । विधवाओं को काले कपड़े पहनने की विवशता से मुक्त किया । जैन समाज मे स्त्री-शिक्षा का जबर्दस्त प्रचार किया । उनके इस प्रगतिशील कदम से समाज में चेतना जागृत हुई, उन्हें काफी हद तक सफलता मिली । बाल-विवाह, मृत्यु भोज आदि अनेक कुप्रथाओ को समाप्त करने का कार्य किया ।

मानवतावादी दृष्टिकोण

आचार्य तुलसी धार्मिक कट्टरपन और साम्प्रदायिक सीमाओ से हटकर मानवतावादी दृष्टिकोण लेकर जन समुदाय के समक्ष गए । आचार्य श्री ने "इंसान पहले इंसान फिर हिन्दू या मुसलमान' का नारा देकर मानव समाज मे भावात्मक एकता का वातावरण बनाया ।

उनका कहना था– "पहले मैं मानव हूँ, फिर धार्मिक हूँ, फिर जैन हूँ उसके बाद तेरापंथ धर्मसंघ का धर्माचार्य हूँ ।"

विश्व हिन्दू परिषद से घनिष्ठता

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, विश्व हिन्दू परिषद से उनका घनिष्ठ संबंध था । संघ के द्वितीय सर संघचालक प०बू० गुरुजी (माधव सदाशिव गोलवलकर) ने स्वयंसेवकों के बीच एक बार कहा था– "आचार्य तुलसी द्वारा प्रस्तुत सर्वधर्म सहिष्णुता और नैतिकता का आंदोलन 'अणुव्रत' अपने आप में बेजोड़ है ।

विश्व हिन्दू परिषद की धर्म संसद तथा केन्द्रीय मार्ग-दर्शक मण्डल के भी वे सदस्य थे । सन् १९८९ में श्रीराम जन्म भूमि आंदोलन के समय श्रीराम शिला पूजन कार्यक्रम में भी उनका सक्रिय योगदान रहा था । २२ अगस्त, १९८९ को लाडनूं में आचार्य तुलसी ने स्वयं श्रीराम शिलाओं का पूजन कर उन्हें अयोध्या भिजवाया । वे हिन्दू समाज के संगठित स्वरूप के पक्षधर थे । हाल ही में अल्पसंख्यक आयोग ने जैन समाज को अल्पसंख्यकों की श्रेणी में रखने का प्रस्ताव किया तो आचार्य तुलसी ने इसका डटकर विरोध किया । आचार्य श्री ने कहा कि "जैन समाज हिन्दू धर्म का अभिन्न अंग है कोई भी शक्ति उसे हिन्दू धर्म से अलग नहीं कर सकती ।"

प्रमुख अलंकरण

सन् १९६१ में तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन् ने आचार्य तुलसी को 'युग प्रधान' एवं १९७४ में षष्टिपूर्ति के अवसर तत्कालीन राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद ने 'युग पुरुष' की उपाधि से सम्मानित किया था । आचार्य पद पर ५० वर्ष पूर्ण करने पर तत्कालीन राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह ने १९८५-८६ में उन्हें 'भारत ज्योति' से सम्मानित किया ।

राष्ट्रीय एकता के प्रयासों के लिए अक्टूबर १९९३ में आचार्य तुलसी को 'इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार' प्रदान किया गया । २९ जुलाई, १९९५ को "हाकिम खाँ सूर" सम्मान से सम्मानित किया गया ।

फरवरी, १९९४ में दिल्ली में आचार्य तुलसी ने तेरापंथ धर्मसंघ के दसवें आचार्य का पद भार युवाचार्य महाप्रज्ञ को सौंप दिया । इस अवसर पर तत्कालीन युवाचार्य महाप्रज्ञ ने आचार्य तुलसी को "गणाधिपति" का सम्मान प्रदान किया जिसे आचार्य श्री को स्वीकार करना पड़ा ।

२३ जून, १९९७ को गंगाशहर (बीकानेर) में अपनी अस्वस्थता के बाद तेरापंथ धर्म सभा में उपस्थित होकर जन समुदाय को दर्शन देकर महाप्रयाण किया ।

गुरुदेव तुलसी

कर्मप्रधान व्यक्तित्व के धनी

❑ मुनि शुभकरण ❑

पूज्य गुरुदेव श्री तुलसी आज हमारे बीच नहीं रहे, यह सत्य है। किन्तु यह भी उतना ही सत्य है कि वे नहीं होते हुए भी सतत् हमारे बीच विद्यमान हैं। लगभग छ: दशक तक उन्होंने अपने करिश्माई व्यक्तित्व से समस्त समाज, राष्ट्र तथा संघ को अनवरत प्रभावित किया। अपने जीवन को उन्होंने अपना नहीं माना। वे कहते थे— मेरा जीवन सबका है, सबके लिए है। इसका अधिकाधिक उपयोग दूसरों के लिए हो, यही उन्होंने किया। वे एक उत्तम कोटि के सत् पुरुष थे, जिनके जीवन का क्षण-क्षण परमार्थ के लिए बीता—

''एके सत्पुरुषा: परार्थघटका: स्वार्थ परित्यज्य ये''।

वे महान् कर्तृत्वसंपन्न, व्यक्तित्वसंपन्न और जीवट से भरे-पूरे आचार्य थे। 'कुर्वन्नेव हि कर्माणि जीजीवेषं शतं समा:', कर्म करते-करते ही सौ वर्ष तक जीए— की सूक्ति को एकदम चरितार्थ करने वाले मनस्वी आचार्य थे। एक क्षण भी वे बिना कर्म के नहीं रहे। कर्म उनके जीवन का चरम आदर्श-सा बन गया। कर्म करते-करते ही उन्होंने अपना पंच भौतिक देह छोड़ दिया।

प्रात: चार बचे से रात्रि के १०-११ बजे तक की उनकी जीवनचर्या कर्मप्रधान जीवनचर्या थी। कर्म उनको घेरे हुए था या वे कर्म को घेरे हुए थे, यही कहना कठिन है। जब भी उन्हें देखा जाता— कोई-न-कोई आयाम/स्वप्न उनकी आँखों में तैरता दिखाई देतक्ता। जो-जो कल्पनाएँ उन्होंने संजोई, उन्हें पूर्ण करने में वे अविलम्ब जुट जाते। तेरापंथ धर्म-शासन को जो ऊँचाइयाँ और गरिमाएँ उन्होंने प्रदान कीं, आने वाली पीढ़ियों के लिए नि:संदेह वे एक सुखद आश्चर्य और अहोभाव पैदा करने वाली होंगी।

इसीलिए आज वे अनुपस्थित होते हुए भी अनुपस्थित नहीं हैं। उन्होंने अपने आपको खूब लुटाया, हजारों हाथों से वे अपने आपको बाँटते रहे। यही कारण है आज भी लोग अपनी-अपनी कल्पनाओं के अनुरूप उन्हें देख रहे हैं। यह सब उस चुम्बकीय व्यक्तित्व का सहज आकर्षण था। ऐसे महान् व्यक्तित्व के प्रति सहज सबका सिर 'श्रद्धावनत हो जाता है।

वे एक मानवतावादी महापुरुष थे । उन्होंने कहा– "मैं सबसे पहले मनुष्य हूँ" । उनका दिया हुआ नारा आज भी वातावरण में गूँज रहा है– "इंसान पहले इंसान, फिर हिन्दू या मुसलमान ।" काश ! इस सूत्र को हमारे राष्ट्रीय-सामाजिक जीवन मे महत्त्व दिया जाता । यदि मानवीय जीवन मे यह आत्मसात् हो जाता तो आज जातिवाद, सम्प्रदायवाद, अल्पसंख्यक-बहुसंख्यक आदि के आधार पर विभाजन करने वाली समस्याएँ खड़ी नही होती । राष्ट्र का स्वरूप कुछ दूसरा ही होता ।

उनके इस मानवतावादी दृष्टिकोण को जन-जन के अंतरमन मे प्रतिष्ठित करना ही उनके प्रति श्रद्धांजलि हो सकती है । तथा उनके स्वप्नों को साकार रूप दिया जा सकता है । वह शाश्वत आत्मा पूर्ण शांति में स्थित हो और हम सबका मार्ग प्रशस्त करती रहे, इसी विनम्र श्रद्धांजलि...।

युग प्रवर्तक गुरुदेव तुलसी !

□ हीरालाल जैन □

गत वर्ष नवम्बर में अणुव्रत लेखक सम्मेलन के संदर्भ में तीन दिन आचार्य श्री तुलसी के सान्निध्य में बिताने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था तब किसने सोचा था कि इतना जल्दी इस विभूति के विछोह का वज्राघात सहन करना पड़ेगा । गुरुदेव का न केवल व्यक्तित्व वरन् कार्यक्षेत्र भी बहुआयामी था । वे प्रखर, उत्कृष्ट साहित्यकार, भाषाविद्, शोधकर्ता, शास्त्रज्ञ, चिन्तक और दार्शनिक तो थे ही सबसे अहम बात यह थी कि वे खुले मन और मस्तिष्क के मनीषी थे।

कार्यक्षेत्र में उनका सबसे महत्त्वपूर्ण एवं युगांतकारी कार्य रहा तेरापंथ सम्प्रदाय को रूढ़िवादी घेरे से मुक्त करके उसे उदारचेता और अनुशासित धर्म संस्थान का रूप देना । उन्होंने अपने साधु समुदाय के साथ सात दशक तक निरंतर पदयात्रा करके भगवान महावीर का अहिंसा, अपरिग्रह, अनेकांत, समता और भाईचारे का मानवतावादी संदेश न केवल देश में वरन् विदेशों में भी जन-जन तक पहुंचाने का दुष्कर कार्य किया ।

गुरुदव करीब ५ दशक पूर्व से अणुव्रत आंदोलन के माध्यम से व्यक्ति एवं समाज के नैतिक स्तर के उन्नयन के कार्य में निरंतर जुटे रहे । इसी क्रम में पिछले वर्ष से नशा-मुक्ति अभियान छेड़कर उन्होंने देश को इस सत्यानाशी अभिशाप से मुक्त कराने का बीड़ा उठाया था ।

प्रेक्षाध्यान एवं जीवन विज्ञान जैसे प्रकल्प चलाकर वे चाहते थे कि व्यक्ति तनावमुक्त सद्नागरिक बनकर समाज, राष्ट्र और मानव के प्रति अपने कर्तव्यों का निष्ठापूर्वक निर्वहन करे ।

जैन दर्शन और शास्त्रों के अध्ययन, शोध और प्रकाशन हेतु लाडनूं में 'जैन विश्व भारती' की स्थापना करना ही गुरुदेव का एक ऐसा अद्वितीय कार्य है जो भव्य कीर्ति स्तंभ बनकर उनका सर्वदा यशोगान करता रहेगा ।

देश के सामने जब भी आतकवाद, संप्रदायवाद जैसी विकट समस्याएं आ खड़ी हुई तो आचार्य तुलसी ने देश के नियति-नियंताओं को सम्यक् सलाह-सुझाव देकर उनका समुचित समाधान ढूंढने में अपना अमूल्य सहयोग प्रदान किया । गुरुदेव की कथनी और करनी में किंचित मात्र भी अंतर नहीं था । पिछले महिनों अणुव्रत संस्था ने ग्राम सेवा का कार्य हाथ में लेकर सिद्ध कर दिया कि वंचित और बहिष्कृत लोगों की सेवा ही सबसे बड़ा धर्म है ।

ऐसे युग प्रवर्तक गुरुदेव की प्रथम पुण्य-स्मृति में मेरा शत-शत प्रणाम !

महिला समाज के उन्नायक

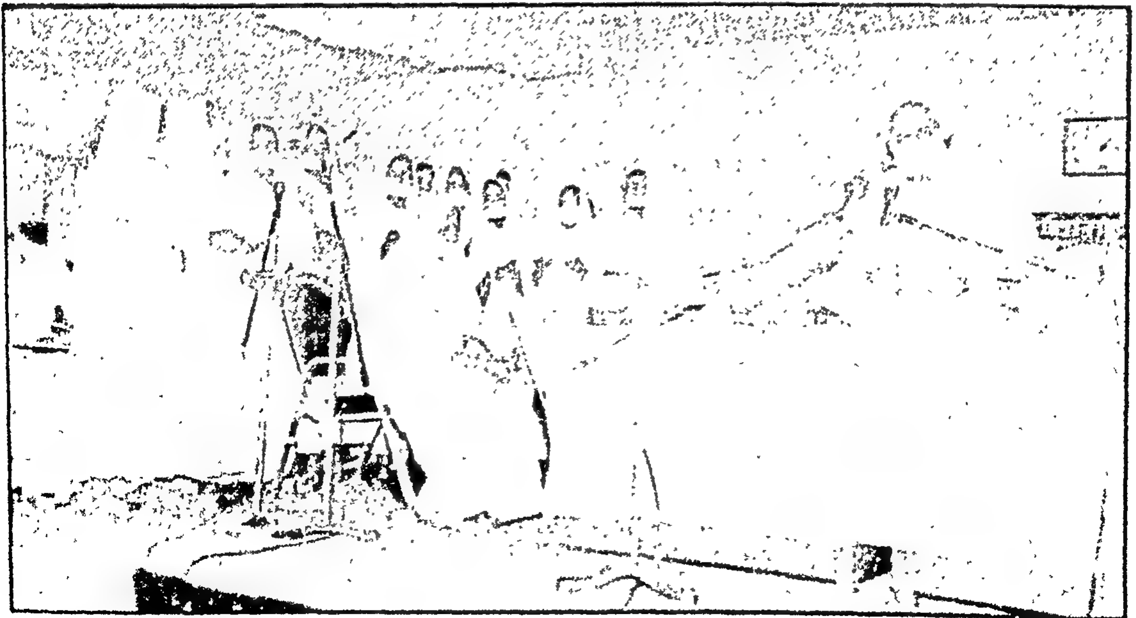
शांता पुगलिया

तेरापंथ धर्मसंघ के अनुशास्ता, अध्यात्म जगत के उज्ज्वल नक्षत्र, क्रांतिकारी युगपुरुष अणुव्रत अनुशास्ता पूज्य गुरुदेव श्री तुलसी २३ जून, ९७ को इस लोक से महाप्रयाण कर गए। उन्हें शत्-शत् श्रद्धांजलि अर्पित करता है—समस्त महिला समाज। उनके विश्वासों की छाया में नारी ने आश्चर्यजनक प्रगति की। उनका रोम-रोम नारी जागृति की प्रेरणा देता रहा। उनका विराट व्यक्तित्व प्रेरणास्पद और महान् था। अब वे हमारे बीच नहीं रहे पर उनके दिए गए आदर्शों की प्राणवान सत्ता सदियों तक हमारे साथ रहेगी।

छः दशक से भी अधिक काल तक निर्बाध रूप से व्यक्ति के जीवन रूपांतरण के लिए गाँवों, शहरों, नगरों व महानगरों में लगभग एक लाख किलोमीटर की पदयात्रा कर अपने मिशन को मानव मात्र तक पहुँचाने का सफल प्रयास किया। युग की जड़ता, वेदना और व्यथा को दूर करने के लिए जागरण का संदेश दिया। युग को नई दिशा दी।

अणुव्रत अनुशास्ता श्री तुलसी स्वप्नदृष्टा आचार्य थे। उन्होंने जागती आँखों से जो स्वप्न देखे, वे साकार हुए। उनकी बहुआयामी स्वप्न-शृंखला में समाज निर्माण के अनेक रूप उभरे। उनका कथन था— "जब तक व्यक्ति का रूपांतरण नहीं होगा, समाज का रूपांतरण नहीं हो सकेगा।"

उनके महत्त्वपूर्ण आयामों में एक है—नारी निर्माण। उन्होंने सदैव महिलाओं को ऊपर उठाने में हर कार्य में उन्हें प्राथमिकता दी। जैसे—पारमार्थिक शिक्षण संस्था की स्थापना,



जिसका उद्देश्य मुमुक्षु बहनों को उच्च शिक्षा प्रदान करना है । यह नारी जाति के उत्थान की प्रक्रिया का ही एक पहलू है ।

दूसरा महत्त्वपूर्ण उपक्रम है—समण श्रेणी की स्थापना । इसमे भी सर्वप्रथम बहनो को दीक्षित कर देश-विदेश मे प्रचार-प्रसार हेतु भेजकर नारी जाति का गौरव बढ़ाया ।

रूढ़िवादिता और घर की चारदिवारी तक सीमित रहने वाली तेरापंथ समाज की नारी को आपने अवला से सवला बना दिया । मैं स्वयं उन्हीं नारियों मे से एक थी, जो विशाल जनमेदिनी मे अपनी भाषा की अभिव्यक्ति तो दूर की बात, छोटे से समूह मे भी अपनी बात रखने मे संकोच का अनुभव करती थी । आज मै जो कुछ भी हूँ, केवल मात्र गुरुदेव की कृपादृष्टि का ही परिणाम हूँ ।

भारत की राजधानी दिल्ली, अणुव्रत अनुशास्ता पूज्य गुरुदेव का ऐतिहासिक चातुर्मासिक प्रवासकाल । मंडल का बीसवाँ वार्षिक अधिवेशन । अध्यक्ष पद हेतु मेरा चयन । उस समय पूज्य गुरुदेव की करुणामयी कृपा दृष्टि और आशीर्वादमयी वाणी मेरे जीवन की अमूल्य निधि बन गई । वे क्षण मै अपने जीवन मे कभी नहीं भुला पाऊँगी । असीम वात्सल्य और बहनो के प्रति उनका आत्मविश्वास देखकर मन श्रद्धा से अभिभूत हो गया । मन बार-बार प्रणाम करता है ऐसे योगी को ।

आज तेरापंथ समाज की महिलाओ मे विचार क्रांति का जो माहौल बना है, स्वावलम्बन का भाव जगा है उसमें एकमात्र महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है—अणुव्रत अनुशास्ता पूज्य गुरुदेव का । गुरुदेव को बहनो पर पूरा भरोसा था । उन्हें नि:संकोच अनेक बड़े-बड़े दायित्व सौंपे गए ।

व्यक्ति के सही निर्माण के लिए आपने एक नया सूत्र दिया जैन जीवनशैली का । और पूरे आत्मविश्वास के साथ यह कार्य सौपा अखिल भारतीय तेरापंथ महिला मंडल को । समूचे महिला समाज के लिए यह गौरव की बात थी । महिलाओ के कार्य से उन्हे पूरा संतोष था, जिनका उल्लेख गुरुदेव ने अनेक बार अपने प्रवचनों, गोष्ठियो और विशेष आयोजनो पर किया ।

पूज्य गुरुदेव का एक मिशन यह भी था कि बहने रूढ़िवादिता से ऊपर उठकर श्रमशक्ति के सुरम्य चिह्न अंकित करें । लाडनूं मे यात्रियो की प्रवास व्यवस्था का महत्त्वपूर्ण दायित्व पहली बार महिला समाज को सौपा गया । जिसका निर्वहन बहुत शानदार ढंग से किया गया । पूरे चार माह के कार्यकाल मे पूज्यवर का वात्सल्य, प्रेरणा और प्रोत्साहन हमारे उत्साह को संवर्द्धित करता रहा । अक्षय तृतीया का भव्य आयोजन भी महिला समाज ने संभालकर गुरुदेव के स्वप्नों को साकार किया ।

अणुव्रत अनुशास्ता श्री तुलसी द्वारा प्रज्ज्वलित चिराग हजारो-हजारों वर्षो तक विश्व को नया आलोक देता रहेगा, इसी आशा और विश्वास के साथ सम्पूर्ण महिला समाज की शत्-शत श्रद्धांजलि ।

आचार्य तुलसी

युग-धर्म के सृजक

❑ साध्वी श्री अमितप्रभा ❑

पूरा विश्व हिंसा, आतंक, अराजकता, क्रूरता, साम्प्रदायिक-वैमनस्य, जातीयता, प्रांतीयता, भाषावाद, अस्पृश्यता, असमानता, असंयम, उच्छृंखलता से भयभीत और संत्रस्त था। दो-दो विश्व-युद्ध से पहले मानव की चारित्रिक और नैतिक मूल्यों के प्रति आस्था दरक रही थी। भाषा, प्रांत, जाति, धर्म, सम्प्रदाय, दल-स्वार्थ और व्यसनों के कटघरे में बंद मानव मानवता से दूर था। अनैतिकता और अप्रामाणिकता के दल-दल में फँसा व आसुरी वृत्तियों से घिरा स्वयं की पहचान खो चुका था। ऐसी विषम परिस्थितियों में घिरी मानवता को देख एक संत का दिल द्रवित हो गया।

उसने मानव-जाति के त्राण और रक्षण हेतु एक युग धर्म की राह दिखाई जिसे अपनाकर मानव सुखमय और शांतिमय जी सकता था। उस युगधर्म की पहचान हुई 'अणुव्रत' के नाम से।

यह धर्म है पर किसी सम्प्रदाय के साथ इसका गठबंधन नहीं है। इसमें जाति, वर्ण, धर्म, सम्प्रदाय की सीमाएँ नहीं हैं। किसी भी धर्म का अनुयायी अपने धार्मिक अनुष्ठानों को अपने ढंग से सम्पादित करते हुए अणुव्रत आचार-संहिता के नियमों का बेझिझक पालन कर सकता है। अणुव्रती के लिए न कोई अनुष्ठान है न कोई उपासना पद्धति। मात्र चारित्रिक मूल्यों का उन्नयन ही इसका एकमात्र उद्देश्य है। इसलिए इसकी पहचान एक सम्प्रदायविहीन युग-धर्म के रूप में हो सकती है। जिस धर्म में कोई सम्प्रदाय नहीं होता वह सबका होता है, पूरे युग का होता है। इस दृष्टि से अणुव्रत को युगधर्म कहा जा सकता है।

● युग धर्म वह होता है—जो किसी प्रकार की उपासना या क्रिया-कांड में नहीं उलझता हैं।

● युग धर्म वह होता है—जो मंदिर, मस्जिद, चर्च, गुरुद्वारा आदि किसी धर्म स्थान में बंद नहीं होता है।

● युग धर्म वह होता है—जिसे स्वीकार करने में किसी को संकोच न हो।

● युग धर्म वह होता है—जिस पर किसी व्यक्ति या धर्म का लेबल न हो।

● युग धर्म वह होता है—जिसका संबंध किसी क्रिया-कांड के साथ नहीं अपितु सम्यक् आचरण के साथ के हो।

उपरोक्त मानकों के आधार पर अणुव्रत को हम वैश्विक युग धर्म कह सकते हैं।

लगभग पाँच दशक से इस युग धर्म के, अणुव्रत के प्रणेता अणुव्रत अनुशास्ता आचार्य श्री तुलसी जन-जन को उद्बोधन देने, मानव को सच्चा बनाने के लिए अहर्निश प्रयत्नशील रहे। धूप, छाँह, सर्दी, गर्मी, भूख, प्यास और नींद की परवाह किए बिना पाँव-पाँव, गाँव-गाँव घूम-घूमकर इस युग धर्म की अलख जगाई। मानव सही मायने में मानव बने, इस पवित्र उद्देश्य के साथ आपने लगभग एक लाख कि०मी० की पदयात्राएँ की। आपको जितना रस उच्चकोटि के चिंतकों और प्रबुद्ध व्यक्तियों से विचार-विमर्श के समय आता, उससे भी अधिक भोली-भाली ग्रामीण जनता को समझाने में, उनको बुराइयों से दूर करने में आता। यही कारण है कि आपका स्नेहभरा उद्बोधन सुन हजारों-लाखों व्यक्तियों ने व्यसनों की कारा से मुक्त हो सुख की साँस ली। आपकी विश्वमोहिनी आँखों में वह आकर्षण था जो जन-जन को खींच लेता। वाणी में वह जादू था.जो जान-अनजान हर व्यक्ति के दिल को गहरे तक प्रभावित कर देता। तुलसी की तरह ही विलक्षण और सुवासित थे श्री तुलसी, जिन्होंने अपने सद्गुणों की सौरभ से सबको जीवन-पर्यन्त सुवासित करने का प्रयत्न किया। आजीवन पुरुषार्थ की पवित्र ऋचाएँ लिखने वाले युग-स्रष्टा, युगदृष्टा, युग धर्म के प्रणेता युग-पुरुष को युग का युगों-युगों तक श्रद्धाप्रणत नमन !!

नमन तुम्हें राजर्षि शतबार !

❑ डॉ० रामजी सिंह ❑

यह विधना की भूल है कि जिन्हें राज्य शासन का सूत्रधार होना था, उनके हाथों में धर्मसंघ की कमंडलु और चँवर दे दिया। क्षति दोनों की हुई—राजनीति की भी और धर्मक्षेत्र की भी। लेकिन उपलब्धि हुई निखिल मानवता की। यह आचार्य श्री तुलसी की विलक्षण शासन-संचालन की प्रतिभा थी कि उन्होंने सबसे छोटे धर्मसंघ को अपने संप्रदाय की सीमाओं से बाहर सर्वाधिक विज्ञापित किया और उजागर किया। उधर महात्मा गांधी और आचार्य विनोबा भावे के बाद राजपुरुषों को बुला-बुलाकर अणुव्रत की शिक्षा और दीक्षा दी। इसी प्रकार विधना की दूसरी भूल हुई जब उनकी सारस्वत-प्रतिभा को मात्र एक धर्मसंघ के लिए समर्पित कर दिया। लेकिन जो उपेक्षित अमृतोपम जैन साहित्य, जैन भंडारों की शोभा बढ़ा रहे, तुलसी न होते तो आगम उद्धार न होता। आगम रूपी गंगा के अवतरण के भगीरथ को शत्-शत् नमन्। संपूर्ण धर्मसंघ के साधुओं ओर महान् साध्वियों को इस कार्य में लगाकर इसे इतने कम समय में पूरा किया उसमें कम से कम १०० वर्ष लगते। तुलसी इस रूप में व्यक्ति नहीं विश्वविद्यालय थे।

संगठन और शासन की अलौकिक क्षमता, सारस्वत साधना के प्रचंड मार्त्तण्ड तथा नैतिक क्रांति के अग्रदूत तो वे थे ही लेकिन मेरी विनम्र राय में गुरुदेव की सबसे बड़ी उपलब्धि महाप्रज्ञ को शिष्य रूप में पाना है। रामकृष्ण की अनन्य तपस्या थी कि स्वामी विवेकानंद मिले, सुकरात का सौभाग्य था कि अफलातू जैसा महान् दार्शनिक मिला, मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं कि आचार्य तुलसी के कई जन्मों की तपस्या का संचित पुराय है कि उन्हें महाप्रज्ञ जैसे शिष्य मिले जिनकी सारस्वत प्रतिभा, हृदय की ऋजुता, मस्तिष्क की प्रखरता और आध्यात्मिक अपरोक्षानुभूति एवं निस्पृहता से तुलसी से भी बड़ी है किन्तु इसका भी श्रेय आचार्य श्री तुलसी को है।

प्रेरणापुंज : आचार्य तुलसी

साध्वी योगक्षेमप्रभा

युग के फलक पर उ[illegible]ब्धियों के स्वस्तिक उकेरने वाले युगचेता का नाम है तुलसी। तुलसी अक्षर तीन, पर उनके [illegible] अनगिन। नाम का प्रथम अक्षर 'तु' तुला का प्रतीक है। तुला निष्पक्षता, तटस्थत[illegible] यथार्थता की अभिव्यंजक है। तुलसी को जन्म से एक संप्रदाय मिला। वे एक परंपरा [illegible]ले-पुसे और उसी धर्मसंघ में शिक्षित-दीक्षित हुए। उनकी मनीषा कभी पक्षपाती नहीं बनी। उसने पक्ष लिया तो भी सत्य का। वे हमेशा सत्यग्राही रहे। यथार्थ का अन्वेषण उनका जीवन ध्येय था। उन्होंने रूढ़ता को कभी मान्य नहीं किया। तत्त्व की गहराई में उतरकर उसके सही अर्थ का ग्रहण उन्हें प्रिय था।

ल अक्षर उनकी लक्ष्यनिष्ठता और ललितकलाओं का अभिव्यंजक है। लक्ष्य निर्धारण के बाद वे कभी उससे हटे नहीं, रुके नहीं और मुड़े नहीं। वे पथ के अवरोधों को चीरकर पौरुष की मशाल थामे सदैव आगे बढ़ते रहे। आज तेरापंथ धर्मसंघ जिन पर्वतीय ऊँचाइयों



पर आरोहण कर रहा है उसके मूल में तुलसी का संकल्प और साहस ही मुखर है ।

आचार्य तुलसी का शरीर किसी कमनीय कलाकार की अनुपम कृति था । मनमोहक आँखे, उदात्तभाल, सुदीर्घकान, गजगामिनी चाल...सब कुछ लालित्य प्रकट करने वाला था । उनका शरीर ही नहीं, जीवन का हर आयाम कलापूर्ण था । उन्हें पालने से ही स्वच्छता के संस्कार संप्राप्त थे । मातृश्रेष्ठा वंदनाजी को भी कभी ऐसा-वैसा कार्य पसंद नहीं था । कहीं कुछ अव्यवस्थित नजर आता तो गुरुदेव तत्काल उस ओर इंगित कर देते । उनकी रुचियाँ विशेष रूप से परिष्कृत थी । उनके जीवन मे () पग-पग पर चरितार्थ होता था ।

एक बार हम तीन साध्वियाँ महाश्रमणीजी के निर्देशन में कक्ष की सफाई कर रही थीं । पुस्तके, अलमारियाँ, खिड़कियाँ, पट्ट जो कुछ साफ करना था, व्यवस्थित करना था, किया । पूज्य गुरुदेव कक्ष में पधारे । अनुभवी निगाहों ने एक नजर में ही कक्ष मे हुए परिवर्तन को भाँप लिया । साध्वी प्रमुखाजी से पूछा—आज कक्ष कुछ विशेष साफ दिख रहा है । हाँ, साध्वियों ने कक्ष को विशेष रूप से साफ किया है—साध्वी प्रमुखाजी ने निवेदन किया । कार्य करने वाली साध्वियों पर उसी क्षण गुरुदेव का वात्सल्य बरस पड़ा । स्नेहिल नजरों से निहारते हुए कहा—तुम तीनों को पाँच-पाँच कल्याणक बख्शीस देता हूँ । हम गुरुदेव की करुणादृष्टि से गद्‌गद् हो गई । हमने विशिष्ट जैसा कुछ नहीं किया था । मात्र महाश्रमणीजी के निर्देश से उनके कार्य में हाथ बँटाया था ।

तुलसी का तीसरा अक्षर है 'सी' जो सीमा, मर्यादा, अनुशासन का प्रतीक है । एक धर्मसंघ के महान शास्ता होने के साथ उन्होने केवल दूसरो पर ही अनुशासन नही किया, अपितु उसे जीया । सीमा का उल्लंघन उन्हे कभी प्रिय नही था । समय की सीमा, भोजन की सीमा, नींद की सीमा...सब ओर से उन्हे सीमा ही प्रिय थी, मात्र विकास को छोड़कर । उनका स्पष्ट अभिमत था कि सीमा में रहकर ही व्यक्ति असीम विकास कर सकता है । समय का उल्लंघन न उन्हें प्रिय था और न ही कोई करे वह बर्दाश्त था । किसी संघीय आवश्यक कार्य मे भी उन्होने वह प्रायश्चित वहन किया जिसका निर्धारण आम प्रशिक्षु के लिए था । योगक्षेम वर्ष का प्रसंग । एक दिन आवश्यक मंत्रणावश विलंब से गुरुदेव का सभा मे पदार्पण हुआ । प्रतिमिनट के हिसाब से वे सभा की साक्षी से खड़े रहे । भोजन मे द्रव्य की सीमा, मात्रा की सीमा ही उनके चिर यौवन का रहस्य था । रात्रि में सोने मे कार्यवश विलंब हो सकता था, पर उठने मे उनकी जैविक घड़ी ने कभी ४ बजे का अतिक्रमण नही किया । वे कार्यान्तर को ही विश्राम मानते थे । आरामतलबी से उनका दूर का भी रिश्ता नही था ।

अपने नाम के हर अक्षर और जीवन के हर व्यवहार से प्रेरणा प्रदान करने वाले ऐसे प्रेरणापुंज को शतशः नमन् ।

वे संजीवनी आँखें

☐ साध्वी शशिप्रभा ☐

तेरापंथ धर्म के नवम् अधिशास्ता आचार्य श्री तुलसी की तेजस्विता का अक्षयकोष थी उनकी दो चमकीली आँखें। ऐसा लगता था मानो उनका समूचा व्यक्तित्व मात्र उन दो आँखों में ही समाया हुआ था। उन आँखों में वह चुम्बकीय शक्ति थी जो प्राणीमात्र को अपनी ओर आकृष्ट कर लेती थीं। उस दृष्टिमात्र से दीन-दुःखी, श्रान्त-क्लान्त सभी में नव प्राणों का संचार हो जाता था। उन आँखों में अविरल प्रवाहित होने वाली करुणा और वत्सलता की गंगा-यमुना को शब्दों की सीमा में बांधना अति दुष्कर है। एक बार भी वे नजरें उठ जातीं तो एक अनिर्वचनीय तृप्ति का अहसास करा देतीं। इसलिए उस दृष्टि को पाने हेतु लोग हजारों-हजारों मीलों से दौड़े चले आते थे और वहाँ से असीम ऊर्जा लेकर ही लौटते थे।

कभी-कभी एकान्तवास या कार्य व्यस्तता के कारण उनके दर्शन नहीं होते तो लोगों के दिलों में एक अजीब-सी छटपटाहट होने लगती। उसे केवल वे मुस्कुराती हुई आँखें ही शांत कर सकती थीं। जब तक वे आँखें ऊपर नहीं उठ जातीं तब तक उनके सामने खड़े व्यक्ति वहाँ से पीछे हटने का मानस ही नहीं बना पाते। बाल-वृद्ध, महिला-पुरुष सभी को बाँधे हुए थी वह दृष्टि।

लोग कहते हैं कि उन आँखों में शनि विराजमान था। इसलिए उस तेज के समक्ष घोर से घोर विरोधी भी टिक नहीं सकता था। ज्योतिष की दृष्टि से क्या था और क्या नहीं था, मैं नहीं जानती, पर इतना जानती हूँ कि उन तेजस्वी आँखों के समक्ष सामने वाला उसी प्रकार निस्तेज हो जाता जिस प्रकाश सूर्य के आने पर अन्य ग्रह-नक्षत्र। गुरुदेव की उन तेजस्वी और अमृतमयी आँखों से अभिभूत और पराभूत होने के अनेक प्रसंग हैं।

एक बार समाज के कुछ लोग किसी बात को लेकर विद्रोही बन गए। उनके मन में कुछ संदेह थे और कुछ पूर्वाग्रह भी थे। संदेहों और पूर्वाग्रहों के कारण वे खुले विरोध पर उत्तर आए। उनकी ओछी हरकतों को भी गुरुदेव ने सहज भाव से बर्दाशत कर लिया। उनके इस्पाती मन पर कोई असर नहीं हुआ तो विरोधी लोग बौखला उठे। एक दिन वे समूह बनाकर प्रवचन सभा में पहुँचे और बोले—हमारे कुछ प्रश्न हैं। प्रवचन सुनने हजारों लोग आए हुए थे। प्रवचन में किसी भी तरह का व्यवधान गुरुदेव को अभीष्ट नहीं था। उन्होंने दृढ़ता के साथ कहा— 'प्रवचन के बीच प्रश्नोत्तरों का क्रम उचित नहीं है, जिनको कुछ पूछना हो वे अन्य समय लें। मैं पूरा समय दे सकता हूँ। विरोधी मानसिकता वाले उन युवकों ने

गुरुदेव के पास जाने की पूरी तैयारी कर ली और लिखित होमवर्क भी कर लिया ताकि कोई वात भूल न जाए। पूरे जोश-खरोश के साथ वे निश्चित समय पर गुरुदेव के पास पहुँचे और वंदना कर सवके सब मौन वैठ गए।

गुरुदेव ने मौन तोड़ते हुए कहा– "वोलो क्या कहना है ?" वीसों युवक वहुत कुछ कहने के उद्देश्य से आये थे, पर गुरुदेव के निकट बैठकर ज्योंहि उनकी नजरों में झाँका, जैसे वे सबकुछ भूल गए। चाहकर भी उनमें से एक भी व्यक्ति एक शब्द तक नहीं वोल पाया। वे सवके सब एक-दूसरे की ओर झाँकने लगे। चारों ओर मौन सन्नाटा छा गया। अपने अंत:करण में संकल्पों-विकल्पों का तूफान लेकर आने वाले वे क्रांतिकारी युवक उन जादुई आँखों को देखते ही स्तम्भित-से हो गए।

एक वार एक नेत्र विशेषज्ञ गुरुदेव की आँखों की जाँच करने आया। उन आँखों की गहराई में झाँकने के वाद वह विनोद के स्वरों में बोला– "किसी और की आँख देखनी है तो पहले ही दिखा दो, वरना इन आँखों के तेज को देखने के वाद मेरी आँखें चुँधिया जाएँगी तथा मैं और आँखों को नहीं देख पाऊँगा।"

गुरुदेव कुशल अनुशास्ता थे। कुशल अनुशास्ता वह होता है जिसमें कठोरता के साथ-साथ कोमलता का समावेश हो। पूज्य गुरुदेव की आँखों में इस विरोधी युग्म का अद्भुत् समावेश था। उनके मन की कठोरता और कोमलता का दर्शन उनकी आँखों में ही हो जाता था। वाणी को तो कभी-कभी ही मुखर होने का अवसर मिलता था। कहीं कुछ अनुचित होते ही वे आँखें ऐसी फिरती कि सामने वाला वहीं थरथरा जाता अन्यथा करुणा, वात्सल्य और स्नेह की ऐसी अजस्र धारा प्रवाहित होती कि व्यक्ति उसी में सरावोर हो जाता। गुरुदेव की पावन सन्निधि में रहने वालों को उन आँखों के दोनों ही रूप देखने को मिलते थे।

आचार्य महाप्रज्ञ भी कई वार फरमाते है कि गुरुदेव की दृष्टि फिरती तो ऐसी फिरती कि *जीना दूभर हो जाता और वात्सल्य उड़ेलती तो इतना कि तीनों लोक के सुख भी न्यून लगने* लगते। उनके वात्सल्यमय रूप का चित्रण करते हुए आदरास्पद महाश्रमणी जी ने भी अपने गीत में लिखा है–

"करुणा री है झील नयन इमरत वरसावै रे।"

वस्तुत: गुरुदेव का गुरु और अनुशास्ता का रूप उनकी आँखो में ही निहित था। कवि की ये पंक्तियाँ उनके इसी रूप को उजागर करती हैं–

"एक नयन में संजीवन था, एक नयन में हलाहल।
जितना सुदृढ़ वाह्यानुशासन, उतना था अंतर कोमल॥"

उस अनुपम विलक्षण दृष्टि को नमन ! नमन ! नमन !

आचार्य श्री तुलसी एक पवित्र आत्मा है। उन्होंने मानवता के लिए अब तक जो भी कुछ किया और करते है, वह अभिनन्दनीय है। आज अपेक्षा इस बात की है कि लोग आचार्य श्री के बताए हुए मार्ग पर चलें, उनके विचारों को जीवनगत करने से ही सम्पूर्ण राष्ट्र का कल्याण सम्भव है। आज समूचे विश्व में भौतिक साधनों की प्राप्ति के लिए जो अंधी दौड़ चल रही है, उसके सम्मुख आचार्य श्री ने लालबत्ती दिखाकर सच्चा सुख कहां है, इसके लिए 'अणुव्रत' के माध्यम से मार्गदर्शन किया है।

-रविशंकर महाराज

कालजयी व्यक्तित्व : गुरुदेव तुलसी

☐ सरोज दूगड़ ☐

भूतल पर अनेक पुष्प खिलते हैं और मुरझा जाते हैं । नीले गगन में असंख्य तारे टिमटिमाते हैं और फिर विलीन हो जाते हैं । उदय और अस्त, यही तो दुनिया का क्रम है । इसी से यह संसार सूत्र बंधा हुआ है । व्यक्ति आता है और चला जाता है लेकिन कुछ ऐसे व्यक्तित्व भी होते हैं, जो अपने व्यक्तित्व की अमिट छाप लोगों के दिलों पर छोड़ जाते हैं । ऐसे ही विरले व्यक्तित्व के धनी थे गुरुदेव श्री तुलसी ।

गुरुदेव का व्यक्तित्व एक ऐसा व्यक्तित्व था । जिसके कण-कण से परिमल प्रस्फुटित होकर विश्व के वातावरण को अपनी सौरभ से सुरभित कर रहा है । जिनकी अनन्त रश्मियाँ धरती को अपने प्रकाश से आलोकित कर रही है ।

साधना के शिखर पुरुष गुरुदेव श्री तुलसी का व्यक्तित्व करुणा का महासमन्दर था । उनका जीवन व्यवहार निश्चय का निकुञ्ज था । गुरुदेव जितने व्यवहारिक थे उतने ही आत्मोन्मुखी भी थे ।

गुरुदेव में रवि-सी प्रखर तेजस्विता थी तो शशि-सी सीतलता, व्योम-सी विशालता थी, तो धरा-सी क्षमाशीलता और जलधि-सी गम्भीरता थी ।

गुरु ब्रह्मर्षि थे, कारण उन्होंने साधना के नये-नये प्रयोगों का आविष्कार किया । गुरुदेव राजर्षि थे कारण वे विशाल तेरापंथ धर्मसंघ के अनुशास्ता थे । गुरु देवर्षि थे— कारण उन्होंने ज्ञान का प्रकाश सम्पूर्ण मानवता में बाँटा था ।

गुरुदेव श्री तुलसी का जीवन आनन्द और शांति का अविरल स्रोत था । उनके निकट संपर्क में आने वाला व्यक्ति आनन्द-रस से आप्लावित हुए बिना नहीं रहता था । प्रत्येक व्यक्ति यही सोचता कि यदि क्षणमात्र के लिए ही गुरुदेव की कृपा दृष्टि उन पर हो जाए तो उनका सारा जीवन आनन्द के साथ व्यतीत होगा और यह एक विश्वास ही नहीं, अपितु बहुत से व्यक्तियों ने इस बात को साक्षात् अनुभव भी किया ।

गुरुदेव की एकाग्रता बचपन से ही सधी हुई थी । बचपन में ही २० हजार पद्यों को कंठस्थ कर लिया । एक दिन में ५० से लेकर १०० तक संस्कृत श्लोकों को कंठस्थ करना उनकी विशिष्ट एकाग्रता शक्ति का परिचायक था ।

गुरुदेव जीवन शिल्पी थे उन्होंने अपने कर-कमलों से न जाने कितने जीवन प्रस्तरों को तराशने में अपनी सृजनात्मक शक्ति का भरपूर उपयोग किया ।

गुरुदेव एक कुशल अनुशास्ता, समाज सुधारक, नारी उद्धारक, मानवता के मसीहा, जैन दर्शन के मर्मज्ञ व उच्च कोटि के चिन्तक व साहित्यकार थे ।

गुरुदेव की कुशल अनुशासना व नेतृत्व को पाकर ये तेरापंथ धर्मसंघ आज राष्ट्रीय ही नही अन्तर्राष्ट्रीय जगत मे भी ख्याति को प्राप्त कर चुका है ।

हम सभी बडे ही सौभाग्यशाली है कि हमे तेरापंथ धर्मसंघ मिला और हमने उस धरा पर जन्म लिया जिस धरा पर चन्देरी के चॉद, वंदना माँ के लाल अणुव्रत अनुशास्ता गुरुदेव श्री तुलसी को जन्म देने का गौरव प्राप्त हुआ ।

रोशनी जिनके साथ चलती थी, वक्त की नब्ज पहचानने मे जो सिद्धहस्त थे । ऐसे गुरु श्री तुलसी के बारे मे जितना भी कहा जाए, लिखा जाए उतना ही कम है । अन्त में मै इन पंक्तियो के द्वारा उस महाप्रकाश पुज को श्रद्धासुमन अर्पित करती हूँ :

यूं तो सभी मृत्यु के राही है
एक दिन मर जाते है
धन्य वे ही महापुरुष होते है
जो मरकर भी अपना नाम अमर कर जाते है ।

सुदूर दृष्टि वाले संत

❑ कुन्दन बागरानी ❑

अणुव्रत अनुशास्ता राष्ट्र संत श्री तुलसी के आकस्मिक अरिहन्तशरण होने के दुखद संदेश ने तेरापंथ संघ को ही नहीं अपितु पड़ौसी देशों सहित समग्र भारत राष्ट्र को शोक संतप्त बना दिया है । यह व्यापक प्रभाव आपकी राष्ट्र संत की सीमाओं को पार कर गया है । इतनी व्यापक श्रद्धा का मूल कारण मात्र गुरुदेव का मानवतावादी दृष्टिकोण ही है, फलस्वरूप जैन अजैन सभी के आप श्रद्धास्पद रहे । आपने धार्मिक कट्टरता एवं सांप्रदायिक सीमाओं से परे मानव मात्र के कल्याण का सपना संजोया था ।

गुरुदेव तुलसी मात्र तत्ववेत्ता ही नहीं अपितु विलक्षण दृष्टि वाले सुदूरदर्शी एवं भविष्य दृष्टा थे तभी तो आपने लगभग पचास वर्ष पूर्व अणुव्रत आंदोलन का शुभारंभ करके आजकल के नैतिक तथा चारित्रिक अवमूल्यन का पूर्वाभास सहज पा लिया था । विभिन्न वर्गो के लिए सुविचारित अणुव्रतों की अनुपालना ही वर्तमान में व्याप्त विभीषिका से त्राण दिलाने का एकमात्र समुचित समाधान है ।

विधि की विडंबना के फलस्वरूप गुरुदेव के प्रत्यक्ष मार्गदर्शन के अभाव की इस विषम वेला में अणुव्रत कार्यकर्ताओं को अणुव्रत आंदोलन को वांछित आयाम तक पहुंचाने के लोक कल्याणकारी लक्ष्य को पूर्ण मनोबल तथा दृढ़निश्चय के साथ आज के दिन दोहराना चाहिए । गुरुदेव की आंतरिक भावना के अनुरूप हमारा यह सकल्प गुरुदेव के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगा ।

गंगापुर जिला-भीलवाड़ा (राजस्थान)

सिद्ध योगी गुरुदेव श्री तुलसी

मुनि किशनलाल

विलक्षण जन्म और महाप्रयाण

गुरुदेव श्री तुलसी के बारे में लिखने का प्रयास करते ही कलम ठिठक जाती है। उनके विराट व्यक्तित्व को कैसे अक्षरों में आबद्ध किया जाए। दूसरी ओर उनका विशाल व्यक्तित्व और विराट कर्तृत्व के दृश्य आँखों के सामने तैरने लगते हैं। तब कैसे उन्हें एक लघु निबंध में आलेखित किया जाए।

विलक्षण था उनका जन्म और अति बिलक्षण था उनका महाप्रयाण। मातुश्री वंदना ने यह कल्पना भी नहीं की थी कि उसके उदर में आने वाली दिव्य चेतना किसी विराट उद्देश्य को लेकर अवतरित हुई है। सामान्य बालकों की तरह बालक तुलसी किशोरावस्था को उपलब्ध हो रहा था। संयोग से पूज्य आचार्य श्री कालुगणी का आगमन लाडनूं में हुआ। बालक तुलसी उनकी दिव्य देह, भव्य मुख, करुणा भरी आँखों में झाँककर अपने आपको धन्य अनुभव कर रहा था। गुरुदेव की अमिय झरती आँखों और वात्सल्य उड़ेलता कृपासिक्त वरदहस्त से जब आशीर्वाद उतरता तब तुलसी दूर खड़ा अपलक उन्हें निहारता रहता था। बालक का मन गुरुकृपा से तृप्त नहीं हो पाता। गुरुदेव का वह चुम्बकीय व्यक्तित्व अनायास ही तुलसी के अंत:करण को आकर्षित कर रहा था।

पूजी महाराज के बाद कौन

गुरु के प्रति संपूर्ण समर्पित माँ वंदना का हृदय बार-बार उनकी गुण गरिमा में बहता रहता था। जिज्ञासा बालक का सहज स्वभाव है। प्रश्न-प्रतिप्रश्न से अपनी जिज्ञासा को समाहित करता रहता था। एक दिन बालक ने माँ के सामने अजीब प्रश्न उपस्थित कर दिया—माँ ! पूजी महाराज के बाद पूजी महाराज कौन बनेगा ? अर्थात् आचार्य श्री कालुगणी के बाद आचार्य कौन बनेगा ? नाराजगी अभिव्यक्त करते हुए माँ ने कहा—पगले ऐसा कोई सवाल होता है। मुँह हाथ पर धरते हुए—पूजी महाराज क्रोड वर्ष तक राज करें। बालक तुलसी सकुचाया, चुप हो गया, किन्तु समझ में नहीं आया कि मैंने क्या कह दिया। ऐसे सवाल कोई ऐसे ही नहीं करता है। अंतर मानस में सुरक्षित संस्कार ऐसी अभिव्यक्ति अनायास करवा लेते हैं। ऐसी घटनाएँ चाहे वे आचार्य भारीमल जी ने रायचंदजी को

कहा–मुझे उत्तराधिकारी की आवश्यकता नही, तुम ही जीतमल को दीक्षित करो । जयाचार्य ने माणक गणी के लिए कहा–लालजी ओघे (रजोहरण) का बोझ तो लेकर चल सकता है । चाहे फिर आचार्यश्री तुलसी ने मुनि नथमल को पूछा–तुम मेरे जैसे बनोगे ? आप बनाओगे तो बन जाऊँगा । मुदित मुनि की ओर भी गुरुदेव ने स्पष्ट संकेत दे दिया । क्या होता है क्या करते है यह तो आचार्य महाप्रज्ञ जानें ।

सब अपने हैं

बालक तुलसी दीक्षित हुए । अपना अध्ययन कर रहे थे, साथ ही अध्यापन का कार्य भी संभाल लिया । बड़े भ्राता मुनिश्री चम्पालालजी ने मुनि तुलसी को सलाह दी कि तू अपना अध्ययन तो कम करता है दूसरों के अध्ययन मे ध्यान ज्यादा देता है । अपना अध्ययन किया कर । दूसरे कौन है ये अपने ही है । इनका विकास अपने संघ का विकास है । कितनी दूर दृष्टि थी उस समय उनकी, उस महानता का परिणाम है आचार्य महाप्रज्ञ ।

छोटी अवस्था के महान आचार्य

तेरापंथ धर्मसंघ वटवृक्ष की तरह विशाल है । उसका श्रमण-श्रमणी परिवार विशालतम है । एक आचार्य की अनुशासना मे चलने वाला अनुशासित और विनीत शिष्य समुदाय अपनी शिष्ट पहचान रखता है । अष्टम आचार्य कालुरामजी का अतिशयपूर्ण तेजस्वी व्यक्तित्व का अनन्य अनुग्रह मुनि तुलसी पर उतरता रहता था । गुरु शिष्य का परस्पर आत्मीय भाव अद्वितीय था । आचार्य तुलसी जब कभी गुरुदेव कालुगणी की स्मृति और संस्मरणों का उल्लेख करते तब सुनने वाला उस भाव अवस्था मे बहने लगता था ।

आचार्य कालुगणी के हाथ से उत्पन्न वेदना अन्ततः प्राणलेवा ही सिद्ध हुई । अनशन एवं निर्वाण के तीन दिन पूर्व अपना उत्तराधिकार मुनि तुलसी को सौपा । बाईस वर्ष के किशोर पर इतने बड़े संघ का उत्तरदायित्व सौपते समय कभी गुरुदेव के मुख से ऐसा कोई शब्द नहीं निकला कि यह अभी छोटा है और न आचार्य तुलसी ने अपनी अवस्था को लघु समझा । सहजता से उन्होने गुरु के गौरव पद को स्वीकार ही नहीं किया, बड़े विलक्षण ढंग से अपनी अनुशासना की छाप छोड़ी । मंत्री मुनि मगनलालजी का वह लाक्षणिक वाक्य–आचार्य तुलसी बाईस वर्ष के नहीं ८२ वर्ष के है । गुरुदेव कालुगणी के ६० वर्ष और स्वयं के २२ वर्ष अर्थात् ८२ वर्ष के आचार्य हमे उपलब्ध हुए है । मंत्री मुनि वय से वृद्ध थे फिर आचार्य तुलसी जैसे नौजवान आचार्य की उपासना दोनो हाथ जोड़े विनम्रता से करते तब ऐसा लगता मानों वे सबको शिक्षा दे रहे हों । मूल से ही कोई आचार्य को छोटा समझ अवहेलना न करे ।

सहज विलक्षणता

अनंत पुण्य के पुंज आचार्य का धर्मचक्र चक्रवर्ती की तरह स्वत: गतिशील रहता था। जहाँ भी वे गए उनके अतिशयपूर्ण व्यक्तित्व ने छाप छोड़ी। अनुयायी भक्त बने, अपने गुरु की गरिमा करे, इसमें कोई आश्चर्य नहीं किन्तु विरोधी लोग भी तेरापंथ के लघु आचार्य के बारे में मिथ्या कल्पनाएँ करते थे। वे सब स्वल्पवत् क्षीण हो गई। वे इतनी प्रखरता से जन-मन के मानस पर छा गए। वे घटनाएँ ब्यावर की थीं। बीकानेर के रागड़ी चौक की थीं। अल्प उम्र के आचार्य ने जिस सहिष्णुता, उदारता और विवेक का कार्य किया, उसकी कोई मिशाल नहीं हो सकती। तत्कालीन महाराज गंगासिंहजी ने अपनी परिषद में कहा—एक नौजवान आचार्य ने हमारी शान रख दी। आचार्यश्री की महान उदारता ने जनता के मन और मानस को जीत लिया और एक महान आचार्य के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया।

संघ के विकास की प्रथम दृष्टि

आचार्य तुलसी ने अपने प्रथम वक्तव्य में संघ के विकास की दृष्टि को विश्लेषित किया। साधुओं की तरह साध्वियों का विकास अत्यंत अपेक्षित है। धर्मसंघ में साध्वियों की संख्या साधुओं से तिगुनी है उसके विकास के बिना संघ के विकास की कल्पना कैसे की जा सकती है। आचार्य श्री तुलसी स्वयं साध्वियों को अध्ययन करवाते। उन्होंने ११ वर्ष तक निरंतर संघ की क्षमता का विकास किया। उनकी बौद्धिक क्षमता को विकसित किया। तब उन्होंने भारत की राजधानी दिल्ली एवं पूरे देश की पदयात्रा कर अणुव्रत आंदोलन का बिगुल बजाया। उन्हें स्पष्ट प्रतिभाषित हो रहा था कि आजाद भारत को सबसे अधिक आवश्यकता चरित्र और आत्मविश्वास की है, गाँव-गाँव, पाँव-पाँव जाकर गरीब की झोंपड़ी से लेकर राष्ट्रपति भवन तक अणुव्रत एवं चरित्र का संदेश पहुँचाया।

प्रेक्षाध्यान-जीवन विज्ञान

व्रत में चेतना स्थिर रहे इसके लिए प्रेक्षाध्यान के प्रयोगों का आविष्कार किया गया। नई पीढ़ी संस्कारी और विकासशील बने। बचपन में ही उन्हें जीवन विज्ञान का प्रायोगिक प्रशिक्षण दिया जाए। अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान, जीवन विज्ञान की यह त्रिवेणी राष्ट्र के नव निर्माण में अभूतपूर्व सहयोग कर रही है। उनकी यह दूरदृष्टि ही थी कि समय से पूर्व उन्होंने यथार्थ को जाना और उससे अनुरूप कार्य किया। राष्ट्र की चेतना में प्राण भरने का नया प्रयास प्रारम्भ किया। आज विश्व में प्रेक्षाध्यान और जीवन विज्ञान की भूमिका से शिक्षा, चिकित्सा एवं व्यवसाय-प्रबंधन में अपनी विशिष्टता सिद्ध कर रहा है।

सिद्धयोगी का महाप्रयाण

गुरुदेव ने प्रतिक्षण जागृत एवं जीवन्त जीवन जीया है। उनका हर कार्य कलात्मक और अलौकिक होता था। उनका बैठना, उठना, खाना, सोना, जागना, बोलना, गाना प्रत्येक कर्म की शैली अद्वितीय थी। किसी कोण से ही उन्हें परखा जाए। करोड़ों-करोड़ों व्यक्तियो मे वे अप्रतिम थे। उनका महाप्रयाण विलक्षण था। जो निश्चय किया, उसके अनुरूप परमगति को उपलब्ध हो गए। स्वस्थ, प्रसन्न, निर्भय, निर्ममत्व, वीतरागी महापुरुष की तरह अन्तिम क्षण तक संघ का हित—चिन्तन करते जगत को विस्मयकारी दृश्य दिखा गए। शताब्दियों में ऐसी विलक्षण चेतना कभी-कभी आती है और युगो-युगों के लिए अपनी विशिष्टता जगत मे छोड़ जाती है। हम केवल अनन्य श्रद्धा से उनके कार्यों के प्रति वंदन ही कर सकते हैं। प्रभु! आपने बहुत उपकार किया। कमी रही तो वह हमारी ही है कि जितना ग्रहण करना चाहिए वह नही कर पाए। उनकी प्रथम वर्षी पर भावभरा वंदन। आप सदैव संघ के साथ रहे और आज भी आपकी उपस्थिति हमारे प्राणो को आंदोलित कर रही है।

● श्रद्धांजलि

कर्मठ एवं दूरदर्शी व्यक्तित्व

आचार्य तुलसी जी से मेरा संपर्क उनके आचार्य-काल के प्रारंभिक वर्षों में ही हो गया था। वे एक प्रतिभावान व्यक्ति थे। उन दिनों बाल-दीक्षा के प्रसंग को लेकर मेरा उनका संपर्क कुछ निषेधार्थक रहा था पर बाद के दिनों मे बाल-दीक्षा के प्रसंग कम ही आये। उसके बाद तो कई बार मुझे आचार्यश्री के साथ चर्चाओं में उनकी कर्मठता और दूरदृष्टि का परिचय मिला। आचार्यश्री ने अपने दीर्घ आचार्य-काल में जैन समाज को, खासकर अणुव्रत आंदोलन के जरिये, एक नई दिशा देने का प्रयत्न किया।

जैन विश्वभारती आचार्य तुलसी की एक अन्य उपयोगी देन है। उसके जरिये अध्ययन, शोध, चिन्तन, प्रकाशन आदि का अच्छा काम हो रहा है। हर संगठित धर्म-संप्रदाय मे अक्सर औपचारिकता, कर्मकांड आदि का महत्त्व बढ़ जाता है, धर्म के मूल सिद्धांत पीछे पड़ जाते है। जैन विश्वभारती इस कमी को दूर करने का माध्यम हो सकता है। उनकी स्मृति इन सद्प्रवृत्तियो के जरिये सदा बनी रहेगी।

—सिद्धराज ढड्ढा
गांधीवादी एवं सर्वोदयी
जयपुर, (राज०)

आचार्य श्री तुलसी

शक्तिपुंज महामानव

साध्वी रचनाश्री



तेरापंथ धर्मसंघ अपनी शानी का निराला धर्मसंघ है। इस धर्मसंघ में एक आचार्य की परम्परा का कुशल नेतृत्व लगभग २३८ वर्ष से लगातार अविच्छिन्न रूप से चला आ रहा है। तेजस्वी, यशस्वी व वर्चस्वी आचार्यों ने इस धर्मसंघ को युगानुरूप मार्गदर्शन प्रदान कर संघ को शिखर की ऊँचाई प्रदान की है। आज संख्या से छोटा-सा दिखने वाले यह धर्मसंघ पूरे विश्व में प्रमुख पहचान बनाए हुए है। प्रमुख पहचान बनाने में आचार्य श्री तुलसी का कर्तृत्व आज जन-जन की जुबान पर नाच रहा है। तेरापंथ धर्मसंघ के क्षितिज पर आचार्य श्री तुलसी एक अलौकिक, महाविभूति सम्पन्न, ज्योतिर्मय आचार्य थे। उन्होंने प्रकाश में स्वयं को ही प्रकाशित नहीं किया अपितु पूरे विश्व को जीवनभर प्रकाशित करते रहे।

अनाग्रही व्यक्तित्व

आज विश्व के प्रतिष्ठित से प्रतिष्ठित व्यक्ति अपने आग्रह को प्रमुख रखकर अनेक ज्वलंत समस्याएँ पैदा कर देश की छवि को धुँधला बना रहे हैं। ऐसी परिस्थिति में देश के प्रबुद्ध विचारकों, चिंतकों एवं मनीषियों ने आचार्य श्री तुलसी को एक अनाग्रही महामानव के

रूप में देखा, जिसका ज्वलंत उदाहरण था रायपुर का 'अग्नि परीक्षा कांड' । आपके व्यक्तित्व को अनेकानेक आरोपों से आरोपित किया जा रहा था । हिंसा, तोड़फोड़ का आलम्बन लेकर विरोधी व्यक्ति तरह-तरह की समस्याएँ पैदा कर रहे थे । तब आपने कहा—मैं साहित्यकार व धर्माचार्य बाद मे हूँ सबसे पहले मै एक संत हूँ । एक संत का हृदय दया, क्षमा, करुणा, प्रेम आदि गुणों से आपूरित होता है । इसलिए मै नहीं चाहता कि मेरी एक पुस्तक को लेकर ऐसी विकट परिस्थिति पैदा की जाए । अत: मै अपनी पुस्तक वापिस ले रहा हूँ । आपका स्पष्ट चिंतन था कि "जो हमारा हो विरोध, हम उसे समझें विनोद" । इतने ऊँचे विचारो से यह स्वतः ही स्पष्ट होता है । कैसा अद्भुत था आपका अनाग्रही व्यक्तित्व ।

युग प्रवर्तक, युग पुरुष

आप बीसवीं सदी के युग प्रवर्तक, युग पुरुष बनकर सबके सामने आए । आपके विचारों में कभी रूढ़िवादिता नहीं थी । आपने अपनी सोच को सर्वदा ऊँचाई प्रदान की । आप नही चाहते थे कि धर्माचरण केवल एक पुरानी रूढ़ि बनकर ही रहे । आपने आगम एवं मर्यादा को सामने रखते हुए अध्यात्म को सदैव शिखर-सी ऊँचाई व सागर-सी गहराई प्रदान की । आपने युग की नब्ज को पहचानते हुए कहा—

कोरी आध्यात्मिकता युग को त्राण नहीं दे पाएगी,
कोरी वैज्ञानिकता युग को प्राण नहीं दे पाएगी,
दोनों की प्रीत जुड़ेगी, युगधारा तभी मुड़ेगी ।

जहाँ अध्यात्म व विज्ञान दोनों का समन्वय स्थापित होता है वह धर्मसंघ स्वत: ही प्राणवान धर्मसंघ बन जाता है । आप एक प्राणवान धर्मसंघ के युग प्रवर्तक, युग पुरुष, युग प्रधान आचार्य कहलाए ।

शक्तिपुंज महामानव

शक्तिशाली बनने का स्वप्न तो प्रत्येक इंसान लेता है । किन्तु शक्ति का जागरण हो यह सबके अपने हाथ की बात नही है । शक्ति सम्पन्न वही बनता है जिसका आभामंडल पवित्र हो, जो दृढ़ संकल्प व एकनिष्ठ हो । आचार्य तुलसी एक शक्तिशाली, महापुण्यपुंज थे । आपने स्वशक्ति को अल्पायु में ही जागृत किया । मात्र ११ वर्ष की उम्र में आध्यात्मिक शक्ति जागृत कर मुनि जीवन स्वीकार किया । मुनि जीवन के बाद मात्र ११ वर्ष मे आपने वह शक्ति प्राप्त की जिस शक्ति के जागरण से आप संघ के सर्वोच्च शिखर आचार्य पद पर पदासीन हुए । तत्पश्चात् आपने अपनी जागृत शक्ति से हजारों-हजारों लोगों को उनकी सुप्त शक्ति के जागरण हेतु आह्वान किया । आपने देखा कि अनेक व्यक्ति ऐसे है जो शक्ति

सम्पन्न होते हुए भी अपनी शक्ति और श्रम का उपयोग नहीं कर रहे हैं । आपने कार्यकर्त्ता शक्ति जागरण का बोध पाठ दे कार्यकर्त्ताओं की एक लम्बी कतार तैयार कर दी । फलत: तेरापंथ धर्मसंघ के सैंकड़ों-सैंकड़ों कार्यकर्त्ता आज अपनी कार्यक्षमता का विविध दिशा में उपयोग कर रहे हैं । आपने अपनी अंतरंग परिषद साधु-साध्वियों के भीतर भी अभिनव शक्ति का संचार किया । परिणामत: आज अनेक साहित्यकार, इतिहासकार, आगमवेत्ता, हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, अंग्रेजी के ज्ञाता हो गए । आज आचार्य श्री महाप्रज्ञजी, युवाचार्य, महाश्रमण, संघ महानिदेशिका महाश्रमणी साध्वीप्रमुखाश्री कनकप्रभाजी जैसी महान विभूतियाँ इसके प्रमुख उदाहरण के रूप में हमारे सामने हैं । गुरुदेव ने स्वयं की शक्ति को जागृत किया ही किन्तु अनेकानेक व्यक्तियों की शक्ति को जागृत कर शक्तिपुंज महामानव बन गए ।

अणुव्रत अनुशास्ता

सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के राज्य में सर्वत्र प्रसन्नता का साम्राज्य था । घी, दूध की नदी बहती थी । खुले घर, कहीं कोई ताला नहीं । मानों चोरों का प्रवास कोसों दूर था । सर्वत्र सुख ही सुख । दुख का नामोनिशान नहीं । प्रजा व सम्राट सभी सुखी । यह देखकर एक चीनी यात्री के भीतर जिज्ञासा पैदा हुई । कहीं अन्याय व भ्रष्टाचार नहीं– यह कैसे संभव है ? जिज्ञासा को समाहित करने वह महामंत्री चाणक्य के पास पहुँचा । चाणक्य ने चीनी यात्री को आसन दिया । यात्री बैठ गया । तभी चाणक्य ने पहला दीपक बुझाया, दूसरा दीप जलाया । वार्ता आरंभ हुई । यात्री ने पहला दीपक बुझाने व दूसरा जलाने का कारण जानना चाहा । महामंत्री जी ने प्रश्न को समाहित करते हुए कहा—प्रथम दीपक मैं राजकीय कार्य के समय उपयोग में लेता हूँ । अभी वर्तमान में आपसे व्यक्तिगत वार्तालाप कर रहा हूँ । तो भला मैं राजकीय तेल का उपयोग कैसे कर सकता हूँ । चीनी यात्री को तत्काल स्वयं के प्रश्न का उत्तर प्राप्त हो गया । जिस देश के महामंत्री का चरित्र इतना उन्नत है तो वह देश निश्चित ही उन्नति कर सकता है । आचार्यश्री तुलसी ने मानव के गिरते हुए चारित्रिक पतन को देख जन-जन का जीवन चरित्र की सुवास से सुवासित हो, इसलिए देश की आजादी के साथ ही अणुव्रत आंदोलन का प्रवर्तन कर जन-जन में नैतिक निष्ठा को जागृत किया । आप अपने मिशन को लेकर झोंपड़ी से राष्ट्रपति भवन तक पहुँचे । सर्वत्र आपके मिशन का स्वागत किया गया । सभी ने आपके इस नैतिक आंदोलन को सराहा । अस्तु ! अणुव्रत अनुशास्ता की इस प्रथम वार्षिक पुण्यतिथि पर सभी एक जुट होकर यह संकल्प करें कि अणुव्रत की गूँज घर-घर पहुँचाएँगे, इसी दृढ़ संकल्प के साथ—

सब मिल व्रत का थाल सजाएँ, जीवन बगियाँ को महकाएँ
संकल्पों के साथ चलो अब, घर-घर अणुव्रत गीत गुँजाएँ ।



भगवान महावीर ने क्षत्रिय कुल में जन्म लिया, किन्तु उन्होंने सम्पूर्ण मानव जाति का कल्याण किया है। महावीर की वाणी से ही हम सबका कल्याण है। भगवान की वाणी मिथ्या, माया और अहंकार से रहित है। आचार्य श्री तुलसी का विचार हमेशा एकता के लिए रहता है। आज उनका प्रयास अणुव्रत के रूप में सफल हो रहा है। आगे भी सफल होना चाहिए।

-आचार्य देशभूषण

अणुव्रत अनुशास्ता को तलाशती लाखों निगाहें

❑ साध्वी संघप्रभा ❑

जन्म और मृत्यु प्रकृति का शाश्वत् नियम है, इसे रोका नहीं जा सकता, किन्तु कुछ ऐसे विलक्षण महापुरुष होते हैं जिनका जीवन उन अनन्त श्रेष्ठताओं का पूंजीभूतस्वरूप होता है जो जन्म-मरण से अतीत होकर संसार के लिए चिरंतन प्रेरणा स्त्रोत बन जाते हैं । सच ही कहा है किसी कवि ने—

हजारों साल नर्गिस अपनी बेनूरी पे रोती है,
तब कहीं होता है, चमन में दीदावर पैदा ।

गुरुदेव तुलसी एक ऐसे ही विलक्षण महापुरुष थे जिन्होंने अपने महिमामण्डित व्यक्तित्व और कालजयी कर्तृत्व से पूरी मानव जाति को ऊँचाइयाँ प्रदान कीं । धर्म और अध्यात्म के क्षेत्र में उनके अवदान सदैव स्मरणीय रहेंगे । गुरुदेव तुलसी मानव संस्कृति के महान् पुरोधा थे । उनका स्मरण मानव संस्कृति के प्रगतिशील इतिहास का स्मरण है । उनका व्यक्तित्व और कर्तृत्व इतना विराट था कि जिसने उनके अस्तित्व को व्यष्टि से समष्टि का प्रतीक बना दिया । गुरुदेव श्री तुलसी के अवतरण का अर्थ है—प्रकाश का अवतरण, उल्लास का अवतरण, विश्वास का अवतरण, विकास का अवतरण और एक नए इतिहास का अवतरण ।

वस्तुत: ऐसे महामानव का अवतरण जहाँ अपने आपमें एक अलौकिक घटना है तो उनका महाप्रयाण भी एक चौंका देने वाली घटना है । एक ऐसी घटना, जिसने देश और दुनिया के उन तमाम लोगों की धड़कनों को थमा दिया जो सत्य और अहिंसा के जरिए शांतिपूर्ण विश्व की संरचना में विश्वास करते हैं । बीसवीं सदी का अन्तिम छोर और इक्कीसवीं सदी की उगने वाली पहली भोर की यह सन्धिवेला, जहाँ चारों ओर युग परिवर्तन की जबरदस्त लहर चल रही है ऐसे समय में गुरुदेव तुलसी जैसे मानवतावादी संत का चले जाना संपूर्ण मानव जाति के लिए ऐसा महाशून्य है जिसे सदियों तक भर पाना अत्यन्त कठिन है । इस विरह वेदना से व्याकुल मानवीय हृदय की पीड़ा कवि की इन मार्मिक पंक्तियों में अभिव्यक्त हो उठती है—

ए गुलची ! तुझसे यह कैसी नादानी हुई,
फूल वो तोड़ा, जिससे गुलशन भर में वीरानी हुई ।

वही है जमीं, वही है आसमां, वही है मौसम, वही है फिज़ा फिर भी न जाने क्या जादू था उस शख्सियत मे, जिसके बिना सबकुछ सूना-सूना और बेजान-सा लगता है । हिंसा, अपराध, आतंक और तनाव की त्रासदी भोगती लाखों निगाहें अपने उस शान्ति मसीहा को तलाश रही है जिसकी दो आँखो में लाखों आँखो के सपने अंजाम लेते थे । जिसने ऊँच-नीच, जाँत-पाँत, गरीब-अमीर, अपने-पराए के भेद से मुक्त होकर वस्तुतः सर्वजन-हिताय, सर्वजन सुखाय प्राणी मात्र के कल्याण के लिए उपदेश दिया । भूतपूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त श्री टी०एन० शेषन के शब्दों में—"गुरुदेव श्री तुलसी अपनी बहुआयामी प्रवृत्तियों से एक प्रभावी जैनाचार्य ही नहीं बल्कि सच्चे अर्थो मे जनाचार्य थे ।" उन्होंने युग की नब्ज को पहचानकर युगानुकूल आयामों से धर्म को युग की रफ्तार के साथ जोड़ा । वस्तुतः यही वह विशेषता है जिसने उन्हें युग-प्रवर्तक के रूप में प्रतिष्ठित किया । आचार्य तुलसी सचमुच महान युग-चिन्तक थे । उनका हर वाक्य प्रगति की प्रेरणा है । उनका हर शब्द अपने आप में विकास का दिव्य संदेश है । उनका हर अक्षर-जागृति का मंत्र है अपेक्षा है । उनकी हर प्रेरणा हमारी अर्चना बन जाए, उनका हर संदेश हमारी साधना बन जाए । उनका हर मंत्र हमारी आराधना बन जाए ।

अध्यात्म समरांगण के इस महान् योद्धा ने आज से करीब ५० साल पूर्व भारतीय स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही अणुव्रत आंदोलन के माध्यम से जो राष्ट्रव्यापी चारित्रिक जेहाद छेड़ा वह उनके चले जाने के बाद भी तब तक कायम रहेगा जब तक कि तेरापंथ का अस्तित्व कायम रहेगा । वर्तमान युग मे मानव के गिरते नैतिक स्तर तथा उपभोक्तावाद के आक्रमण से आहत मानवता की दयनीय दशा को देख उनकी अंतःपीड़ा इन स्वरों में फूट पड़ी—

मानव मानव की मानवता आज बनी असहाय है,
भोगवाद के क्रूर थपेड़ों से वह मूर्च्छितप्रायः है ।
अणुव्रत संजीवनी चेतना लाने के लिए,
जन-जन में नैतिक निष्ठा पनपाने के लिए ।
अणुव्रत है सोया संसार जगाने के लिए ॥

सन् १९२१ में राष्ट्रपिता महात्मा गांधीजी ने इस युग के सात प्रकार के पापों की व्याख्या की थी—(१) सिद्धांतहीन राजनीति, (२) नैतिकताविहीन व्यापार, (३) परिश्रम रहित धनार्जन, (४) आत्मा विहीन सुख, (५) चरित्र रहित ज्ञान, (६) मानवता रहित विज्ञान,

(७) त्याग रहित पूजा। गुरुदेव तुलसी का चिन्तन भी महात्मा गांधी के इन विचारों से काफी प्रभावित था। उन्होंने अपने प्रवचनों, गीतों और साहित्य के माध्यम से जनता का ध्यान बार-बार इस ओर आकृष्ट करना चाहा कि जब तक नैतिकता, चारित्रिक और मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा नहीं होगी तब तक स्वतंत्रता की उपलब्धि महज एक नाटक बनकर रह जाएगी। अध्यात्म शून्य कोरा भौतिक विकास देश के लिए उतना ही घातक सिद्ध होगा, जितना कि बिना नींव का मकान, बिना रीढ़ का शरीर, बिना मूल का वृक्ष और निदान बिना का उपचार। यही वजंह है कि आर्थिक समृद्धि की होड़ में पनपता भ्रष्टाचार ऊपर से लेकर नीचे तक चाहे सामाजिक हो या राजनीतिक-हर महकमे में इस कदर हावी हो गया है कि वह धीरे-धीरे एक लाइलाज बीमारी बनता जा रहा है। समाज में व्याप्त इन अवांछनीय तत्त्वों का मुकाबला करने के लिए अणुव्रत अनुशास्ता ने न केवल स्वयं एक लाख कि०मी० की पदयात्रा कर गरीब की झोंपड़ी से लेकर राष्ट्रपति भवन तक कोने-कोने में व्यक्ति-व्यक्ति की चेतना में अणुव्रत आंदोलन के माध्यम से नैतिक क्रांति का शंखनाद फूँका बल्कि देश के कोने-कोने में अपनी श्वेत सेना की सैंकड़ों टुकड़ियों को भी तैनात कर दिया। भारत के पार अमेरिका, रूस, ब्रिटेन जापान, इंग्लैण्ड, ताईवान, नेपाल-भूटान, फ्रांस, जर्मनी, इटली, कनाडा, कैलिफोर्निया, रोम आदि विदेशों में भी अपने धर्म संदेशवाहकों को भेजकर उन्होंने पश्चिम की भोगवादी संस्कृति से बैचेन लोगों को अध्यात्म की राह दिखाई। समय-समय पर देश के शीर्षस्थ नेताओं से वार्तालाप, गहन चिन्तन-मंथन व संदेशों से संत श्री तुलसी ने भारतीय राजनीति को भी प्रभावित किया।

राष्ट्रीय एकता पुरस्कार, भारत-ज्योति, युग प्रधान, वाक्पति जैसे सम्मानों व अलंकरणों से नितांत निरपेक्ष रहकर मानवता के प्रति निष्काम समर्पित वह मानवता का मसीहा उम्र के अन्तिम पड़ाव तक सदैव गतिशील रहा। ८३ वर्ष की अवस्था में भी जवानों को चुनौती देने वाला उनका उत्साही चेहरा सदैव कमल-सा खिलता रहा, गुलाब-सा सदा महकता रहा।

रवि-सी तेजस्विता, शशि-सी शीतलता, गंगा-सी निर्मलता, सागर-सी गंभीरता, मक्खन-सी मृदुता, वज्र-सी कठोरता और हिमालय-सी अडिगता लिए हुए वह चैतन्य पुरुष अपने सृजनशील आयामों से हर पल, हर क्षण संघ को तरोताजा बनाता रहा। सचमुच कितना महान् था वह माँ वंदना का लाल। महासती लाडां का वीर, सेवाभावी मुनि चम्पक का भ्राता, गुरु कालू का यशस्वी उत्तराधिकारी! तेरापंथ का नवमाधिशास्ता! जो लाडनूं की पुण्य धरा पर खटेड़ कुल में दूज का चाँद बनकर अवतरित हुआ और गंगापुर (मेवाड़) की पावन धरा पर २२ वर्ष की युवावस्था में पदाभिसिक्त होकर, अणुव्रत अनुशास्ता राष्ट्रसंत के रूप में अखण्ड ब्रह्माण्ड में अपनी चिरन्तन ज्योति विखेरता हुआ अंत में गंगाशहर (राजस्थान) की माटी में अपनी अन्तिम साँसों की सौंधी-गंध फैलाकर महाकाल की महागंगा में अपने लौकिक

अस्तित्व को विलीन कर सदा-सदा के लिए अलौकिकता के सिंहासन पर विराजमान हो गया ।

प्रणाम उस अलौकिक पुरुष को, प्रणाम उसके अलौकिक आयामों को,
प्रणाम उस अलौकिक अवतरण को, प्रणाम उस अलौकिक महाप्रयाण को ॥

वंदना पुत्र महान

–माणक ओसवाल

तुलसी ! पावन चरणो में,
श्रद्धा सुमन चढ़ाये
गंगाशहर धर्म धरा,
नित तीरथ दर्शन पायें ।
राष्ट्रसंत । नमन व्यक्तित्व विशाल
अणुव्रत प्रेक्षा जीवन विज्ञान कर्तृत्व मिसाल
गुरुदेव ! जीवन दर्शन संघर्षो की गाथा
युगो युगो उपकृत रहेगी मानवता ।
सूरज सम तेज चन्दा सम शीतल
संघर्षों और विरोधो मे अविचल
मानव धर्म के ओ उज्ज्वल नक्षत्र
क्यों हो गये सदी से पहले अस्त ।
नमन् धर्मक्रांति दूत भीखणजी,
मर्यादा पुरुषोत्तम श्री जयाचार्य
यश, महिमा महान कालूगणिजी
तुलसी विरल अविरल आचार्य ।
धन्य धरा लाडनूं वंदना पुत्र महान
अनुशासन, मर्यादा भिक्षु शासन की आन
महाप्रज्ञ महाश्रमणी, महाश्रमण तेरापंथ की शान
चतुर्विध धर्मसंघ फूले फले तुलसी गुण की खान ।

नख-शिख में बसा सौन्दर्य

❑ साध्वी यशोधरा ❑

किसलय-सा शैशवकाल, फूल-सी तरुणिमा और फल-सा वार्धक्य मनमोहक होता है। किन्तु आचार्य तुलसी एक ऐसा व्यक्तित्व था, जिसका हर पोर मनमोहक, कमनीय और अभिरूप प्रतिरूप था। जिसने भी उसे एक बार निहार लिया, उसकी आँखें वहीं ठहर गईं। अपलक अनिमिष देखने पर भी मन भरता ही नहीं था। जिसने क्षीर-सिन्धु में दुग्ध पान कर लिया, उसे खारे पानी का कूप क्या अच्छा लगेगा ? जिसने चक्रवर्ती की खीर का एक बार भी रसास्वादन कर लिया, उसे क्या औरों की खीर पसंद आएगी ?

उनकी जादुई नज़रों का नजारा कमाल का था :—

''अमिय हलाहल मद भरे, श्वेत श्याम रतनार।
जियत, मरत झुक-झुक परत, जे चितवत इकबार''

आँखों में अमृत का दरिया लहराता था। जिस पर नेहिल नज़रें टिक गईं वह निहाल हो गया। जब कभी टेढ़ी नज़रें होतीं कि जैसे धरती भी थर्रा उठती। सचमुच उनकी आँखों में शनि विशेष प्रभावशाली था। घोर विरोधी भी उनके सामने आते ही श्रद्धा से अभिभूत हो जाते। शनि के प्रभाव से आने वाले की विचारधारा बदल जाती। अकड़न नम्रता में परिवर्तित हो जाती। विवादों की भीड़ उनकी सन्निधि में मौन हो जाती।



राजलदेसर मे एक प्रसंग को लेकर विक्षुब्ध युवकों की टोली आपकी सन्निधि मे पहुँची । जिज्ञासाओ का दुर्वार ज्वार हृदय सागर को उद्वेलित कर रहा था । आचार्य प्रवर ने समाधान के लिए उन्मुक्त अवसर दिया । आचार्य श्री के उपपात मे बैठकर उन्हे ऐसा लगा जैसे प्रश्न थम गए है । भाषा मौन हो गई है, प्रश्नो की लम्बी लिस्ट पाकेट में ही धरी रह गई ।

"गुरोस्तु मौनं व्याख्यानं, शिष्यास्तु छिन्नसंशयाः" उक्ति चरितार्थ हुई । लगभग आधा घंटा तक यह स्थिति बनी रही । बाहर आकर युवक कुलबुलाने लगे—अरे ! पता नही क्या हो गया । हमारी वाणी को किसी ने कीलित कर दिया । आचार्य श्री ने अपनी नेहिल नज़रें से अनकहे ही सब कुछ कह दिया । उफनते जिज्ञासा के ज्वार को शांत कर दिया । यह था उनकी अमिय झरती जादुई आँखों का चमत्कार ।

श्रद्धेय गुरुदेव शांति निकेतन मे थे । वे विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर के संग्रहालय एवं पुस्तकालय का निरीक्षण कर लौट रहे थे । मार्ग में कुमारी एलिजाबेथ ब्रूनर मिली । वह निकट आई । वार्तालाप हुआ । कुछ ही क्षणो में उसमें जैसे अद्भुत आत्मीयता का संचार हो गया । उसने अपने संस्मरणो मे लिखा है : और प्रतिक्रियाओं से पूर्व सबसे पहली प्रतिक्रिया मेरे मन पर यही हुई कि आचार्य श्री की आँखें बहुत तेजस्वी है । आचार्य श्री की आँखो का तेज उनके अंतर के तेज का प्रतिबिम्ब है ।

आचार्य श्री महाप्रज्ञ की कविता इसी ओर इंगित करती है—

'बाहर का सौन्दर्य यहाँ तो, अंतर का प्रतिबिम्ब रहा है ।'

अन्तर्राष्ट्रीय शाकाहारी मंडल के वुडलेण्ड ने आचार्य श्री से भेंट की । वे आचार्य श्री से वार्ता करने मे संलग्न थे । श्रीमती व्हेलर अनिमेष दृष्टि से आचार्य श्री के नेत्रो को निहारती रही । एक प्रसंग की पूर्ति पर उन्होने कहा—आचार्य श्री ! मेरा बहुत लोगों से मिलने का काम पड़ा है । पर जो ओज, जो आभा और सौन्दर्य मैने आपके नेत्रों मे देखा है, वह अन्यत्र मैंने कहीं नही देखा ।

पूज्य गुरुदेव की पुण्य स्मृति मे समुद्रगीत गीत के ये बोल कितने मार्मिक है—

"कानों की छटा निराली, आँखें इमरत की प्याली ।
किसने सौन्दर्य सजाया रे, महाप्राण ! गुरुदेव !"

बुद्ध की याद को ताजा करने वाले दिव्य कान, चमकती आँखें, मुस्कानो का खजाना विहंसता चेहरा, तेजोदीपित ललाट प्रथम दर्शन में ही दर्शक को लोहचुम्बक की तरह अपनी ओर खीच लेते थे ।

पूज्य गुरुदेव की शरीर संपदा विपुल थी । विविध प्रकार के आसनों तथा आहार संयम

के प्रयोगों द्वारा उन्होंने अपने शरीर को पूरी तरह से साध लिया था । यही कारण था उनके मन पर तो क्या तन पर भी वृद्धत्व की परछाईं नहीं पड़ी । जीवन-भर हर क्रियाकलाप में यौवन का उत्साह उमड़ता रहा, स्फूर्ति विस्फूर्त रही । कहीं श्लथता को अवकाश नहीं मिला ।

यात्रापथ में उनके सधे हुए कदमों की ईर्यासमित गतिशीलता दर्शक को उनके महायोगी होने का अहसास करा देती थी । आशीर्वाद की मुद्रा में उठा हुआ करकमल आंतरिक आल्हाद की सौरभ बाँटता था । बातचीत और प्रवचन के समय भावानुरूप विविध मुद्राएँ कुशल अभिनेता को भी मात करती थीं ।

विज्ञान के अनुसार मानव मस्तिष्क में दो प्रकार की तरंगें होती हैं । अल्फा और बीटा । जिसके मस्तिष्क में अल्फा तरंगों की बहुलता होती है । वह हर पल आनंद से भरा रहता है । अच्छे बायब्रेशन का निर्माण भी इन तरंगों से होता है । अल्फा की प्रचुरता जहाँ होती है, उसके समीप जाने वाला व्यक्ति भी आनंद से भर जाता है । जहाँ बीटा तरंगों की अधिकता है, वहाँ व्यक्ति विषाद से घिरा रहता है ।

अंतरंग सौन्दर्य का पैरामीटर है—मस्तिष्क । जिसका मस्तिष्क सुंदर होता है, वस्तुत: वही सर्वसुन्दर होता है । पूज्य गुरुदेव श्री के मस्तिष्क सौन्दर्य का कोई सानी नहीं है । उनका मस्तिष्कीय ग्रेमेटर न जाने कितनी बढ़िया क्वालिटी का था कि उनकी हर बनावट और हर बुनावट में रमणीयता के वे गुलाब महकते थे, जो ढूँढों तो अरबों-खरबों में भी नहीं मिलेंगे ।

सुदर्शन सौन्दर्य की उस अमिताभ आभा को वार्षिकीपर्व पर भावपूर्ण श्रद्धांजलियाँ ।

श्रद्धांजलियाँ

स्व० आचार्य श्री तुलसी ने जब राष्ट्रीय एकता तथा अखंडता पर चोट लगी तथा देश अशांत रहा तब उन्होंने अपनी तपस्या एवं त्याग के द्वारा देश की महानता को बचाने का हर संभव प्रयास किया । उनके "अशांत विश्व को गांधी का संदेश" पुस्तक को देश पिता महात्मा गांधी जी ने बहुत ही सराहा है ।

आचार्य श्री तुलसी ने बीसवीं सदी के आध्यात्मिक क्षेत्र को अपने "अणुव्रत आंदोलन" के द्वारा आलोकित किया । जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय" तथा "तेरापंथ धर्म संस्थान" ये सब शैक्षिक एवं धार्मिक जगत को उनकी देन है । वस्तुत: उनके महाप्रयाण से भारत माँ ने अपने एक महान तपस्वी पुत्र को खो दिया है । उनके बताये हुए रास्ते पर जाकर, उनके आदर्शों का पालन करना ही उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि रहेगी ।

—डॉ० राजेन्द्र कुमारी वाजपेयी, राज्यपाल
राजनिवास, पांडिचेरी-६०५ ००१

अणुव्रत-आन्दोलन ने प्रत्येक वर्ग को अपनी ओर खींचने का प्रयास किया है और जैन समुदाय पर स्वभावतः इसका विशेष प्रभाव पड़ा है। नैतिकता उपदेशों से कम, उदाहरण से ही पनपती है। आचार्य श्री तुलसी स्वयं उस मार्ग पर आचरण कर दूसरों को उस ओर प्रेरित करना चाहते है। हम सब उनके इस आन्दोलन के स्वरूप को समझे और अपने जीवन को एक नये रूप में ढालने का प्रयास करें।

-लालबहादुर शास्त्री

कहानी

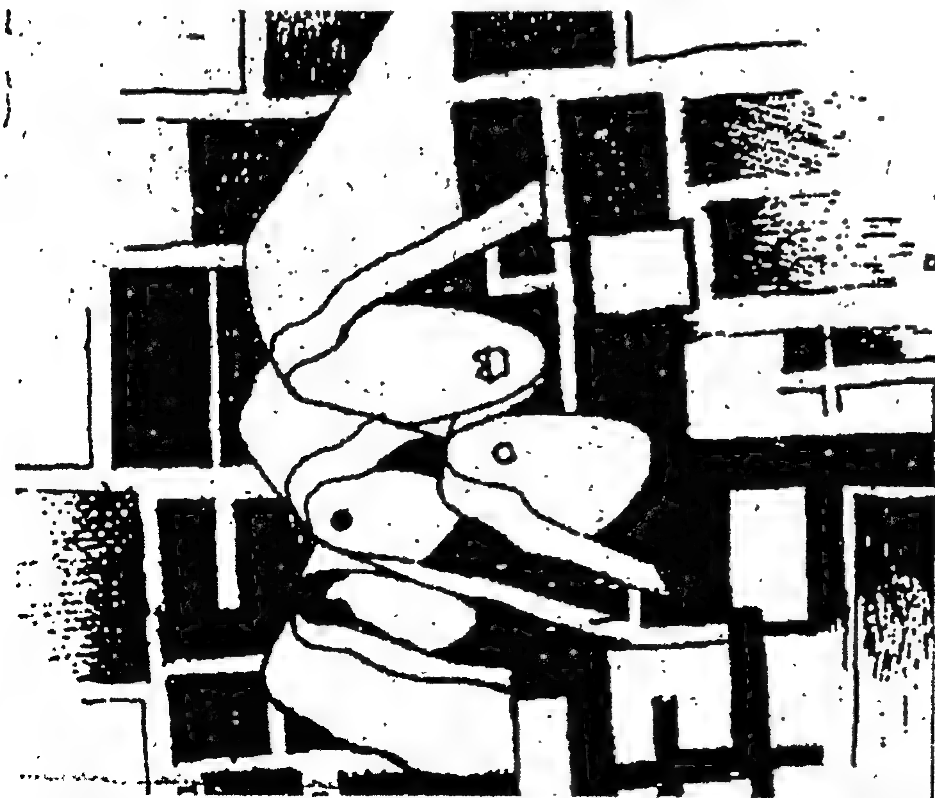
दोस्ती

समणी प्रसन्न प्रज्ञा

शमा ने ज्योंही न्यूज पेपर हाथ में लिया उसकी आँखें एक बड़ी-सी न्यूज पर स्थिर-सी होती चली गई। 'मीना' में लगी भयावह आग में २१७ या ३०० से अधिक लोग मर चुके हैं और १३०० यात्री घायल हैं,.पढ़ते ही शमा जड़वत हो गई। प्राण का संचार धक की आवाज के साथ रुक-सा गया। वह उतावली होकर पूरी न्यूज पढ़ने की कोशिश में थी पर आँखों के आगे अंधियारा छा रहा था। पैर काँपने लगे और होंठ सूखकर स्याह हो गए। उसका पूरा हलक सूख रहा था एक अकल्पित भय और चिन्ता से। जिगर मानों टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर रहा था। खुदा ! या अल्लाह ! तू ही रक्षा करना, कहती हुई वह फफक पड़ी थी।

उसका पति आलम भी एक हज यात्री था। उसके बारे में अनेक आशंकाएँ और भय बढ़ता जा रहा था। जब आग लगी होगी तो आलम कहाँ होगा ? उस भीड़ में वह सबसे पीछे था या फिर पहली पंक्ति में, जहाँ से वह अपने आपको बचा भी न पाए...।

नहीं...न...हीं...मेरे आलम को कुछ नहीं हो सकता। खुदा अवश्य उसकी रक्षा



करेगा। आलम को कोई भी आँच नहीं आ सकती।

वह कुछ क्षणों के लिए आश्वस्त हुई। उसकी आत्मशक्ति ने उसे संभालने की कोशिश की। वह बुदबुदायी...आलम एक नेकदिल इंसान है। उसने खुदा के साथ कभी धोखा नहीं किया है। शमा स्वयं भी तो खुदा की नमाज सदा पवित्र दिल से पढ़ती रही है। कुरान को आलम ने जीवन मे उतारने का गौरव प्राप्त कर रखा है। ऐसे आलम का कोई भी कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता, उसे कोई आँच नहीं आ सकती। उसने कितना बड़ा त्याग किया था। त्याग, सचमुच कितना बड़ा त्याग कर आलम ने दोस्ती को प्राणवान बना दिया था। क्या खुदा उसकी और मेरी सहायता नहीं करेगा ? लेकिन अगले ही क्षण आलम का घायल शरीर उसकी आँखों के सामने तैर जाता या फिर वह मृतकों के ढेर में आलम को खोज रही होती। वह ज्यादा देर इस चिन्तन में न रह सकी। उसके हलक से एक दर्दभरी चीख निकलने को आतुर हो रही थी। नही ! आलम महान् है। वह खुदा का सपूत है, खुदा स्वयं उसकी रक्षा करेगा। आलम का वह त्याग फिर उसकी आँखों के सामने तैरने लगा।

आठ साल पहले की ही तो बात है। १९९० की। उस समय भी तो मक्का के हज यात्रियों मे भगदड मची थी और उसमे १४०० यात्री मौत के मुँह में पहुँच गए थे। करीम जो कि आलम का दोस्त था भीड मे बुरी तरह से फँसकर गिर गया और उसका दायाँ हाथ इस कदर कुचल गया कि वह लहूलुहान हो गया।

डॉक्टरी सलाह के अनुसार करीम का दायाँ हाथ कटवाना अत्यंत आवश्यक था। उसने कहा था—अगर इस हाथ को न काटा गया तो पूरे शरीर में विष-प्रसारण की आशंका की जा सकती है।

आलम ! मेरे दोस्त ! करीम दर्द से कराह रहा था। मेरा हा...थ...। अब क्या होगा ? मेरा हाथ कट जाएगा तो मैं किस प्रकार काम करूँगा। दीनता से उसका चेहरा स्याह पड रहा था। चिन्ता के भार से परेशान वह रो लेना चाहता था।

करीम ! तुम चिन्ता क्यों कर रहे हो ? अभी तुम्हे स्वस्थ होना है। हाथ रहे या न रहे जिन्दगी रहेगी तो कुछ-न-कुछ उपाय निकल ही आएगा।

अभी तुम्हे स्वस्थ होने के लिए प्रसन्न रहना आवश्यक है।

आलम ! तुम ठीक कहते हो। पर कटे हाथ का होकर तो मैं अपनी औरत व औलाद पर भार मात्र ही हो सकता हूँ। करीम बोझिल जीवन की कल्पना मात्र से ही दबता चला गया।

दोस्त ! ऐसा नही बोला करते। आलम ने करीम के मुँह पर हाथ रखते हुए कहा। जब तक मैं हूँ, तुम्हें चिन्ता करने की जरूरत ही क्या है ? चिन्ता का सारा भार तुम मुझ पर छोड दो। तुम्हे पहले स्वस्थ होना है।

नहीं आलम ! मैं खुदा से मौत की दुआ माँगता हूँ ताकि चिरनिद्रा में सोकर शांति को प्राप्त कर सकूँ । रोते-रोते करीम बेहोश हो गया ।

डॉक्टर ! डॉक्टर ! आलम तेजी के साथ डॉक्टर को बुला लाया ।

बहुत देर परीक्षण करने के बाद डॉक्टर ने इतना ही कहा था—मरीज मानसिक दुर्बलता से घिरा हुआ है, यह खतरनाक है । स्वस्थ होने के लिए मानसिक प्रसन्नता देना अत्यंत आवश्यक है ।

और उसके बाद बहुत देर तक आलम डॉक्टर के साथ बात करता रहा । वह अपने दोस्त को प्रसन्नता प्रदान कर दोस्ती शब्द की सार्थकता सिद्ध करना चाहता था ।

लेकिन मेरी समझ में नहीं आ रहा कि आप इतनी नासमझी क्यों कर रहे हैं ? इसका हाथ कटा, यह बेबसी थी पर आप अपना हाथ जानबूझकर कटवा रहे हैं । दोस्ती में भी भावुकता का प्रवाह न बहे, अभीष्ट होता है ।

प्लीज डॉक्टर ! आप मुझे समझने की कोशिश करें । मैं करीम की हद तक सहायता करना अपना धर्म मानता हूँ । मैं उसे और अधिक दुःखी नहीं देख सकता । और फिर मैं तो कभी दायें हाथ से काम भी नहीं करता हूँ । बचपन से ही मैंने सदा बायें हाथ से ही काम किया है और करता भी रहूँगा ।

खैर, आपकी जो इच्छा । कहकर डॉक्टर ने बात को विराम दे दिया ।

लेकिन डॉक्टर एक बात और है । आप करीम से इसके बारे में कोई चर्चा नहीं करेंगे । आलम ने अपनी दृष्टि डॉक्टर के चेहरे पर टिका दी ।

डॉक्टर एक विस्मयभरी मुस्कान के साथ उसकी दोस्ती को मन ही मन धन्यवाद दे रहा था ।

नीरु ! क्या बात है ? आलम दो दिनों से हॉस्पिटल नहीं आ रहा है ?

हाँ, आलम किसी आवश्यक कार्य के लिए दिल्ली गया है । नीरु ने सत्य को बहुत चतुराई से छिपाते हुए कहा । लेकिन उसकी आँखें डबडबा आईं थी । वे हर्षाश्रु थे पर उन्हें भी वह प्रकट नहीं कर सकती थी क्योंकि आलम ने न केवल डॉक्टर को बल्कि उसे भी तो कसम खिलाई थी । उसने मुँह फेरकर झट से आँसू पोंछ लिए ।

और एक दिन जब दोनों मित्र स्वस्थ होकर आपस में मिले थे तो करीम चहक उठा था अपना नया हाथ नचाते हुए । वह आलम को उपालम्भ पर उपालम्भ दिए जा रहा था कि वह अपने बीमार दोस्त को छोड़कर क्यों गायब हो गया था । उसने अपना नया हाथ आगे बढ़ाकर आलम से हाथ मिलाना चाहा ।

आलम ने कोई हरकत नहीं की । वह बुत-सा खड़ा रहा ।

क्या मेरे से हाथ नहीं मिलाओगे दोस्त ! एक बार मिलाकर देखो तो सही । यह कैसा

फबता है ?

कैसा अजीब प्रश्न खड़ा कर दिया था करीम ने आलम के सामने। आखिर वह शॉल की ओट मे अपने कटे हाथ को छुपायेगा भी कब तक ? हालाँकि वह सारा काम बायें हाथ से करता रहा है, पर दोस्त से मिलाने के लिए तो दायाँ हाथ ही चाहिए। आलम सोचता रहा।

लेकिन करीम अधिक रुक नहीं सका। उसने झट से आलम के शॉल को खींच लिया और अपना हाथ आगे बढ़ा दिया।

पर...यह क...ऽ...या...? आलम के बुशर्ट की बाँह किसी उदास चेहरे की भाँति लटकी हुई थी। उसका हाथ कहाँ गया ? क्या कोई दुर्घटना हो गई ? या फिर कुछ और...। करीम की आँखे विस्मय से फैलती जा रही थी।

कुछ भी मत सोचो मेरे मित्र ! इसमें अटटे क्यों रहे हो ? मै आज इतना प्रसन्न हूँ कि दुनियाँ की सारी दौलत मेरे चरण चूम रही है। तुम्हें स्वस्थ देखकर मैं फूला नहीं समा रहा हूँ। सचमुच मै धन्य हो गया हूँ मित्र ! धन्य हो गया हूँ।

करीम की खुशी इस पीड़ा के नीचे दब रही थी कि वह जिस हाथ की खुशी में नाच रहा है वह उसके दोस्त का ही हाथ है। तू कितना दुष्ट है, तुझे धिक्कार है करीम ! तुमने इस दोस्ती का कुफायदा उठाया है। करीम का अतस् तिलमिला उठा। वह कुछ कहना चाहकर भी कह नही पाया।

मित्र ! आज तक हम लोग सुनते आए हैं कि दोस्ती में दो देह, दिल एक हुआ करता है पर हमारी दोस्ती ने इस ऊँचाई पर आरोहण कर लिया है जहाँ दिल भी एक और देह भी एक हो जाए। जो हाथ तुम्हारा वही मेरा और जो मेरा वही तुम्हारा। इस प्रसंग में तुम्हें गौरव होना चाहिए करीम ! न कि चिन्ता। आलम ने गंभीरता को चुहल में बदलने की कोशिश की।

आलम ! मै सचमुच धन्य हूँ जो मुझे तुम्हारें जैसा दोस्त मिला, कहते हुए करीम ने आलम को गले लगा लिया।

जब आलम ने यह सब अपनी क्लास में बताया था तो शमा कितनी रोयी थी। उसी दिन से उसने आलम को अपने दिल में बिठा लिया था। आलम के गुणों के सामने वह अपने आपको बहुत छोटा महसूस कर रही थी। उसने ही तो अपने अब्बाजान को कहा था कि अब्बाजान ! आप यह चिन्ता न करें कि आलम के एक ही हाथ है। मैं आलम के साथ निकाह कर अपने आपमें गौरव की अनुभूति करूँगी। मुझे आलम के शरीर से नहीं गुणों से प्यार है।

शादी के आठ साल कितनी जल्दी बीत गए थे। आलम ने शमा को कभी दूर नही किया

था । इस बार जब आलम ने हज यात्रा की चर्चा की तो शमा ने कितना रोकना चाहा था उसे । पर वह था कि उस पर से हज यात्रा का नशा उतर ही नहीं रहा था ।

शमा ! तुम अभी माँ बनने वाली हो वरना मैं तुझे भी साथ ही ले जाता । खैर, मैं अकेला ही खुदा से अपनी होने वाली औलाद के लिए और तुम्हारे लिए भरपूर खुशियों की माँग करूँगा । तुम्हारे और उस नन्हें प्राणी के नाम से भी अल्लाह को सिर झुकाऊँगा । तुम मुझे रोको मत, शमा ! प्लीज शमा...आलम से वे वाक्य आज भी शमा के कानों में गूँज रहे थे ।

खुदा अवश्य ही आलम की रक्षा करेगा । पर उसे कैसे पता चले कि आलम कहाँ और कैसे है ? शमा धीरे-धीरे बड़बड़ायी । उसे अपने धैर्य को लम्बाना ही पड़ेगा । इसके अलावा कोई रास्ता भी तो नहीं था ।

दूसरे दिन शाम, शमा को किसी ने फोन पर बताया कि वह चिन्ता न करे । आलम कुछ घायल हुए हैं, हॉस्पिटल में भर्ती हैं, इलाज चल रहा है और बहुत शीघ्र ही स्वस्थ होकर शमा के पास पहुँच रहे हैं । शमा को पूर्ण निश्चिन्त रहना है, अपने से ज्यादा उस नन्हें प्राणी का खयाल रखना है ।

शमा ने बहुत प्रयास किया कि फोन कहाँ से आया है ? और कौन कर रहा है पर वह असफल रही । आखिर वह कौन है जो मक्का में मुझे और आलम को जानता है ? जो आलम की इस कदर देखभाल भी कर रहा है और मेरी सहायता भी...पर शमा के कुछ भी समझ में नहीं आया ।

कुछ दिनों बाद जब आलम स्वस्थ होकर घर आया तो उसके साथ नीरु भी थी ।

अरे नीरु तुम ! आलम के साथ ! शमा ने विस्मयभरी आवाज में पूछा । क्या तुम्हें पता था कि आलम हजयात्रा में गए हैं ? क्या तुम भी वहाँ गई थीं ? करीम कहाँ है ? न जाने एक ही श्वास में शमा ने कितने प्रश्न पूछ डाले । उसकी आँखों में एक शिकायत भी थी कि अगर नीरु को सब पता था तो उसने शमा से यह सब क्यों छुपाया । वह आलम को इस कदर देख रही थी मानों कभी देखा ही न हो । वह एक ही दृष्टि में उसे पी लेना चाहती थी ताकि इतने दिनों की प्यास एक साथ शांत हो जाए ।

जिस दिन न्यूजपेपर में यह खबर पढ़ी करीम अपने आपको रोक नहीं पाए । उन्हें पता था इस बार आलम भी हज यात्रा में गए हैं । तथा शमा माँ बनने वाली है । वे तत्काल वहाँ से रवाना हो गए । उनके आलम को कुछ हो जाए, यह उन्हें सह्य नहीं हो सकता था । कुछ ही घण्टों में वे वहाँ पहुँच गए और काफी देर तक पूछताछ करने के बाद करीम को आलम हॉस्पिटल के एक वार्ड में मिले पर वह बेहोश थे । नीरु लगातार कहती ही जा रही थी ।

आलम इस कदर झुलस गए थे कि उनकी चमड़ी की तीनों परतें जलकर राख हो

गई। उसकी आँते व हड्डियाँ बाहर झाँक रही थी, उन पर कोई आवरण नहीं रहा था। आलम की हालत बहुत खराब थी पर करीम ने साहस नहीं खोया। उसने शमा को फोन कर निश्चिन्त रहने का संकेत देकर अपने पूरे परिवार को वहाँ बुला लिया पर उसने अपना नाम व पता शमा को शायद इसीलिए नही बताया कि वह स्वयं वहाँ पहुँचने की जिद करे। लेकिन करीम को जितनी आलम की चिन्ता थी उससे भी अधिक गर्भवती शमा की थी। वह उसे हर खतरे से बाहर रखना चाह रहा था।

डॉक्टर हैरान था यह सुनकर कि आप मेरी त्वचा की परत उतारकर आलम की काया पर मढ़ दे। वह अपने दोस्त की देह पर प्लास्टिक त्वचा का प्रत्यारोपन नहीं करवाना चाहता ...लेकिन अब करीम कहाँ है ? नीरु की लम्बी बात के बीच में ही शमा ने प्रश्न कर लिया।

वे अभी भी हॉस्पिटल मे है। मेरी अम्मा व अब्बाजान उनके पास है। रशीदा करीम को छोड़कर यहाँ आई है, इसका एकमात्र कारण करीम की इच्छा है। वे चाहते थे कि मैं स्वयं जाकर आलम को तुम्हे सौपूँ। कहते-कहते नीरु की आँखे भर आई।

शमा की आँखो मे तो लगातार सावन की झड़ी लगी थी।

आलम की आँखो के पोर भी गीले थे। वह स्वय ही कुछ विस्मित-सा होकर सुन रहा था। जब नीरु ने अपनी बात को समाप्त किया तो मानो एक झटके के साथ उसकी चेतना लौटी।

लेकिन भाभीजान ! आप मेरे पास इतने दिन रही। आपने कभी नही बताया कि करीम की त्वचा ही मेरी हड्डियो का आवरण बनी है। वह भी उसी हॉस्पिटल में ही है। आपने तो कहा था कि आवश्यक कार्य के कारण वही रुका हुआ है और उसने आप सबको मेरे लिए भेजा है। क्या यह सब असत्य ही था।

हाँ आलम भैया ! करीम नहीं चाहते थे कि मै यह सब आपको बताऊँ। जब तक आप स्वस्थ होकर शमा से मिल न लें तब तक मुझे इस सत्य को उजागर करने की अनुमति नहीं थी।

शमा को करीम किसी खुदा से कम नजर नही आ रहा था। उसका हृदय करीम के प्रति श्रद्धा से लबालब भर गया था। वह दोनों की दोस्ती को अपने हृदय की तराजू में तौल रही थी पर उसने देखा दोनो पलडे समान थे। तब उसकी समझ ने उसे झकझोरा। दोस्ती में कोई एक पलड़ा ऊँचा-नीचा नहीं हो सकता। अगर वे पलड़े समान न हों तो उस व्यवहार को

■ सच्चाई लाजवंती होती है, इतनी शालीन कि आप के सिर पर वार कर आप को अपनी गुफा में घसीट नहीं ले जा सकती वह तो बस सदा प्रस्तुत रहती है, और यह लोगों पर है कि वे उस की कामना करें, उसे पाने की चेष्टा करें।
-विलियम एफ़ बकली,

आचार्य श्री तुलसी
अध्यात्म चेतना के शिखर पुरुष

मुनि मदनकुमार

"चिंता नहीं, चिंतन करो। व्यथा नहीं, व्यवस्था करो! प्रशंसा नहीं, प्रस्तुति करो।" इस मूल्यवान और प्रासंगिक त्रिपदी के प्रदाता थे—आचार्य श्री तुलसी। यह व्यक्तित्व के चहुँमुखी विकास का मूलमंत्र है। संत श्री तुलसी को निकटता से देखने वाले एक अनुभव सिद्ध साहित्यकार का यह कथन समीचीन लगता है कि "तुलसी जी के इर्द-गिर्द यों लगता है कि यहाँ जीवन मूर्च्छित और परास्त नहीं है। उनके व्यक्तित्व में सजीवता और एक विशेष प्रकार की एकाग्रता के दर्शन होते हैं।" जैन विद्या मनीषी श्री दलमुखभाई मालवणिया भी इसी कथन को पुष्ट करते हुए लिखते हैं कि "एक समय था जब मैं तेरापंथ का कट्टर आलोचक था पर आचार्य श्री तुलसी के दूरदर्शी चिंतन द्वारा संपादित व्यापक कार्यक्रमों ने मुझे तेरापंथ का पूरा समर्थक और प्रशंसक बना दिया। आचार्यश्री ने तेरापंथ संघ को युगीन मोड़ दिया। तेरापंथ की सबसे अधिक किसी विशेषता ने मुझे प्रभावित किया है तो वह है यहाँ की अप्रमत्तता, सतत जागरूकता और बेजोड़ अनुशासन।" संतश्री तुलसी सात सौ साधु-साध्वियों और लाखों श्रावक-श्राविकाओं के एकमात्र अधिशास्ता और अधिपति



थे, यह इस युग की एक अनहोनी-सी घटना है । निस्संदेह तेरापंथ ने विकास की अमाप्य ऊँचाई को छुआ है, इसमे निमित्त वना है इसका कुशल नेतृत्व और सृजनात्मक दृष्टिकोण ।

संतश्री तुलसी रचनात्मकता और सृजनशीलता के प्रतिरूप थे । अप्रमत्तता और आत्मस्थता के सधे हुए प्रतिबिम्व थे । औचित्य और अनौचित्य की भेदरेखा के स्पष्ट दर्शन उनके यशस्वी व्यक्तित्व मे किए जा सकते थे । भिवानी शहर मे एक वार कुछ प्रमुख लोग उनके पास चर्चा करने के लिए उपस्थित हुए । उन्होने समागन्तुकों से चर्चा का उद्देश्य पूछा । वे वोले कि हम आपको चर्चा मे पराजित करना चाहते हैं । संतश्री तुलसी ने मुस्कराते हुए कहा– केवल इतनी-सी वात ! इसके लिए इतना श्रम क्यों किया जाए ? आप लोगों से कह सकते है कि मैं हार गया हूँ और आप जीत गए है । यह सुनकर उपस्थित लोग दंग रह गए । उन्हे बडा आश्चर्य हुआ । अगली वार जव संतश्री तुलसी का भिवानी आगमन हुआ तब वे ही लोग विरोध का स्वर छोड़कर अग्रिम पंक्ति मे सुभक्त बनकर बैठे थे । यह है उनके महान सृजनधर्मी व्यक्तित्व का एक निदर्शन । वहुआयामी व्यक्तित्व के धनी संतश्री तुलसी ने धर्मसंघ और समाज के सभी वर्गों को दिशादर्शन देकर सचेतन और सक्रिय वनाया । उनकी क्रियात्मकता सदैव रचनात्मकता से जुड़ी रही । यही कारण है कि उन्होने मानव-समाज को सम्यक् चिन्तन और जीवन का वोध दिया ।

उनके अमूल्य विचार मानव समाज के लिए अमृत का घूँट सावित हुए हैं । उनके पास विचार की शक्ति और अभिव्यक्ति का अद्‌भुत सामर्थ्य था, जिससे आज मनुष्य समाज लाभान्वित हो रहा है । उनके पास वाणी का जादू और प्रवचन की कला थी, जिसे साक्षात अनुभव किया जा सकता था । जनता पर उनके प्रवचनों की अमिट छाप देखी जा सकती है । यह उनके महान व्यक्तित्व और कर्तृत्व का चमत्कार ही समझना चाहिए कि वे असीम जनता के श्रद्धाभाजन और आदरास्पद बन गए थे । उनके मधुर प्रवचनो से प्रेरित होकर अनेक ग्रामीण लोग अपने जीवन को सदाचार और व्यसनमुक्त वनाते देखे जा सकते थे । वे ग्रामीणों के साथ भी एकात्मकता स्थापित करने में सिद्धहस्त थे कि ग्रामीण लोग अपनी सारी बुराइयाँ प्रसन्नतापूर्वक उनके श्रीचरणों मे समर्पित कर देते थे । उनका करुणाशील मानस और प्रभावशाली व्यक्तित्व हर आगन्तुक को सहज ही अपनी ओर खींच लेता था । उन्होने सामान्य जनता से लेकर राष्ट्र के शीर्ष पुरुषों का सम्मान और सत्कार पाया । उनके विविधमुखी व्यक्तित्व से प्रभावित होकर स्वतंत्र भारत के द्वितीय राष्ट्रपति डॉ० राधाकृष्णन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'उद्देश्यपूर्ण जीवन' (लिविंग विद ए परपज) मे आपका गरिमामय उल्लेख किया था । उन्होने अपने बहुमूल्य ग्रंथ मे जिन चौदह व्यक्तियों के जीवन को रेखांकित किया था, उनमें से केवल संतश्री तुलसी ही एकमात्र अनेक वर्षो तक विद्यमान रहे ।

प्रशस्ति और विरोध दोनों उनके जीवन में समानांतर चले थे। उनकी आत्मजागृति ने सदैव उन्हें समत्व में स्थिर रखा। उनकी स्थितप्रज्ञता अनेक अवसरों पर उजागर हुई। घटना जोधपुर की है। विरोधी लोगों ने अपना विरोध प्रकट करने के लिए खूब पोस्टरबाजी की। पोस्टर इतने अधिक लगाए कि तारकोल की सड़क भी वंचित नहीं रह सकी। संतश्री तुलसी जिस मार्ग से पधारने वाले थे, वह मार्ग तो अत्यधिक ही पोस्टरों से आच्छादित कर दिया गया था। विरोधी लोग संतश्री तुलसी को खिन्न देखना चाहते थे। ज्यों ही मनस्वी संतश्री तुलसी अपने धर्म परिवार के साथ प्रवचन सभा में पहुँचे, विरोधियों के प्रति अपना आभार ज्ञापित करते हुए कहा– "हम लोग पदयात्री हैं। पदयात्रा हमारे जीवन का व्रत्त है। आज रास्ते में

"अणुव्रत अनुशास्ता ने जहाँ एक ओर युवा-पीढ़ी को धर्म के संस्कारों से अनुप्राणित करने के लिए उत्कृष्ट कोटि का साहित्य रचा, वहीं दूसरी ओर जीवन निर्माण के अनेकानेक सशक्त अवदान दिए। अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान और जीवन विज्ञान ये तीनों उपक्रम मूर्च्छित मानवता के लिए संजीवनी है। सांप्रदायिक सद्भाव, पारस्परिक सौहार्द और चारित्रिक उन्नयन के लिए उनके प्रवचन एक सशक्त खुराक है। खंड में अखंड, भेद में अभेद का दर्शन उनके पारदर्शी व्यक्तित्व का विशिष्ट गुण है। एकता का मूलमंत्र उनके जीवन और दर्शन में पथ-मिश्री की तरह घुला हुआ था। उनके मन में आर्त्त मानवता के प्रति मैत्री और करुणा का भाव था, जिससे वे अणुव्रत और प्रेक्षा को जन-जन तक पहुँचाने के लिए लालायित और प्रयत्नशील थे। अणुव्रत आँख है और प्रेक्षा पांख है।"

इतने अधिक पोस्टर थे कि हमारे नंगे पैर सड़क की कालिमा और उष्णता से काफी बच गए। काश! यदि पोस्टर और अधिक नजदीक होते तो हमारे पैर काले होने से सर्वथा बच जाते।" यह प्रतिक्रिया सुनकर विरोधी दंग रह गए। उन्हें कल्पना ही नहीं थी कि हमारे भयंकर विरोध को संतश्री तुलसी विनोद में बदल देंगे। विरोधी को देखकर जहाँ सामान्य व्यक्ति घबरा जाता है, वहाँ संतश्री तुलसी विरोध में प्रकाशित साहित्य को भी संग्रहणीय मानते थे। विरोध का प्रत्युत्तर विरोध हो, यह चिंतन तेरापंथ धर्मसंघ के रचनात्मक दृष्टिकोण के सर्वथा खिलाफ है। विरोध को सदा ही विनोद में बदलकर तेरापंथ ने स्वस्थ परंपरा का संस्थान किया है। "जो करे हमारा विरोध, हम उसे समझें विनोद" यह तेरापंथ अनुशास्ता श्री तुलसी का मूल्यवान उद्घोष था।

अणुव्रत अनुशास्ता ने जहाँ एक ओर युवा-पीढ़ी को धर्म के संस्कारों से अनुप्राणित करने के लिए उत्कृष्ट कोटि का साहित्य रचा, वहीं दूसरी ओर जीवन निर्माण के अनेकानेक सशक्त अवदान दिए। अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान और जीवन विज्ञान ये तीनों उपक्रम मूर्च्छित मानवता के लिए संजीवनी है। सांप्रदायिक सद्भाव, पारस्परिक सौहार्द और चारित्रिक उन्नयन के लिए उनके प्रवचन एक सशक्त खुराक है। खंड मे अखंड, भेद में अभेद का दर्शन उनके पारदर्शी व्यक्तित्व का विशिष्ट गुण है। एकता का मूलमंत्र उनके जीवन और दर्शन मे पथ-मिश्री की तरह घुला हुआ था। उनके मन में आर्त्त मानवता के प्रति मैत्री और करुणा का भाव था, जिससे वे अणुव्रत और प्रेक्षा को जन-जन तक पहुँचाने के लिए लालायित और प्रयत्नशील थे। अणुव्रत आँख है और प्रेक्षा पांख है। अणुव्रत जीवन-निर्माण का सिद्धांत है और प्रेक्षा है उसका प्रायोगिक रूप। अणुव्रत और प्रेक्षा इस युग की पीड़ित मानवता के लिए शामक औषधि है और विविध समस्याओं का अचूक समाधान है। भौतिकवाद ने मनुष्य को तनाव, कुंठा और मनोकायिक बीमारियो से भर दिया है, अतः प्रेक्षा जैसा प्रायोगिक धर्म ही सफल समाधान प्रस्तुत कर सकता है। प्रेक्षाध्यान चैतन्य के परिमार्जन की विज्ञान सम्मत प्रक्रिया है। इससे वर्तमान जीवन का परिष्कार होता है। प्रेक्षा के नियमित अभ्यास से व्यक्ति मानसिक और भावनात्मक स्वास्थ्य की अनुभूति करने लगता है। निस्संदेह अणुव्रत और प्रेक्षा का योग सोने में सुहागा जैसा है।

ध्यान आध्यात्मिक साधना का अनमोल तत्त्व है। जैन साधना पद्धति में ध्यान को पुनर्जीवित करने का श्रेय संतश्री तुलसी के सक्षम नेतृत्व को जाता है। महावीर के समय में जैनों की एक सुनिश्चित ध्यान साधना पद्धति थी, किन्तु कालान्तर में वह लुप्त सी हो गई। ध्यान के मौलिक तथ्यों को खोजकर उसे पुनः उजागर करना आवश्यक था। उनके सफल नेतृत्व और निर्देशन में दीर्घकालीन शोध, साधना और प्रयोगों के पश्चात् एक ध्यान साधना पद्धति विकसित हुई, जिसे प्रेक्षाध्यान के नाम से जान रहे है। प्रेक्षाध्यान ध्यानाभ्यास की एक सफल पद्धति है, जिसे कोई भी अल्पअभ्यास के द्वारा सीख सकता है। यह एक प्रायोगिक धर्म है, जो व्यक्ति के भीतर रासायनिक परिवर्तन घटित कर ठोस परिवर्तन लाता है। संक्षेप मे यह कहा जा सकता है कि वर्तमान युग की समस्याओं के संदर्भ में प्रेक्षाध्यान साधना का अतिरिक्त मूल्य है। प्रेक्षाध्यान साधना पद्धति का आविष्कार एक सुखद घटना है। प्रयोग, प्रशिक्षण और अन्याय के द्वारा हजारो व्यक्ति इससे लाभान्वित हो रहे है। प्रेक्षाध्यान पद्धति न कल्पना है, न आश्वासन है, न चमत्कार है, न शक्तिपात है और न ही कोई जादू है। यह तो भाव और रसायन परिवर्तन का आगम और विद्वान सम्मत प्रयोग है।

तेरापंथ अधिशास्ता ने प्रेक्षाध्यान के द्वारा शिक्षा और चिकित्सा जगत को परिष्कृत करने

का अनुपम स्वप्न संजोया। देश के अनेक विद्यालयों में चलने वाला यह प्रेक्षाध्यान प्रयोग शिक्षा जगत का कायाकल्प कर रहा है। शिक्षा जगत में यह प्रयोग जीवन विज्ञान के नाम से प्रभावी हो चुका है तथा इसे अधिक व्यापक बनाने के लिए तीव्र प्रयत्न किए जा रहे हैं। चिकित्सा जगत के लिए भी यह प्रेक्षा पद्धति एक महत्त्वपूर्ण अवदान बन रही है। आज के आयुर्विज्ञान चिकित्सक शारीरिक रोगों के निवारण में काफी सफल हो रहे हैं, किन्तु मानसिक तनावों और निषेधात्मक भावों का इलाज चिकित्सा जगत के पास उपलब्ध नहीं है। प्रेक्षाध्यान एक सशक्त प्रयोग है जो तनावपीड़ित मानव को राहत दे रहा है। आज की अधिकांश बीमारियाँ तनावपूर्ण जीवनशैली की निष्पत्ति कही जा सकती है। तनावों को मिटाने में चिकित्सा शास्त्र अभी अपूर्ण है, क्योंकि उसके पास प्रयोग की विधा नहीं है, अत: प्रेक्षाध्यान पद्धति की उपादेयता निर्विवाद है।

तेरापंथ अनुशास्ता श्री तुलसी ने सदैव अपने जीवन में नये-नये स्वप्न संजोकर संघ, समाज और राष्ट्र को वैशिष्ट्य प्रदान करने का भरसक प्रयत्न किया था। आगम साहित्य पर युगानुरूप कार्य आपके दूरदर्शी चिन्तन और कार्यकौशल का एक महान निदर्शन है। आगम संपादन जैसे दुरूह कार्य के निष्पादन में आपका श्रम मुखरित हुआ। भगवान महावीर की वाणी को युग भाषा में प्रस्तुति देने का श्रेय उनके ही सफल पुरुषार्थ को है। जैन दर्शन के विश्वव्यापी न होने का एक कारण भाषागत कठिनाई रही है, किन्तु उनके प्रलंब शासनकाल में साहित्य निर्माण और समण दीक्षा जैसे दो ऐसे प्रयोग हुए जिनसे विश्व मानव के पास भगवान महावीर का संदेश पहुँच रहा है। महावीर के दर्शन को बौद्धिक वर्ग तक पहुँचाने का श्रेय उन्हें हो जाता है। उनके शुभाशीर्वाद से उनका धर्मपरिवार इस महान कार्य में सहभागी बना है। स्वल्प कालावधि में अनेक विधाओं में आगम और आगमेतर साहित्य जनता के हाथों में पहुँचा है।

भौतिकता के चरम विकास के बावजूद भी मनुष्य को शांति नहीं मिल रही है। समृद्ध देशों के लोग अब भौतिकता से ऊब रहे हैं। आज विश्व मानव को शांति और अध्यात्म की बहुत आवश्यकता है। अध्यात्म मनीषी संतश्री तुलसी ने इस युगीन समस्या की ओर अपना ध्यान केन्द्रित किया और कुछ वर्ष पूर्व एक नई परंपरा का सूत्रपात किया, जो अशांत मानव को अध्यात्म का संदेश दे सके। यह नवीन परंपरा समणश्रेणी के रूप में प्रख्यात हुई। समण दीक्षा की समायोजना उनके ही उर्वर मस्तिष्क की एक विलक्षण देन है। यह एक नयी किस्म है जो युग-माँग को पूरा करने में समर्थ है। समण-श्रेणी का उदय तेरापंथ अनुशास्ता श्री तुलसी के जीवन का उपलब्धि भरा प्रकरण है। संतश्री तुलसी का अदृश्य बन चुका अपराजेय व्यक्तित्व और अतिशयमुक्त कर्तृत्व युगों-युगों तक अध्यात्म के राजमार्ग को आलोकित करता रहे, यही शुभाशंसा है।

एक निश्चित लक्ष्य का स्थिरीकरण किए विना चारों दिशाओं में दौड़धूप करने से किसी अभिलक्षित अर्थ की सिद्धि नहीं हो सकती।

-गुरुदेव श्री तुलसी



कहां है वह चैतन्य पुरुष ?

❑ साध्वी शुभप्रभा ❑

कुछ दिनों पूर्व महात्मा शेखसादी के लिखे ये वाक्य पढ़े - "किसी व्यक्ति की महानता कभी इस बात से न आंकें कि उसके खजाने में कितनी दौलत है? कि वह कितने ऊंचे आसन पर स्थित है? कि सुबह से शाम तक कितने आदमी उसके आगे सिर झुकाते हैं? कि वह कितनी ताकत का मालिक है? कि दुनिया में कितने अधिक लोग उसे जानते हैं? बल्कि इस बात से उसका मूल्यांकन करें कि उसके चले जाने पर कितनी आंखें नम होती हैं, कितने दिल रोते हैं, कितने लोग उसे याद करते हैं, उसके बिना कितने जन सूनापन महसूस करते हैं, कितने निष्प्राण से हो जाते हैं और कितने लोग उसकी अंति यात्रा में शामिल होते हैं।"

पढ़ते ही २३ और २४ जून के वे अभागे क्षण स्मृति-पटल पर उभर आये। जैसे ही यह मनहूस खबर सुनी - 'गणाधिपति पूज्य गुरुदेव नहीं रहे' - एक बारगी सर्वत्र सन्नाटा छा गया। आंखे पथरा गईं। शरीर श्लथ हो गया। वाणी मौन हो गई। पैर जम गये। सब कुछ निष्पन्द-सा हो गया। कानों को विश्वास नहीं हुआ। टेलीफोन की घंटियां बजने लगीं। थरथराते स्वरों ने पूछा-क्या यह सच है?



थोड़ी ही देर में गंगाशहर का तेरापंथ भवन का विशाल पंडाल खचाखच भर गया। चारों ओर से एक ही आवाज आ रही थी - गुरुदेव कहां हैं? लोग आपस में वतिया रहे थे - अभी तो हम दर्शन करके घर गये थे। बड़ी प्रसन्न मुद्रा में पूज्य गुरुदेव ने सबको आशीर्वाद दिया था। इतनी-सी देर में यह अंवर कैसे डोल गया, धरती ने क्यों उन्हें अपनी गोद में ले लिया? अचानक यह सब कैसे और क्यों हो गया?

कुछ ही क्षणों में टी॰ वी॰, रेडियो और टेलीफोन के माध्यम से यह समाचार देश और विदेशों

"*दीनों - दुःखियों, अनाश्रितों, असहायों की आंखों के आंसू पोंछने वाला मानवता का मसीहा कहां है? युग चुनौतियों के समक्ष सीना ताने खड़ा रहने वाला वीर योद्धा आज सुखासन में क्यों बैठा है? अन्याय के विरुद्ध सिंह गर्जना करने वाला, अहिंसात्मक प्रतिकार करने की भावना भरने वाला आज मौन क्यों है। आधी दुनियां को उसके अस्तित्व का अहसास करानेवाला, उन्हें नई पहचान देने वाला, उन्हें समानदर्जा देने का प्रबल पक्षधर, संसद में आज उनकी वकालत क्यों नहीं कर रहा है? अपने शांतिदूतों के साथ अध्यात्म-चर्चा में संलीन महायोगी आज अकेला किस प्रयोग-प्रक्रिया में संलग्न है? व्यक्ति-व्यक्ति की नब्ज पकड़ने और पहचानने वाले हाथ निष्क्रिय क्यों हो गये हैं?*"

तक फैल गया। सबके दिल और दिमाग गंगाशहर पहुंच कर अंतिम दर्शन करने के लिए उत्कंठित हो गये। जिसे जो भी द्रुतगामी साधन मिला, उसने उसका उपयोग किया। अनेक चार्टर विमान आए। बसों, कारों, जीपों की अनगिनत कतारें हर नुक्कड़, हर गली व हर मुहल्ले में लगी थीं। हर घर मेजवानी करने के लिए तत्पर था। चाहे वह तेरापंथी हो या नहीं, जैन हो नहीं, किन्तु उस दिन हर मकान गेस्ट हाउस वन गया।

क्षण-क्षण श्रद्धा का रेला वढ़ता जा रहा था। फिर भी सर्वत्र एक खामोशी थी। एक असुहावनी चुप्पी थी। नयन आर्द्र थे और हृदय गमगीन। मंच की ओर सरकते कदम अपने आराध्य की पार्थिक देह को देखकर ठिठक जाते। विना निर्देश के अनिमेष प्रेक्षा हो जाती। सोच का संसार ही वदल जाता जव स्वयंसेवकों द्वारा आगे वढ़ने का अनुरोध किया जाता, तव लगता मानों वह सोते से अचानक जाग गया है। वह वर्तमान में लौटता। "मैं कहां खड़ा हूं' - का उसे अहसास होता और फिर अपने आस्थानैवेद्य का अर्ध्य चढ़ाते वक्त पुनः स्मृतियों के वातायन में अवस्थित

हो जाता। यह एक व्यक्ति या एक वर्ग की बात नहीं थी, सभी श्रद्धालुओं की मनः स्थिति ऐसी ही थी। मंच से बार-बार अनुशासन बनाये रखने की अपील किए जाने के बावजूद लोग चाह कर भी अपने आपको रोक नहीं पा रहे थे। एक बार तो दर्शन और कर लें - रह-रह कर यही विचार उन्हें अभिप्रेरित कर रहा था।

परम श्रद्धेय आचार्यवर, आदरास्पद महाश्रमणी जी एवं आदरणीय महाश्रमण जी के लिए वह बड़ी विकट बेला थी। पूज्य गुरुदेव की मंगल सन्निधि में व्यतीत क्षणों का विशाल संग्रहालय उनके सामने था। उनके दृष्टि पथ में अनेकानेक बिम्ब और प्रतिविम्ब उभर रहे थे। पिछली सारी स्मृत्तियां एक साथ सचेतन हो रही थीं। उधर श्रद्धासिक्त माहौल उन्हें लोगों को संभालने के लिए उत्प्रेरित कर रहा था। बहुत विकट समय था वह।

जब परमपूज्य गुरुदेव की पार्थिव देह की साक्षी ने पूज्य आचार्यवर के सान्निध्य में हजारों-लाखों की उपस्थिति में स्मृति सभा का आयोजन हुआ, तब लगा सब बोलते हुये भी अबोले हैं और अनबोले अपनी भावांजलि श्रीचरणों में अर्पित कर रहे हैं। उस समय तक भी सबकी नजरें तलाश रही थीं, प्रश्नायित मुद्राएं पूछ रही थीं -

दीनों - दुःखियों, अनाश्रितों, असहायों की आंखों के आंसू पोंछने वाला मानवता का मसीहा कहां है? युग चुनौतियों के समक्ष सीना ताने खड़ा रहने वाला वीर योद्धा आज सुखासन में क्यों बैठा है? अन्याय के विरुद्ध सिंह गर्जना करने वाला, अहिंसात्मक प्रतिकार करने की भावना भरने वाला आज मौन क्यों है। आधी दुनियां को उसके अस्तित्व का अहसास करानेवाला, उन्हें नई पहचान देने वाला, उन्हें समानदर्जा देने का प्रवल पक्षधर, संसद में आज उनकी वकालत क्यों नहीं कर रहा है? अपने शांतिदूतों के साथ अध्यात्म-चर्चा में संलीन महायोगी आज अकेला किस प्रयोग-प्रक्रिया में संलग्न है? व्यक्ति-व्यक्ति की नब्ज पकड़ने और पहचानने वाले हाथ निष्क्रिय क्यों हो गये हैं? सबको बोध, प्रवोध, संबोध और प्रतिबोध देने वाला महासूर्य आज किस बादल की ओट में है? चतुर्विध-संघ की सारणा-वारणा में सजग प्रहरी की भूमिका का निर्वाहक आज खुली आंखों से केवल देखता ही क्यों हैं? उनकी दायी आंख से बहने वाला करुणा का श्रोत सूख क्यों गया?

तथा बांई आंख से सवको नजरबन्द करने वाली अनुशासन की लौ बुझ क्यों गयी? समय का अतिक्रमण होने पर सबको घड़ी दिखाने वाले समयज्ञ ने असमय में महाप्रयाण क्यों किया? जिज्ञासा के पंख को समाधान का आकाश देने वाला स्वयं अनन्त की यात्रा में प्रस्थित क्यों हुआ? नित्य नवीन योजना बनाने वाला अनायोजित काल का मित्र क्यों वना? उस महान् स्वप्नदृष्टा ने क्यों सवको यह स्वप्निल दृश्य दिखाया? उमड़ते जमघट को देखकर अस्वस्थता की स्थिति में भी अपने आपको न रोक सकने वाला पौरुष का वह प्रज्वलित दीप अव क्यों नहीं जलता? कहां हैं पुरी परिषद की रसमयता में डुवोने वाले वे प्रेरक-वेधक वोधक सुमधुर स्वर

लहरियां? णमोक्कार मंत्र, तिक्खुतो, सामायिक, अर्हत् वन्दना से लेकर आगम के गूढ़ रहस्यात्मक सूत्रों की नय सापेक्ष सरल, सरस, सुबोध शैली में व्याख्या करने वाले महाव्याख्याता की ओजस्वी, उदात्त वाणी आज मुखर क्यों नहीं है?

अध्यात्म और विज्ञान, धर्म और राजनीति, संत और नेता के पारस्परिक सम्बन्धों एवं व्यवहारों को नई सोच देने वाला उज्ज्वल नक्षत्र आज अदृश्य क्यों है? हर अन्धेरे कोने को उजालों में परिवर्तित करने की उदग्र अभीप्सा रखने वाला वह इच्छापुरुष चिरनिद्रा में लीन क्यों है? अ इ उ ऋ लृ के उच्चारण जितने समय में उस महापुरुष ने क्यों अपनी माया समेट ली?

सब यही जानना चाहते हैं - इंसान में इंसानियत का बीज वपन करने वाला, जाति, वर्ग, लिंग, वेश, सम्प्रदाय की दीवारों को तोड़कर अणुव्रत के माध्यम से मानव को एक और नेक बनाने वाला - तनावग्रस्त को प्रेक्षा का प्रयोग सिखाने वाला, उम्र की डाल पर खिलते नन्हें फूलों को जीवन विज्ञान से के सलिल से सद्संस्कारों का सिंचन देने वाला, अशान्त विश्व को शान्ति का सन्देश देने वाला हिंसा और आतंकवाद के सुलगते सवालों को अहिंसा प्रशिक्षण के द्वारा समाहित करने वाला, देशी-विदेशी सबके बीच अपनी अलग पहचान बनाने वाला, निराशा, कुंठा, घुटन और अवसादभरे मानस एवं वातावरण में संजीदगी पैदा करने वाला, सकारात्मक सोच के साथ जीवन यात्रा के सम्यक् निर्वहन की प्रेरणा देने वाला, महामानव कहां चला गया? कहां खो गया?

मन, वचन और कर्म की शुद्धि से संयमी जीवन का प्रशिक्षण देने वाला, सदा सक्रिय और सजग रहने और रखने वाला, गलती करने पर किसी को भी नहीं बख्शने वाला, अनुकूलता और प्रतिकूलता में समस्थिति बनाये रखने वाला, बच्चों-बूढ़ों, युवक-युवतियों सबमें अपनत्व की मिठास घोलने वाला, सबको संघभक्त और स्वामीभक्त बनाने वाला, महामना आचार्य भिक्षु से लेकर पूज्य कालूगणी तक की हर प्रभावक भूमिका को आत्मसात् करने वाला, तेरापंथ की ध ारती को विकास का नया क्षितिज देने वाला, महात्मा शेखसादी द्वारा प्ररूपित महानता की कसौटी पर खरा उतरने वाला वह चैतन्य पुरुष कहां है? कहां है? कहां है? ●●●

डॉ एस० राधाकृष्णन् ने कहा था :-

● हम ऐसे युग में रह रहे हैं, जब हमारी जीवात्मा सोयी हुई है, आत्मबल का अकाल है और सुस्ती का राज्य है। हमारे युवक तेजी से भौतिकवाद की ओर झुकते चले जा रहे हैं। इस समय किसी भी ऐसे आन्दोलन का स्वागत हो सकता है जो आत्म-बल की ओर ले जाने वाला हो। इस समय हमारे देश में आचार्य श्री तुलसी द्वारा प्रणित अणुव्रत आन्दोलन ही एक ऐसा आन्दोलन है, जो इस कार्य को कर रहा है। यह काम ऐसा है कि इसको सब तरफ से बढ़ावा मिलना चाहिए।

बीसवीं शताब्दी के शिखर पुरुष

मुनि श्री राकेश कुमार

विश्व पटल पर कतिपय ऐसे विशिष्ट व्यक्तित्व अवतरित होते हैं, जिनके अनुपम अवदानों से सारा मानव-समाज उपकृत होता है । उनके व्यक्तित्व की सौरभ क्षेत्र और काल सीमा से अतीत होती है । अपने पुरुषार्थ और विचार-वैभव से वे समाज में अभिनव चेतना और जागृति का संचार करते हैं । उन महापुरुषों की परंपरा में गणाधिपति श्री तुलसी का नाम प्रमुख है । वे २०वीं शताब्दी के शिखर पुरुष थे । उनका व्यक्तित्व बहुआयामी था । उनके पुरुषार्थ की लेखनी से इतिहास के पृष्ठों पर अनेक अमिट रेखाओं का निर्माण हुआ । एक धर्माचार्य के रूप में उन्होंने जो पवित्र और प्रेरक रेखाएं अंकित की, यहां हम उन्हीं की चर्चा कर रहे हैं ।

अणुव्रत अनुशास्ता गुरुदेव श्री तुलसी मानवता के मसीहा थे । उन्होंने अणुव्रत आंदोलन के माध्यम से मानव-धर्म के व्यावहारिक स्वरूप का प्रतिपादन किया । संप्रदाय विशेष के आचार्य होते हुए भी उन्होंने स्वयं को संप्रदायवाद की संकीर्ण धारा में आबद्ध नहीं किया । "पहले इन्सान-इन्सान फिर हिन्दू या मुसलमान" उनका यह प्रिय और प्रसिद्ध उद्घोष उनकी उदार दृष्टि का परिचायक है ।

गुरुदेव श्री तुलसी का चिन्तन पूर्वाग्रह से मुक्त था । जो मेरा है वही सत्य है, इस चिन्तन को



पंडित जवाहरलाल नेहरू आचार्य श्री तुलसी के साथ

उन्होंने उचित नहीं समझा । जो सत्य है, वह मेरा है, उन्होंने इस दर्शन पर बल दिया । उनका जीवन अनेकान्तवाद की प्रयोगशाला था । आज अनेक धर्मगुरुओं में विरोधी विचारों के प्रति घृणा और असहिष्णुता दृष्टिगोचार होती है । पर गणाधिपति का चिन्तन इसका सर्वथा अपवाद था । वे विरोधी विचारों के प्रति भी उदार और सहिष्णु थे । गुरुदेव के सम्मुख अनेक बार विरोधी वातावरण और प्रसंग उपस्थित हुए । उस समय उनका मानसिक संतुलन अद्भुत था । सबके लिए प्रेरणादायक था । मैंने स्वयं निकटता से इसका अनुभव किया । वैचारिक भिन्नता के कारण यदि कोई विरोध होता तो उसके सार्थक तत्व का प्रसन्नता से स्वागत करते थे । विक्रम संवत् २००६ में गुरुदेव का पावस-प्रवास जयपुर में था । वहां विरोध का वातावरण बना । उसके मूल में सांप्रदायिक आग्रह और ईर्ष्या की भावना थी । उस समय गुरुदेव ने अपने प्रवचन में उस परिस्थिति पर विचार प्रकट करते हुए निम्न संस्कृत श्लोक को उद्धृत किया–'आक्रुष्टेन मतिमता, तत्वार्थान्वेषणे मतिः कार्या । यदि सत्यं कः कोपः स्यादनतृं किन्नुकोपेन ।'

जिसका विरोध होता है, उसे यथार्थ का चिन्तन करना चाहिए । यदि विरोध सही है तो वह किसी पर क्रोध क्यों करे, यदि सही नहीं है तो भी क्रोध क्यों करे । इसमें उनकी यथार्थवादिता, सहिष्णुता और सारग्रहिता की दृष्टि परिलक्षित होती है ।

धर्म मशाल की रोशनी के समान है, संप्रदाय उसे थामने वाले डंडे के समान है । धर्म फल के मधुर रस के समान हे। संप्रदाय उसे धारण करने वाले छिलके और आवरण के समान ह । धर्म और संप्रदाय के संबंध में गुरुदेव अपना चिन्तन उपरोक्त उदाहरणों से स्पष्ट करते थे । धर्म के विकास में संप्रदाय के महत्व को स्वीकार करते हुए भी उनकी दृष्टि सदा आध्यात्मिक धर्म पर केन्द्रित रहती थी ।

गुरुदेव श्री तुलसी धर्म को परम विज्ञान मानते थे । उन्होंने धार्मिक सिद्धांतों की तर्क-संगत और वैज्ञानिक व्याख्या पर विशेष बल दिया । धर्म के क्षेत्र में व्याप्त अंधविश्वास और रुढ़िवाद के विरुद्ध उन्होंने महान् क्रांति की । "विवेगे धम्म माहिए" भगवान महावीर की वाणी का यह आगम सूत्र उन्हें बहुत प्रिय और अभीष्ट था । एक अंग्रेज लेखक ने लिखा है–जो सत्य का साक्षात्कार करना चाहता है, उसे क्या, क्यों, कैसे, कब और कहां, हर संवाद में इन पांचों प्रश्नों को सामने रखना चाहिए । गुरुदेव ने इस सूत्र को बहुत उपयोगी माना था तथा समाज में इसका विकास किया ।

गुरुदेव श्री तुलसी का ७५वां वर्ष योगक्षेम वर्ष के रूप में मनाया गया । जिसमें धार्मिक सिद्धांतों और आदर्शो की तर्क-संगत व वैज्ञानिक व्याख्या की भूमिका का निर्माण हुआ । समाज को आध्यात्मिक-वैज्ञानिक व्यक्तित्व के विकास की दृष्टि प्रदान की गई ।

आज धर्म उपासना केन्द्रों में सीमित हो गया है । दैनिक जीवन से दूर हो रहा है । गुरुदेव ने अणुव्रत के द्वारा धर्म को देनिक जीवन के साथ जोड़ने का भागीरथ प्रयास किया । शिक्षा, व्यापार, राजनीति आदि समाज के सभी क्षेत्रों में सत्य, अहिंसा व संयम प्रधान धर्म की प्रतिष्ठा होनी

चाहिए, उनका यह चिन्तन सबके लिए प्रेरणादायक है । उन्होंने आचरण और व्यवहार के द्वारा धार्मिक सिद्धांतों की व्याख्या और परिभाषा प्रस्तुत करने की दृष्टि दी । सिर्फ शेखी बघारने और दुहाई देने का उनके विचार से कोई महत्व नहीं था । बिहार की पदयात्रा में गुरुदेव का पटना के एक चर्च में जाना हुआ । वहां पादरी महोदय ने कहा—ईसाई धर्म में शत्रु के प्रति भी मित्रता का व्यवहार करने का संदेश दिया गया है । गुरुदेव ने कहा—मैं आपके विचार का स्वागत करता हूं, पर इन शिक्षाओं का जीवन में अनुसरण होना चाहिए । जैन धर्म में इससे भी आगे हर प्राणी को मित्र समझने पर बल दिया है ।

एक धर्माचार्य के रूप में गुरुदेव ने अपने जीवन में दोनों प्रकार की भूमिकाओं का जागरूकता से निर्वाह किया । उन्होंने धर्म को अंधविश्वास, रूढ़िवाद और पूर्वाग्रह की कारा से मुक्त किया । दूसरी ओर उन्होंने भौतिकवाद की एकांगी धारा की ओर बहते जन-मानस को अध्यात्मवाद की ओर मोड़ा । मानव समाज की आध्यात्मिक और सांस्कृतिक चेतना और जागरण उनके जीवन का मुख्य लक्ष्य था । अध्यात्मविहीन प्रगति को उन्होंने उचित नहीं समझा । भारतीय संविधान में प्रयुक्त धर्म-निरपेक्षता शब्द के स्थान पर उन्होंने संप्रदाय निरपेक्षता के प्रयोग का सुझाव दिया । भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू से इस विषय पर उनकी गंभीर मंत्रणा और चर्चा हुई थी। पंडित नेहरू गुरुदेव के आध्यात्मिक विचारों से बहुत प्रभावित हुए । आखिरी वर्षों में धर्म और अध्यात्म के प्रति उनके चिन्तन में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ ।

'धार्मिक और आध्यात्मिक व्यक्ति समाज के प्रति विमुख होता है । गुरुदेव ने अपने जीवन और दर्शन से इस भ्रांत धारणा का निराकरण किया । अध्यात्म और व्यवहार के संबंधों पर उन्होंने स्पष्ट मार्ग-दर्शन किया । जीवन के आंतरिक और व्यावहारिक दोनों पक्षों में उन्होंने संतुलन स्थापित किया । गुरुदेव श्री तुलसी ने धर्म और जाति के नाम पर व्याप्त भेदभावों और विषमताओं के उन्मूलन हेतु क्रांतिकारी उपक्रम किए । उनके प्रवचनों में हर जाति और वर्ग के व्यक्ति सम्मिलित होते थे । आज से लगभग ५० वर्ष पूर्व राजस्थान के एक गाँव में उनका प्रवचन हो रहा था । उस समय कुछ हरिजन वंधु भी बिछी हुई दरी पर आकर बैठ गए । वहां पहले से बैठे हुए लोगों ने उनको उठाने का प्रयास किया । जब आचार्य श्री तुलसी इसकी जानकारी मिली तो उन्होंने अपने प्रवचन में कहा—मेरी सभा में जाति-पांति का भेदभाव उचित नहीं है । किसी भी व्यक्ति को जाति के आधार पर छोटा-बड़ा मानना मैं पाप मानता हूं । यहां से किसी को भी उठाने का तात्पर्य मुझे उठाना है । इसके वाद इस प्रकार की घटनाओं की पुनरावृत्ति नहीं हुई ।

आज अणुव्रत अनुशास्ता गुरुदेव श्री तुलसी का पार्थिव शरीर हमारे मध्य नहीं है, पर उनके द्वारा प्रज्वलित आध्यात्मिक ज्योति युग-युग तक मानव समाज का मार्ग दर्शन करती रहेगी ।

आचार्य तुलसी ने कहा-

जिस समाज का एक वर्ग अतिसंपन्नता और विलासिता की जिन्दगी जीता हो और दूसरा वर्ग जीवन की न्यूनतम अपेक्षाओं को भी पूरा न कर सके-वह स्वस्थ समाज नहीं है।

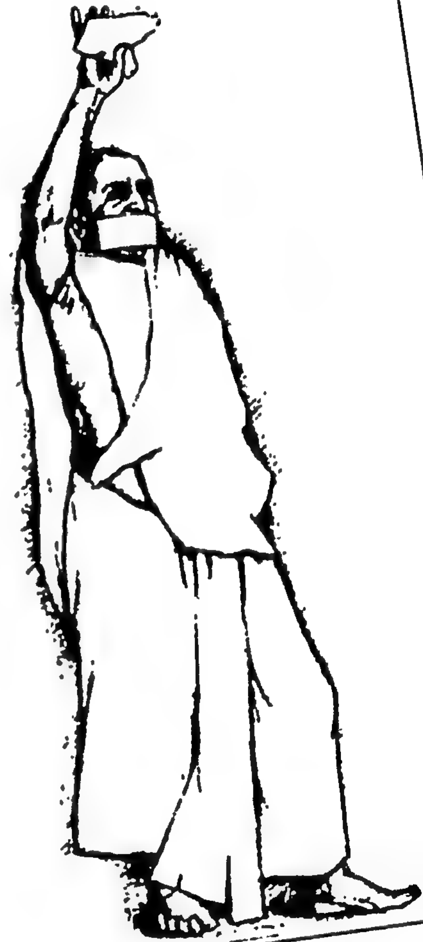


मानव-जन्म विकास के लिए है, विनाश के लिए नहीं। व्यक्ति और समाज निष्ठा, सादगी और सत्य के अन्वेषण से बढ़ते हैं। हमारे आचार और विचार में संयम होना चाहिए ताकि मनुष्य अपने नैतिक मूल्यों को सुरक्षित रख सके।
आचार्य श्री तुलसी इन नैतिक मूल्यों के प्रसार के काम में लगे हैं उनके ऐसे उपक्रमों की आज राष्ट्र को ज्यादा जरूरत है।

-राजीव गांधी

आचार्य श्री तुलसी अणुव्रत आंदोलन के प्राण

साध्वी सरलयशा



अखिल विश्व को अध्यात्म से अनुप्राणित नैतिकता में प्रतिष्ठित देखने का हिमालयी संकल्प संजोये एक युगस्रष्टा देव शिशु स्वर्ण विमान के स्वप्न सह, मा वदना की कुक्षी में अवतरित हुआ । जिसके कालजयी कारनामों ने मैथिलीशरण गुप्त की पंक्तियों को सार्थकता प्रदान की—

''संदेश यहाँ मैं नहीं स्वर्ग का लाया ।
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आया ॥''

भूतल को सुखी-स्वर्गपुरी बनाने के प्रयत्न आदिकाल से जारी हैं । समय-समय पर अनेक गणमान्य मनीषियों द्वारा मानव कल्याणकारी योजनाएँ, परिकल्पनाएँ प्रस्तुत की गयीं । इस शताब्दी की प्रमुख रही— राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की 'ग्राम स्वज्य-रामराज्य' की कल्पना, विनोबा भावे की 'सर्वोदय समाज' की कल्पना, नेहरूजी की पंचशील योजना आदि । पर अध्यात्मपुरुष आचार्य श्री तुलसी की व्यक्ति को ईमानदार, चरित्र संपन्न बनाकर स्वस्थ विश्व समाज की संरचना वाली अणुव्रत आं योजना अद्वितीय है । वह कितना पुष्कल-पुण्य क्षण रहा होगा जिस समय मानव विकास का आंदोलन अस्तित्व में आया । जिसमें मुखर है एक महाप्रतापी, महनीय महापुरुष का मैत्री-करुणापूरित हृदय जो मानव को अपने से यानी मानवत गया ।

आंदोलन की पृष्ठभूमि मे जाये तो ज्ञात होगा कि देश की आजादी के पूर्व एवं पश्चात् द्रौपदी के चीरवत् फैलने वाली विकट समस्याओं के विराम हेतु, देश की आजादी को अक्षुण्णता प्रदान करने के लिए राष्ट्रसंत आचार्य तुलसी ने नैतिक एवं चारित्रिक उत्थान का आह्वान अणुव्रत आंदोलन के जरिये किया। जोशीले स्वरो मे देशवासियों से कहा– "असली आजादी अपनाओ...। भारतीय सस्कृति एवं उच्च आदर्शो के संरक्षण हेतु मानव जीवन की दूषित वृत्तियो के मूलोच्छेदन पर ध्यान केन्द्रित किया। यथार्थ के धरातल पर यह अनुभव किया कि क्रूरता, हिंसा, अनैतिकता, शोषण, भ्रष्टाचार, अन्याय, उत्पीड़न जैसी अनेकानेक समस्याओ की तह मे अशुद्ध वृत्ति की खाद है। व्रत वृत्ति परिशोधन की पवित्र प्रकिया है। क्यो नही इसी ऋषि प्रक्रिया का उपभोग वैयक्तिक और सार्वजनिक-व्यापक क्षेत्र मे किया जाए ? इस अंत: प्रेरणा ने अणुव्रतो को आधुनिक परिवेश मे आंदोलन का स्वरूप प्रदान किया।

आंदोलन को अपने शैशव काल मे एक और जनमानस में व्यापक प्रतिष्ठा मिली। प्रथम अधिवेशन की अनुगूँज सात समंदर पार पहुँच गई। इसकी चर्चा इंग्लैड, अमेरिका, जापान के समाचार-पत्रो में हुई। न्यूयार्क के प्रसिद्ध साप्ताहिक टाइम (१५-५-१९५०) में 'एटोमिक बॉस' शीर्षक से यह संवाद प्रकाशिक हुआ। आचार्य तुलसी कहते है– "जब समस्त भारत को अणुव्रती बना चुकेगे। तब शेष संसार को भी अणुव्रती बनाने की उनकी योजना है।" दूसरी तरफ कटु आलोचना का शिकार भी आंदोलनकर्ता को होना पड़ा। जिसमें अणुव्रत अनुशास्ता के श्रद्धालु भक्त और गैर श्रद्धालु दोनो ही सरीके थे। कल्पना से परे की बात है कि नैतिक एवं चारित्रिक आंदोलन का भी भला कोई विरोध कर सकता है ? पर यह सच है। अजैन लोगो ने अपनी प्रतिक्रिया मे कहा– "आचार्य तुलसी अणुव्रत आंदोलन के माध्यम से सबको जैन बनाना चाहते है।" दूसरी तरफ अनुयायियों ने तीखे शब्दों में विरोध किया– "आचार्य श्री जैन-जैनेतर, सम्यगदृष्टि और मिथ्यादृष्टि–सभी को एक आसन पर बिठाने का प्रयत्न कर रहे हैं।" ऐसे विरोधी वातावरण के बावजूद भी अनुशास्ता का फौलादी निर्णय-अभियान बदला नही, रुका नही बल्कि उन्होने लोगो को विश्वस्त किया, समझाया– "धर्म किसी की पैतृक संपत्ति नहीं है, चरित्र प्रत्येक व्यक्ति का धर्म है। प्रत्येक व्यक्ति उसकी आराधना का अधिकारी है।" आत्मविश्वास के साथ स्पष्ट शब्दों मे कहा– "मैने जनता के चरित्र विकास के लिए जो व्यापक चरण उठाया है, वह मेरी आस्था का प्रतिबिम्ब है और हमारी परंपरा के अनुरूप है।" मार्ग स्वत: प्रशस्त बनता गया।

'सर्वे भवन्तु सुखिन:' की उदात्त भावना से अनुस्यूत आंदोलन दिन-प्रतिदिन गति से प्रगति करता गया। गंगा की धारवत् जनमानस को पवित्र बनाता हुआ जन-जन के आदर्श का प्रतीक ही नही रहा जीवन का अंग भी बनता गया। अनेक प्रबुद्ध लोग इससे जुड़ते गए और राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद ने आचार्य श्री तुलसी को निवेदन किया– 'अणुव्रत आंदोलन का प्रचार-प्रचार तीव्र गति से होना चाहिए और पुलकितमना भावविभोर होकर यह भी

कहा– "यदि आप मुझे कोई पद दें तो मैं अणुव्रत के समर्थक का पद लेना चाहता हूँ।' पूज्यवर ने उत्तर में कहा– 'मैं आपको अणुव्रती का पद देना चाहता हूँ।' राजनीति से जुड़े व्यक्तियों ने भी आंदोलन का हृदय से स्वागत किया।

अणुव्रत आंदोलन क्या है ? यह प्रश्न बड़ा जटिल था पर अनुशास्ता श्री तुलसी ने इसे सरलतम परिभाषाएँ देकर बड़ा आसान बना दिया। अणुव्रत आंदोलन आर्थिक, सामाजिक या राजनैतिक क्रांति नहीं यह धर्म क्रांति का आंदोलन है। नैतिकता का आंदोलन है। आध्यात्मिक जागृति का आंदोलन है। मानवीय मूल्यों के प्रतिष्ठापन का आंदोलन है। मानव श्री सुप्त क्षमता के जागरण का आंदोलन आचार शुद्धि, व्यवहार शुद्धि का आंदोलन है। धर्म और सामाजिक चेतना के अपूर्व संगम का आंदोलन है। जन-जन में नैतिकता की ज्योति प्रज्जवलन का आंदोलन है। असाम्प्रदायिक आध्यात्मिक चेतना के जागरण का आंदोलन है। जन भाषा में कहें तो बीसवीं सदी में नैतिक चारित्रिक धर्म की स्फूरणा पैदा कर इक्कीसवीं सदी को कृतार्थ करने वाले महायज्ञ का नाम है अणुव्रत आंदोलन।

आंदोलन का पवित्र उद्देश्य ही इसकी व्यापकता का मूल मंत्र है। यदि उद्देश्य मानव का चरित्र विकास, आत्मोत्थान, आचरण शुद्धि, स्वस्थ समाज सरचना न होकर जैन धर्म एवं अपने तेरापंथ संप्रदाय को फैलाने का व्यापक बनाने का होता तो यह कभी निस्तेज-निष्क्रिय होकर ठप्प हो जाता। पर इसके प्राण देवता ने इसके प्रारूप में ही परार्थ और परमार्थ भावना का संचार किया फलत: यह परागवत् जन-जन को सुवासित करता ही गया। आज भी वही क्रम जारी है।

राष्ट्र निर्माण, जनकल्याण, चरित्र विकास, आत्मोदय और विश्व बन्धुत्व के महृद् उद्देश्य से अभिभूत अणुव्रत आंदोलन का भविष्य उज्जवलतम है इसमें कोई संदेह नहीं। इसकी निष्पत्तियाँ शुभ भविष्य का प्रतीक है। युगों-युगों तक मानव के नैतिक चारित्रिक संरक्षण-संवर्धन का आशीर्वाद इसे अपने अनुशास्ता से प्राप्त है। अपनी आध्यात्मिक प्राण शक्ति से अणुव्रत अनुशास्ता श्री तुलसी ने आंदोलन को इतना प्राणवान् बना दिया कि सदियों तक इसकी अनुगूँज तरंगित रहेगी। धर्मक्रांति एवं सामाजिक क्रांति के सूत्रधार राष्ट्रसंत को सच्ची श्रद्धांजलि समर्पित करने हेतु हम सब मानसिक संकल्प करें कि अणुव्रत आंदोलन को सदैव तन-मन: प्राणों में युवा बनाएँ रखेंगे।

○ डॉ० जाकिर हुसैन ने कहा

○ आचार्य तुलसी मानवता के पुजारी है। उनका आंदोलन हृदय-परिवर्तन के माध्यम से काम करने वाला अभियान है विचारों और अन्त:करण के परिवर्तन से जो नयी ऊर्जा और शक्ति जीवन में संप्रेषित होगी, वही वास्तव में अणुव्रत आंदोलन की उपलब्धि होगी। इसी उद्देश्य को लेकर अणुव्रत को और अधिक व्यापक बनने का प्रयास करना चाहिए।

'अणुव्रत' आन्दोलन से देश और समाज को सही दिशा मिली है। आचार्य श्री तुलसी के अथक प्रयासों से राष्ट्रव्यापी भ्रष्टाचार का उन्मूलन और वर्तमान की ज्वलन्त समस्याओं का समाधान हो सकेगा। हमारे देश में सदाचार और मानवीय मूल्यों को प्रस्थापित करने का कार्य 'अणुव्रत' ही कर सकता है।

-गुलजारीलाल नन्दा



जब युवा क्षमताएँ बासों उछलने लगती थी

पदमचन्द पटावरी

मेरे सामने तीन दशक से भी अधिक वर्षों के छोटे से कालखण्ड का झरोखा है । यौवन की दहलीज पर पैर रखने के साथ श्रद्धेय आचार्य श्री तुलसी से निकट साक्षात्कार के वे प्रथम क्षण आज भी रोमांचित करते रहते हैं । अध्यात्म जगत के महान नक्षत्र की तेजस्वी आँखों से प्रवाहित कृपादृष्टि से निर्झर को धारण करना कठिन पर सौभाग्य का प्रतीक था । बात तकरीबन तब की है जब केन्द्रीय स्तर पर तेरापंथ युवा संगठन का श्री गणेश हो चुका था । यद्यपि तेरापंथी महासभा के रूप में श्रावक समाज की प्रतिनिधि केन्द्रीय संस्था वर्षों से कर्मशील थी उसमें महिलाओं एवं युवाओं के प्रवेश के पर्याप्त अवसर थे पर गुरुदेव की पैनी दृष्टि एवं भविष्य में युवाओं के सलक्ष्य शक्ति संयोजन की दृष्टि से स्वतंत्र युवा मंच की अपेक्षा आपने अनुभव की । श्रावक समाज में अपने आराध्य के प्रति असीम श्रद्धाभाव के बावजूद युवाओं का स्वतंत्र संगठन के रूप में प्रभावी बनना बुजुर्ग पीढ़ी के गले नहीं उतरने वाली घटना थी । ऐसे मत व्यक्त किए गए कि इस उच्छृंखल पीढ़ी को स्वतंत्र मंच देना, हितकारी नहीं होगा । पर पूज्य गुरुदेव भविष्य दृष्टा थे, युग की नब्ज के पारखी थे । आपने अपना सम्पूर्ण आशीर्वाद युवा पीढ़ी को प्रदान किया क्रमशः युवा क्षमताएँ संयोजित होने लगी ।

अखिल भारतीय तेरापंथ युवक परिषद के नाम से गठित केन्द्रीय युवा संगठन, जिसे आगे चलकर तेयुप के नाम से संक्षिप्त पर सशक्त पहचान मिली का प्रथम वार्षिक अधिवेशन मात्र पांच युवाओं की सहभागिता के साथ सम्पन्न हुआ । वहाँ आज हजारों-हजारों युवाओं के उमड़ते उत्साह, श्रद्धा और क्षमताओं को देखकर उस महान स्वप्नदर्शी की सूझबूझ को अतीत के आईने में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है ।

श्रद्धेय गुरुदेव की चुम्बकीय युगल आँखों ने मेरे जैसे सैंकड़ों, हजारों युवाओं को अपनी ओर आकृष्ट किया । सिर्फ इतना ही नहीं उनमें एक जिजीविषा पैदा कर दी कि वे सब कुछ भूलकर संघ और समाज के लिए कर्म करने को तत्पर हुए । उनकी प्राथमिकताएँ बदल गई । गुरुदेव दृष्टि उनके लिए सर्वोपरि बनती चली गई । आचार्य प्रवर ने भी युवाओं को हर क्षण प्रोत्साहित किया, प्रेरित किया, मान दिया और इतनी शुभकामनाएँ प्रदान कि ऐसा भी

कोई कर्म नही रहा जिसे युवाशक्ति करने में सक्षम न रही हो ।

महामहिम गुरुदेव के अनुग्रह में मुझे अ०भा०तेरापंथ युवक परिषद के विशिष्ट दायित्वों से लम्बे समय तक आबद्ध रहने का अवसर मिला । स्मरण कर रहा हूँ राणावास के उन क्षणो को जब अपने प्रथम अध्यक्षीय दायित्व को स्वीकार कर मैंने गुरुदेवश्री से अनुग्रह कर कुछ कर्म सौंपने का अनुनय किया था । हम चाहते थे कि युवाओं को स्वतंत्र रूप से कोई जिम्मेदारी मिले ताकि गुरु इंगित की योजनाबद्ध ढंग से आराधना की जा सके । आपश्री ने कृपा कर संस्कार निर्माण के विविधमुखी कार्यक्रमो को संघीय स्तर पर तेयुप के माध्यम से संचालित करने की दृष्टि प्रदान की । ज्ञानशाला, तेयुप संस्कार केन्द्र, जैन संस्कार विधि का प्रचार-प्रसार नियोजन, तेयुप मंडल, तेयुप युवावाहिनी, बालकों में कार्यक्रम आदि ऐसे उपक्रम थे और है जिसकी जड़ें आज जमीं में जा चुकी है । ये वे आह्लादकारी क्षण थे जब

> *श्रद्धेय गुरुदेव की चुम्बकीय युगल आँखों ने मेरे जैसे सैंकड़ों, हजारों युवाओं को अपनी ओर आकृष्ट किया । सिर्फ इतना ही नहीं उनमें एक जिजीविषा पैदा कर दी कि वे सब कुछ भूलकर संघ और समाज के लिए कर्म करने को तत्पर हुए । उनकी प्राथमिकताएँ बदल गईं । गुरुदेव दृष्टि उनके लिए सर्वोपरि बनती चली गई । आचार्य प्रवर ने भी युवाओं को हर क्षण प्रोत्साहित किया, प्रेरित किया, मान दिया और इतनी शुभकामनाएँ प्रदान कि ऐसा भी कोई नहीं रहा जिसे युवाशक्ति करने में सक्षम न रही हो ।*

सम्पूर्ण युवासमाज अपने आराध्य से वरदान प्राप्त कर प्रसन्नता और उत्साह से झूम उठा था ।

केन्द्रीय तेयुप के जोधपुर अधिवेशन के अवसर पर हजार से अधिक युवाओं की उपस्थिति के साथ विशिष्ट रूप से आयोजित विराट रैली जब प्रवचन पंडाल पहुँची तब गुरुदेवश्री स्वयं विशिष्ट रूप से पंडाल में पधारे और युवाओं के छलकते उत्साह, जोश और श्रद्धा पर अपने विश्वास की मुहर अंकित की । संख्या के गणित के साथ-साथ उस अधिवेशन में क्षेत्रों के ऐसे कर्मठ युवाओं का प्रतिनिधित्व हुआ था जिसके कर्तृत्व, अनुशासन, निष्ठा और सामंजस्य ने गुरुदेव सहित सबको प्रभावित किया । निश्चित रूप से उस वक्त के संसाधनो को देखते हुए वह अपने ढंग की एक मिशाल थी । उपस्थित युवाओ ने अपने

आराध्य की कृपा, मंगल आशीर्वाद एवं विश्वास को जब लहर बनाकर बहते निहारा तो हजारों युवा हाथ उत्साह और हर्ष से झूम उठे थे ।

वक्त बदल गया है, परिवेश बदल रहे हैं, आज तेयुप में नई पीढ़ी का आगमन हो चुका है । केन्द्रीय तेयुप के मार्ग निर्देश में दो सौ से अधिक शाखाएँ एवं हजारों-हजारों कर्मशील युवा साथी क्रियाशील हैं । कार्यक्रमों की लम्बी शृंखला सृजित हो गई है । संगठन, सेवा और संस्कार की त्रिवेणी कार्यक्रमों का केन्द्र बिन्दु है । धर्मसंघ के लिए किसी भी प्रकार का दायित्व ओढ़ने का मादा हमारे युवा रखते हैं । केन्द्र युवाओं पर भरोसा कर दायित्व ओढा सकता है । युवकों में सर्वांगीण संपन्नता परिलक्षित हो रही है । आर्थिक, शैक्षणिक एवं अन्यान्य क्षेत्रों में युवाओं द्वारा प्राप्त संतुलित सफलताओं का मुख्य श्रम पूज्य गुरुदेवश्री को है जिन्होंने सदैव युवाओं को हर क्षण, हर क्षेत्र में सुसंस्कारी बने रहने की सीख दी थी ।

जो संगठन अपने प्रारम्भ के वर्षों में अपने ही लोगों की आशंका और कौतूहल का प्रतीक माना गया उस संगठन के द्वारा ही आज धर्मसंघ की अन्य संस्थाओं को कार्यकर्त्ताओं की आपूर्ति की जा रही है । आज भी तेयुप से तैयार अनेकों युवासाथी धर्मसंघ के लिए अपने दायित्व बोध की अनुपालना अच्छे ढंग से कर रहे हैं ।

गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी के महाप्रयाण की प्रथमवर्षी का अवसर हमारे सामने है, वे सशरीर हमारे बीच नहीं हैं पर आज भी आपश्री ज्ञात/अज्ञात प्रेरणाएँ युवाओं की क्षमताओं को शतगुणित करती रहती हैं । हम अतीत की धरोहर के रूप में उन सभी प्रसंगों को आत्मसात किये चलते रहेंगे जिनको स्मृति पटल पर रखने से हमारा उत्साह वर्धमान बनता रहेगा । गुरुदेवश्री के युवापीढ़ी के नाम ढेर सारे सपने थे । वे सर्वांगीण श्रेष्ठ युवापीढ़ी की शृंखला के आकांक्षी थे, जो विश्व के बदलते परिदृश्य में युनीक हो, नम्बर वन हो और अपनी विशिष्ट पहचान बना सके । सोचता हूँ तेयुप से जुड़े युवा साथी इस दिशा में कदम बढ़ाकर अपने सृजनहार को सच्ची श्रद्धांजलि समर्पित करेंगे ।

● आचार्य तुलसी ने कहा –



● मैं यही कहूँगा कि अगर कोई भगवान् मनुष्य को जातियों में बाँटेगा, एक व्यक्ति को जन्म से ऊँचा तथा एक को जन्म से नीचा बनाएगा तो कम से कम मैं तो उसे भगवान् मानने को तैयार नहीं हूँ ।

● मैं तो उसी धर्म का प्रचार-प्रसार करने में लगा हुआ हूँ, जो त्रस्त, दु:खी व व्याकुल मानव जीवन को आत्मिक सुख-शांति व राहत की ओर मोड़ने वाला है । जो नारकीय धरातल पर पड़े जन-जीवन को सर्वोच्च स्वर्गीय धरातल की ओर आकृष्ट करने वाला है ।

परम चक्षुष्मान गुरुदेव तुलसी

मुनि धर्मचन्द्र 'पीयुष'

संसार में धन-वैभव, इन्द्रिय-भोग, सत्ता-सुख सब कुछ सुलभता से मिल सकता है परन्तु आंख का मिलना सुलभ नहीं होता। पार्थिव आंखें जगत को देखने के लिए पदार्थ को जानने समझने के लिए होती हैं, उनके अनेक प्रकार हो सकते है संस्कृत कवि ने कहा हैः-

गावो गन्धेन पश्यन्ति, शास्त्रै पश्यन्ति पण्डिताः।
चारैः पश्यन्ति राजानश्चश्रुर्म्यामितरे जना।।ः

गायें गन्ध से, पण्डित शास्त्र से, राजा गुप्तचरों से तथा दूसरे लोग चर्म चक्षुओं से पदार्थ और यथार्थ को जान लेते हैं किन्तु वस्तु सत्य तथा घटित होने वाली घटनाओं को देख लेने वाली आंखें किसी विरल पुण्यात्मा को ही प्राप्त होती है जिन्हें वे प्राप्त हैं वे धन्य हैं, उनका जीवन सार्थक है। इतना ही नहीं वे भी भाग्यशाली हैं जिन्हें ऐसे चक्षुदाता गुरु का योग उपलब्ध होता है। चक्षुदाता परमपुरुष होता है। तीर्थंकर को "चक्खुदयाणं" कहा गया है। ज्ञान चक्षु-विवेक चक्षु के दाता होते हैं -तीर्थंकर। यथार्थ ज्ञान व सम्यग् व्यवहार के लिए अपेक्षित हैं- विवेक की आंख। खान-पान, हास्य, इन्द्रिय-भोग. संग्राम, व्यापार, व्याख्यान, चर्चा, मालाजप, सामायिक-पौषध, गुरु-वंदन आदि समस्त व्यवहार तथा अध्यात्म की उन्नति में विवेक की आंख अपेक्षित है।

जिसे विवेक की आंख, प्रज्ञाचक्षु या तृतीयनेत्र उपलब्ध है, वही स्व-पर का सफल अनुशास्ता वन सकता है और वही दूसरों के प्रज्ञाचक्षु को खोल सकता है। गुरुदेव तुलसी एक ऐसे ही चक्षुष्मान थे, जिनकी जोड़ का सहज योगी हाथ में दीपक लेकर खोजने पर कोई विरल ही मिल सके। गुरुदेव तुलसी की आंखों की रचना इतनी आकर्षक थी कि निहारने वाला निहारता रह जाता। उनकी इमरत झरती आंखें हृदय की कोमलता, माता-सी वत्सलता, उज्ज्वल-धवल चरित्रशीलता और अमाप्य व्यक्तित्व को उजागर कर देती थी। महामहिम आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी ने यथार्थ चित्रण किया है- अपने स्मृति गीत में कि :-

"कानों की छटा निराली, आंखें इमरत की प्याली।
किसने सौन्दर्य सझायारे, महाप्राण गुरुदेव"।

जिनका हिमगिरी-सा उज्ज्वल-धवल चरित्र हो, शांत-शीतल अन्तःकरण हो, अतीन्द्रिय अनुभवों का कोप अक्षय हो, उनकी आंखें स्वयं वहुत कुछ वता देती हैं। विश्व कवि रवीन्द्र नाथ टैगोर ने

यथार्थ निरूपण किया है- आंखें तो जीवन के अनुभवों का भरा हुआ भण्डार हैं।" व्यक्तित्व को देखना-परखना है तो व्यक्ति की आंखों और उसके चारों ओर के भाग का अध्ययन कर लेना चाहिए चूंकि व्यक्तित्व को उजागर करने वाला आईना है- यह भाग। इसलिए कहा गया है-

"तू आइने के बदले दिल में मुंह देख, ताकि अन्दर का हाल दिखे। मन का भाव बदलते ही आंख बदलती है अतः आंख देख ले"

ज्योतिर्मान दीपक ही लाखों दीपों को ज्योतिर्मान बना सकता है, चक्षुष्मान ही दूसरों को चक्षुष्मान बना सकता है। गुरुदेव तुलसी ऐसे ही चक्षुष्मान थे, जो लाखों-करोड़ों के अन्तरचक्षुओं को उद्घाटित करने में सिद्धहस्त थे। उनके द्वारा बने चक्षुष्मानों की अन्तहीन शृंखला के शिखर पुरुष हैं- आचार्य श्री महाप्रज्ञ।

मैंने पढ़ा कि --"बिना किसी लैंस की सहायता से करीब एक करोड़ रंगों की पहचान आंखे कर सकती हैं।" किन्तु गिरगिट की तरह रंग बदलने वाले मानव- मन के अनन्त रंगों की पहचान एक दुरूह कार्य है। मैंने देखा, गुरुदेव तुलसी इस दुरूह पहचान कार्य के परम विशेषज्ञ थे। उन्हें पहचानते देर नहीं लगती कि-- कौन-सा रंग हल्दिया है और कौन-सा मजीठी रंग है। किस रंग को किस कैनवास में भरना चाहिए, जिससे रंग और चित्रों के साथ मकान मनभावन बन जाए, जो दर्शकों को आकृष्ट कर सके और अपने प्रतिपाद्य को व्याख्यायित कर सके।

मैंने देखा-- समाधि मृत्यु के बाद आंखें खुली रह गईं। मैंने सोचा-- ये खुली आंखें ही तो थीं, जिन्होंने इतने बड़े विशाल धर्मपरिवार को साठ साल तक, अनुशासन के एक सूत्र में पिरोये रखा। जो आंखें त्रुटि करने वालों के लिए शिव की तीसरी आंख थी तो आत्मोत्थान के अभ्यर्थियों, अध्यात्म- त्याग वैराग्य, संयम, स्वाध्याय, ध्यानाभ्यासियों के लिए वात्सल्यमयी माँ की ममता बरसाती अमीकूपिका या अमिवृष्टि की तरह थी। जिस अमिवृष्टि ने जाने कितने बंजर खेतों में हरितक्रांति ला दी।

आदमी के अन्तर में झांकते वे दिव्य चक्षु थे, जिन्होंने स्वतंत्रता के साथ पनपते स्वेच्छाचार को



पूर्व राष्ट्रपति ज्ञानीजैल सिंह के साथ आचार्य श्री तुलसी

भांप लिया था, उन्होंने आगाह कर दिया कि- संयम-सदाचार, स्वेच्छाचार बिना की स्वतंत्रता किसी गहन गर्त में गिरा देगी, जहां से उबरना कठिन हो जाएगा। सावधान! देशवासियों! "असली आज़ादी अपनओ, मिली तुम्हें जो यह आजादी, आगे कदम बढ़ाओ"- वह आजादी मिलेगी- असंयम, जो समस्त समस्या की उर्वरा धरा है- से मुक्ति, स्वार्थ- जो समस्त अपआचरणों का जनक है- उससे मुक्ति आलस्य, अकर्मण्यता से मुक्ति, कर्त्त्व्य और दायित्व वोध की संयुक्ति से असंयम, स्वार्थ, अकर्मण्यता से मुक्ति तथा कर्त्व्य धर्म से संयुक्ति करने का उपाय बताया- अणुव्रत वह ऐसा धर्म है,जो न उपासना के बंधन से जकड़ा है, न लिंग- रंग, वर्ण, संप्रदायों से जकड़ा है, न किसी पूर्वाग्रह से अकड़ा है। वह है विशुद्ध नैतिक आचरण प्रधान धर्म। उस असांप्रदायिक अणुव्रत धर्म को उन आंखों ने संप्रेषित किया-- लाखों की आंखों-कानों के माध्यम से लाखों के अन्तर मन में। कोई परम चक्षुष्मान ही सम्प्रदायातीत धर्म का प्रवर्तन कर सकता है।

आचार्य तुलसी की आंखों ने भौतिकता की अंधी दौड़ में बेहताशा भागी जा रही दुनिया को देखा तो पाया, यह दुनिया जिसे नहीं देखना चाहिए, उसे देख रही है।, जिसे चखना चाहिए उसे चख रही है, जो नहीं करना चाहिए उसे कर रही है, जिस पथ पर नहीं चलना चाहिए उस पर चल रही है, जैसा नहीं जीना चाहिए वैसा जी रही है इस उलटवासी का परिणाम है- तनाव, क्रोध, लोभ, प्रतिस्पर्धा की अंधी दौड़, भाई-भाई में अलगाव की दीवार, मानवता की क्षत्-विक्षत् देह। उनकी आंखों में करुणा उमड़ आई, दिल दयार्द्र हो उठा- मानव की दयनीय दशा पर, आज की बड़ी वीमारी- तनाव, क्रोध, काम, लोभ, प्रतिस्पर्धा का उन्होंने उपचार सुझाया- प्रेक्षाध्यान। क्षत्-विक्षत् देह को अक्षत करने का मलहम दिया- अनुप्रेक्षा का। गुरुदेव ने कहा - देखना है तो स्वयं को देखो, चखना है तो शांत सुधारस का चखोकरना है तो आत्मनिरीक्षण करो। चलना है तो राग-द्वेष मुक्त प्रेक्षा के पथ पर चलो। जीना है तो संयत और प्रेक्षक वन जीयो। ये सब बातें सही रास्ते का स्पष्ट द्रष्टा, चक्षुष्मान भगवान ही बता सकता है। आचार्य तुलसी चक्षुष्मानों में शिखर पुरुष थे।

उन्होंने कहा- न केवल जीवन को देखो, मौत को भी खुली आंखों से देखो, ऐसे देखो कि मौत शर्मिन्दा हो सदा-सदा के लिए पिण्ड छोड़ दे। एक वृद्ध की सलाह पर सीना तान कर नरेन्द्र खड़ा हो गया तो घुड़की करने वाले बन्दर भाग गये। बन्दर ही क्या खुली आंखों से एकटक देखते रहो, शेर भी दुम दवाकर भाग जाएगा। इन आंखों में वह शक्ति है कि कोई हिंसक शक्ति झेल नहीं सकती। मैंने खुली आंखों से मौत को निहारा है और ऐसा निहारा है कि वह सदा-सदा के लिए दुम दवाकर भाग गई है। ऐसा अमरत्व पा लिया है कि मौत की रीढ़ की हड्डी ही टूट गई है। मेरे प्यारे वच्चों! तुम भी खुली आंखों मौत को निहारना और वन जाना अजर-अमर, अविनाशी।

ऐसे परम चक्षुष्मान, चक्षुदान-दक्ष तीर्थंकर समकक्ष उस परम पवित्र आत्मा-गुरुदेव तुलसी को नमन, प्रणमन, वंदन, अभिवन्दन। शुभेच्छा संसार की समस्त आत्माओं के प्रति कि उन्हें ऐसे कान मिले कि सुनाई दे उस परम पुरुष का दिव्य संदेश, ऐसी आंख मिले कि दिखाई दे, उस पवित्र आत्मा का प्रशस्त किया सुपथ।

अणुव्रत अभियान संस्कार निर्माण का अभियान है। इसके व्रतों में सहज संस्कार प्रस्फुटित होते है। आज समाज व देश में नैतिक संस्कारों को ह्रास होता जा रहा है। अपेक्षा है आचार्य श्री तुलसी का सन्देश व्यक्ति-व्यक्ति तक पहुंचे। विचारों को फैलाने के लिए आज के इस संचारवादी युग में अनेक साधन उपलब्ध हैं। मैं चाहता हूं उन साधनों का सही और व्यवस्थित उपयोग हो।

-लालकृष्ण आडवानी



हमें धर्मक्रांति का सिंहनाद करना है, पर उस धर्म का नहीं, जिसका अस्तित्व केवल मंदिरों, धर्मस्थानों या धर्मग्रंथों तक ही सीमित है। —आचार्य श्री तुलसी



मुझे कभी सफलता मिली, कभी न भी मिली, पर सुधार के क्षेत्र में मैं कभी निराश होता ही नहीं, निराश होना मैंने सीखा ही नहीं। मैं आशावान हूँ और जिंदगी भर आशावान बना रहूँगा, अडिग विश्वास के साथ काम करता रहूँगा। —आचार्य श्री तुलसी



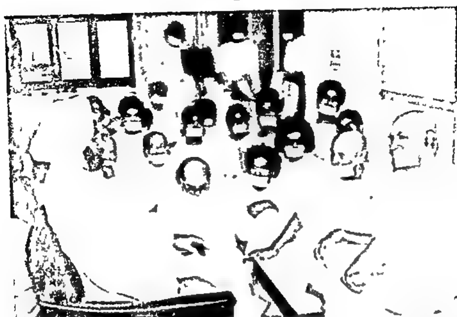
हमें तपना है और अधिक तपना है । अपने लिए तपना है, धर्मसंघ के लिए तपना है और सम्पूर्ण मानवता के लिए तपना है । हम जितनी तपस्या करेंगे, हमारा मार्ग उतना ही प्रशस्त होगा ।

—आचार्य श्री तुलसी



ौद्ध धर्मगुरु दलाईलामा और आचार्य श्री तुलसी





राष्ट्रीय एकता मेरे लिए कोई विचार नहीं है, बल्कि मैं तो मानवीय एकता का समर्थक हूँ। मेरा पूरा जीवन इस एकता की भावना को बनाने और बढ़ाने में व्यतीत हुआ है। आज भी मैं यही कार्य कर रहा हूँ। —आचार्य श्री तुलसी



एक सुदर्शन व्यक्तित्व

□ साध्वी जिनप्रभा □

आचार्य श्री तुलसी एक ऐसे व्यक्तित्व का नाम है जो अलौकिक शक्तियों का पुंज था। एक ऐसे सर्वातिशायी सुदर्शन चरित्र का नाम है जो शब्दातीत, कालातीत और उपमातीत था। संस्कृत साहित्य में राम रावण के युद्ध को उपमित करने का प्रसंग आया तो साहित्यकारों को कोई उपमा नहीं मिली। उन्हें कहना पड़ा– 'रामरावणयोर्युद्धं रामरावणयोरिव' राम और रावण का युद्ध कैसा था! राम और रावण जैसा ही था। भारतवर्ष को जिस समय सोने की चिड़िया कहा जाता था, समूचे संसार का अध्यात्म गुरु माना जाता था, उस समय उसे उपमित करने का प्रसंग आया तो साहित्यकारों को कहना पड़ा–भारत के लिए कोई उपमा समीचीन नहीं बैठती। भारत कैसा था? भारत जैसा ही था।

आचार्य तुलसी को उपमित करने के लिए भी भले ही समूचा वाङ्गमय खोज लिया जाए कोई उपमान नहीं मिलेगा। यही कहना होगा–आचार्य तुलसी कैसे थे? आचार्य तुलसी जैसे ही थे।

निस्संदेह आचार्य तुलसी एक ऐसे महामानव थे जो अपनी कोटि के एक ही थे। अप्रतिम थे। उनके विराट्, विशाल, भव्य और उदात्त व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति में हर शब्द बौना हो जाता है। उनके व्यक्तित्व की अमिट और अक्षय छवि लाखों करोड़ों दिलों में यों समाई हुई है जैसे मेहँदी में रंग और फूलों में सुगन्ध। उनको एक बार भी किसी ने यदि देख लिया तो उनकी वह मोहक मुद्रा सदा के लिए उसके हृदय में बस गई।

व्यक्तित्व के दो रूप होते हैं–बाह्य व्यक्तित्व और आंतरिक व्यक्तित्व। आंतरिक व्यक्तित्व नैसर्गिक भी हो सकता है अर्जित भी हो सकता है। पर बाह्य व्यक्तित्व तो गॉडगिफ्त होता है। जिस व्यक्ति को यह उपलब्ध होता है वह परम सौभाग्यशाली होता है। उस व्यक्ति से किया गया प्रथम साक्षात्कार ग्रीष्म से तप्त धरती पर वर्षा की प्रथम फुहार की भाँति रोमांचकारी और आह्लादकारी होता है।

ठाणं सूत्र में चतुर्भंगी आती है–कुछ व्यक्ति रूप-संपन्न होते हैं पर चरित्र से सम्पन्न नहीं होते। कुछ व्यक्ति चरित्र से सम्पन्न होते हैं पर रूप-सम्पन्न नहीं होते। कुछ व्यक्ति न रूप-सम्पन्न होते हैं न चरित्र संपन्न होते हैं। कुछ व्यक्ति रूप-सम्पन्न भी होते हैं और चरित्र सम्पन्न भी होते हैं।

आचार्य श्री तुलसी उभयमुखी व्यक्तित्व से संपन्न थे। उनका आंतरिक व्यक्तित्व जितना निखार पर था, बाह्य व्यक्तित्व भी उतना ही मोहक, आकर्षक और अमाप्य था। ऐसे लगता था उनके दोनों व्यक्तियों के बीच सात्त्विक स्पर्धा थी।

गौरवर्ण, मझला कद, भव्य ललाट, उन्नत वक्षस्थल, प्रलम्ब कान, कानों पर सघन बाल, विशाल एवं पनियल नयन, मुस्कुराता चेहरा, देदीप्यमान आभामंडल और श्वेत परिधान—यह बाह्य व्यक्तित्व प्रथम दर्शन में ही व्यक्ति को सम्मोहित करने वाला था।

आचार्य मानतुंग ने आदिनाथ भगवान की स्तुति करते हुए अपने भक्ति काव्य में कहा—प्रभो ! जिन परमाणुओ से आपका शरीर निर्मित हुआ वे परमाणु इस संसार में उतने ही थे। यही तो कारण है आप जैसा दूसरा रूप कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता।

महनीय व्यक्तित्व के धनी आचार्य श्री तुलसी के बारे में भी यदि यह कहा जाए कि जिन तैजस और औजस परमाणुओं से उनका शरीर बना वे परमाणु इस धरती पर उनने ही थे। तो कोई अतिरेक नही होगा। उनके रूप लावण्य को देखकर सहसा आगंतुक व्यक्ति उन पर न्यौछावर हो जाता था।

जयपुर के राजवैद्य थे नन्द किशोरजी पहली बार आचार्य श्री तुलसी को देखा तो एकटक देखते ही रह गए। अनिमिष प्रेक्षा के बाद उन्होंने कहा—इनके शरीर का हर अंग सौन्दर्य से परिपूर्ण है पर इनके कान तो बहुत ही विलक्षण हैं। इन कानों को देखकर तो भगवान बुद्ध की स्मृति हो आती है।

अन्तर्राष्ट्रीय शाकाहारी मंडल के उपाध्यक्ष वुड्लैण्ड ने सपत्नीक आचार्य तुलसी से भेंट की। जब मिस्टर वुड्लैण्ड आचार्य तुलसी से बात करने में संलग्न थे तब श्रीमती वुड्लैण्ड अनिमेष दृष्टि से आचार्यवर को निहार रही थी। बातचीत के प्रसंग में उसने बताया—मैंने लाखों व्यक्तियों को देखा है पर जो ओज-आभा और सौन्दर्य इन नेत्रों में देखने को मिला वह अन्यत्र कहीं नहीं मिला।

आचार्य श्री तुलसी बंगाल की यात्रा के मध्य शांति निकेतन पधारे। वे विश्व कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर के संग्रहालय वे पुस्तकालय का निरीक्षण कर रहे थे। वहाँ इंग्लैण्ड की कुमारी एलिजाबेथ ब्रुनर मिली। वार्तालाप किया। उसने अपने संस्मरणों में लिखा—'आचार्य तुलसी से मिलने पर अन्यान्य प्रतिक्रियाओं से पूर्व सबसे पहली प्रतिक्रिया मेरे मन पर हुई कि आचार्य श्री की आँखें बहुत तेजस्वी हैं। यही एलिजाबेथ दिल्ली प्रवास में घंटों-घंटों आचार्यवर के कार्यक्रमों में बैठी रहती और बिना भाषा समझे अपलक उनके मुखमंडल को निहारती रहती। उसने आचार्य श्री का एक तैल चित्र भी तैयार किया।

हमने देखा है, अनुभव किया है—किस तरह उनके तेजोमय आभावलय की झलक पाने के लिए और उनके उपपात मे कुछ क्षण बिताने के लिए लोगों के समूह कतार बाँधकर खड़े रहते थे। हजारों भाई-बहन घंटों-घंटो बिना थके उनके सामने टकटकी लगाए बैठे रहते। उस लम्बे उपासना काल मे जब कभी गुरुदेव की अमृत भरी नजरें उनकी ओर उठतीं, वे लोग कृतार्थ हो जाते। धन्यता का अनुभव करते। उस समय के आह्लाद का तो कहना ही क्या जब गुरुदेव के दो शब्द सुनने को मिल जाते। यदि किसी कारणवश गुरुदेव के साक्षात्कार

में विलम्ब हो जाता तो दर्शनार्थियों की छटपटाहट कैसी होती, उसका वर्णन भी नहीं किया जा सकता ।

श्रद्धालु भाई-बहन ही दर्शनों के लिए उत्कंठित रहते हों ऐसी बात नहीं, बौद्धिक से बौद्धिक व्यक्ति भी दर्शनों के लिए उत्सुक देखे जाते ।

बीकानेर के डॉ० माथुर जो अस्थि विशेषज्ञ हैं, अवस्था से वृद्ध हैं, उन्हें एक बार याद किया गया । इन वर्षों में वे प्राय: किसी को देखने बीकानेर से बाहर नहीं जाते हैं । जब उन्हें कहा गया आचार्य तुलसी को देखने के लिए राजलदेसर चलना है तो वे तत्काल बिना किसी ननुनच के चलने के लिए उत्साहित हो गए । उत्साहित ही नहीं उन्हें यह जानकर अनिर्वचनीय आनंद की अनुभूति हुई । उन्होंने बताया— मैंने आपका नाम बहुत सुना था । लम्बे समय से सोच रहा था मुझे किसी बहाने आपसे साक्षात्कार करने का मौका मिले । आज आपके दर्शन पाकर मैं अपने को परम सौभाग्यशाली समझता हूँ ।

बीकानेर से डॉ० अजितसिंह राठौड़ ने लाडनूं में आचार्य श्री के दर्शन किए डॉ० मरोठी के साथ । दर्शन करते ही उसने डॉ० मरोठी से कहा— 'डॉ० मरोठी ! इनकी आँखों में कितना तेज है । एक बार तो आँख से आँख मिलाना भी मुश्किल है । ऐसे लगता है जैसे आँखों से रेज़ निकल रही हैं ।'

आचार्य श्री तुलसी फोटो जनिक थे । उनका हर फोटो किसी भी समय, किसी भी स्थिति में और किसी भी कोण से लिया जाए, वह जीवंत अभिव्यक्ति देने वाला होता था ।

आचार्य श्री तुलसी के शरीर के प्रत्येक अवयव की अपनी एक अलग अदा थी । प्रत्येक कार्य की अपनी अलग छटा थी । उनकी गति, उनका बैठना, उनका उठना, उनका चलना, उनका सोना—प्रत्येक क्रिया में सौन्दर्य के दर्शन तो होते ही थे, प्रेरणा झलकती थी ।

वे चलते तो ऐसा लगता मानो युग चल रहा है । वे रुकते तो ऐसा लगता मानो सागर स्थिर हो गया है । वे देखते तो ऐसा लगता सारा संसार उनकी आँखों में समाया हुआ है ।

आचार्य श्री सत्यं शिवं सुंदरं के उद्‌गाता थे । वे जब तक जीए तेरापंथ धर्मसंघ का ही नहीं समूची मानवता को सत्य, शिव और सौन्दर्य से परिपूर्ण करते रहे ।

● श्रद्धांजलियाँ

आचार्य श्री तुलसी ने देश के नागरिकों को चरित्र निर्माण की शिक्षा दी, प्रयोग बतलाए, जरूरत है उन प्रयोगों को आत्मसात करें । आज देश का भविष्य चरित्र के परिप्रेक्ष्य में अंधकारमय है अंधकार को मिटाने के लिए अणुव्रत आंदोलन एक ज्योति के समान है । हम उनकी शिक्षाओं को जीवन में उतारें यही उनको प्रति सच्ची श्रद्धांजलि है ।

—प्रभाष जोशी, संपादकीय सलाहकार : जनसत्ता

गुरुदेव श्री तुलसी
मेरे संस्मरणों में

रतनलाल शर्मा, एडवोकेट

मैं मंदिरों में कोई ले जाए तो चला जाता हूँ, किंतु दर्शनार्थ नहीं। संतों के प्रवचन में भी कोई ले जाए, तो चला जाता हूँ, किंतु भक्तिभाव से नहीं। इसलिए लोग आश्चर्य करते हैं कि मैं एक जैनाचार्य के दर्शनों के लिए कई बार लाडनूं व अन्य स्थानों पर कैसे गया। किंतु इसमें मैं तो निमित्त बना हूँ, खींचा है एक प्रबल चुंबकीय शक्ति ने।

सन् १९६४ में बालोतरा में मर्यादा-महोत्सव आयोजित हुआ। तभी मेरे मित्र श्री सोहनराज जी कोठारी की प्रेरणा से मैंने तेरापंथ आचार्य श्री तुलसी के प्रथम दर्शन किए। उनके प्रतिभाशाली व्यक्तित्व एवं प्रगतिशील विचारों ने मुझे प्रभावित किया। किंतु इनसे भी अधिक प्रभाव पड़ा उनके अपनत्व का। एक अजैन को उन्होंने इतना सामीप्य दिया, स्नेह दिया कि उनकी स्मृतियाँ आज भी ताजा हैं।

उनका चिंतन रूढ़ियों को हटाने में चल रहा था। मृत्यु-भोज, परदा, दहेज, छुआछूत वगैरह के विरुद्ध उन्होंने नारा दिया था। मर्यादा-महोत्सव पर एक समस्या आई। इतने विशाल जनसमुदाय को प्रवचन सुनाई कैसे देगा। उस समय तक माइक का प्रयोग कोई भी जैन मुनि नहीं करता था। एक ओर मर्यादा दूसरी ओर समस्या। उस निराशा के वातावरण में मैंने बीड़ा उठाया। एक ज्ञापन तैयार किया। सारांश था कि माइक एक व्यवस्था थी, जो श्रोताओं की सुविधा के लिए थी, वक्ता को इससे कोई लाभ नहीं था। जैन मुनि को न तो 'मुंच' कहना है, न 'मामुंच'। अन्यथा हजारों श्रावक गुरु का प्रवचन सुनने से वंचित रहेंगे, उनके हृदय में निराशा का संताप होगा, इसका उत्तरदायी कौन होगा।

कोई आचार्य अपने सिद्धांतों में दखल सहन नहीं कर सकता, किंतु उस प्रणति पुरुष की महानता, कि उन्होंने वह ज्ञापन चिंतन के लिए सभी संतों के पास भेजा। तर्क अकाट्य थे ही। कोठारी साहब के सहयोग से एक नई मर्यादा स्थापित हो गई, जिसका लाभ आज हजारों श्रावक प्रत्येक महान आयोजन में उठा रहे हैं। तभी से मैंने पान व चाय का त्याग किया था।

सन् १९८३ में बालोतरा में आचार्य श्री का चातुर्मास हुआ। अणुव्रत नगर बस गया। उस अवधि में मुझे आचार्य श्री का अविस्मरणीय सामीप्य प्राप्त हुआ। मैं देर से सोने व देर

से उठने वाला । कभी प्रातः भ्रमण नही किया, किंतु चातुर्मास मे कोठारी साहब के साथ सूर्योदय से पूर्व भ्रमण को निकलकर आचार्य श्री के प्रातः दर्शन किए ।

उस अवधि में मैने कई काव्य रचनाएँ की, व आचार्य श्री को सुनाई । प्रशस्ति गीत का एक पद--

हे महाप्राण, हे ज्योतिपुंज, हे कीर्तिधाम,
हे अणुव्रत अनुशास्ता तुमको शत्-शत् प्रणाम ।
हे युग-प्रधान, हे क्रांतिदूत, हे प्रगति-पुरुष,
मैं अभिनंदन में शीश झुकाने आतुर हूँ ।

कई बार कोठारी साहब के साथ एकांत सेवा का अवसर मिला । मुझसे वे इतने प्रसन्न थे, कि मै भी खुलकर अपने विनोदी स्वभाववश बात कर लेता था । एक बार कहा-- "बावजी, आपके हाथ में सूर्य रेखा है, वैसी केवल नेपोलियन के हाथ में थी ।"

"तुमने कैसे जाना ?"

"आपने हाथ दिखाया था ।"

"मैंने कब हाथ दिखाया ?" आश्चर्य से ।

"बावजी आप जब मांगलिक सुनाकर आशीर्वाद देते है, तब मै देख लेता हूँ ।"

चातुर्मास समाप्ति पर रात्रि-विश्राम उच्च माध्यमिक पाठशाला में था । बरामदे में दीवार के पास पाट पर आचार्यश्री आसीन हुए । खंभों के कारण दर्शनों में भारी बाधा आ रही थी । प्रबंधको से पाट खंभों के बीच मे लगाने को कहा, तो विवशता प्रगट की कि अब आसन ग्रहण कर चुके । हिम्मत करके मै हाथ जोड़कर सामने गया व समस्या बताई । अब उनकी महानता का क्या कहा जाए, एक क्षण में परिस्थिति को समझ लिया । पाट छोड़कर उठ खड़े हुए । फिर क्या था, एक सैकंड मे पाट खंभो के बीच मे और आचार्यश्री पुनः विराजमान ।

उनकी कृपा यहाँ तक बढ़ी कि स्वप्नो मे कई बार दर्शन दिए, अन्यथा संतों के दर्शन स्वप्न मे दुर्लभ होते हैं । एक बार उलटी सूझी कि अभिग्रह लिया, 'आचार्यश्री कहे तो पाँव छुऊँ ।" और जैनाचार्य कह नही सकते । आखिर एक बार स्वप्न मे दर्शन दिए । पाँव आगे करके इशारा किया । मैने चरण स्पर्श किये । अगली बार दर्शन किये, तब उन्होने कहा कि पहले पाँव नहीं छूता था, आज कैसे छुए ? आपने पूछा नही । आचार्य श्री ने कारण पूछा तो मैने कहा कि आपने ही तो आदेश दिया था । आचार्य श्री ने आश्चर्य किया, तो मैने गुत्थी सुलझा दी, कि आदेश स्वप्न मे दिया था । कोठारी साहब ने बताया कि पहले मैने पान-चाय छोड़े । फिर शादी के घर मे भोजन का, बाजार की मिठाई का व सुबह एक प्रहर तक भोजन का त्याग किया है । फरमाया, "यह कर्मणा जैन है ।"

श्री महाप्रज्ञ को अपना पद प्रदान करने के बाद मैंने सन् १९९६ में लाडनूं में दर्शन किए। मैं चंपालाल जी कुवाड़ की कार में संध्या के कुछ पूर्व पहुँचा। मेरा नियम था कि दर्शन के बाद ही भोजन लेता था, अतः सर्वप्रथम सेवा में गए। गुरुदेव एक मुनिजी से कुछ वार्ता कर रहे थे, हम कुछ हटकर बैठ गए। मुनिजी के उठते ही हम भी उठ गए, क्योंकि संध्या के आहार का समय हो गया था। हम नमस्कार करके रवाना होने लगे कि श्रीमती अणची देवी, जिन्हें आचार्यश्री ने 'श्रद्धा की प्रतिमूर्ति' उपाधि से अलंकृत किया था, ने कहा कि गुरुदेव ने मुझे रुकने का आदेश दिया है। पता नहीं कब व कैसे उन्होंने छोटे संत द्वारा यह आदेश भिजवाया। मैं अकेला जाकर चरणों में बैठा। पाट पर विराजमान आगे झुककर दो शब्दों में सारा परिवर्तन व्यक्त कर दिया— "सब छोड़ दिया" मैंने हाथ जोड़कर कहा— "बाबजी ! आपने भी कमाल किया। आज तक अपने जीवनकाल में किसी ने इतना गरिमामय पद नहीं छोड़ा।"

भोजनोपरांत मैं कोठारी साहब के साथ सेवा में उपस्थित हुआ। करीब एक घंटे तक सेवा हुई। मैंने निवेदन किया कि उनकी प्रशस्ति में लिखा गीत सुनाये बहुत समय हो गया था, उन्होंने अनुमति दे दी। उसमें मैंने आचार्य-पद त्याग की पंक्तियाँ भी जोड़ दी थी। आदेश हुआ कि दूसरे दिन प्रवचन से पूर्व पांडाल में यह गीत सुनाऊँ, जिसकी पालना मैंने की।

किसने जाना था कि ये दर्शन अंतिम होंगे। उनकी प्रेरणा से लिखा गीत उन्हें अंतिम बार सुनाया था। अक्षय तृतीया के पारणों में श्री तगतमल जैन पचपरा के साथ मैं भी संघ में गया। मैंने फिर अभिग्रह लिया था कि मैं लाडनूं नहीं जाऊँगा, मुझे महाप्रज्ञ जी ने थोड़ा ही बुलाया है। किंतु एक माहपूर्व ही आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने भी स्वप्न में दर्शन दे दिए।

गुरुदेव की स्मृति में उनकी प्रेरणा से लिखा गीत मैंने आचार्य श्री, युवाचार्य श्री एवं साध्वी प्रमुखा जी को सुनाया। उस दर्द भरे गीत का प्रथम पद :—

वे कृपासिंधु स्वप्नों में मेरे आते थे,
साक्षात प्रेरणा बनकर गीत लिखाते थे।
वह स्रोत आज है अखिल निखिल में विलय हुआ,
मैं अश्रुधार का अर्घ्य चढ़ाने आतुर हूँ।

आचार्य तुलसी ने कहा

- मै सिद्ध नहीं साधक हूं, पण्डित नहीं विद्यार्थी हूं।
- स्थिर वही पदार्थ या व्यक्ति रह सकता है जो परिवर्तन को सह सकता है।
- स्थिरता वाहरी प्रयोग से नहीं भीतरी प्रयोग से ही आ सकती है।

● कविता ●

तुलसी युग

☐ समणी शुभप्रज्ञा ☐

धरती माँ का आंचल थाम
मानवता आज सिसक रही।
अणुव्रत का दीप लिए कर में
तुलसी युग आज निखर रहा।।
हिरोशिमा का इतिहास खोल
तुलसी युग कहता बार बार
भीतर को झांक अरे इंसान
उन्मत्त मनुज कुछ तो विचार
नर की पीड़ा देख दिल में
तुलसी का दिल दहल उठा
नयनों से निश्चल धार बहा
करुणा का स्त्रोत वह उठा
अब जाग-जाग अरे इन्सान
भीतर प्रकाश-बाहर प्रकाश
अन्तस का हो सदा विनाश
कण-कण में हो नव प्रकाश
तुलसी युग तुझे पुकार रहा
अध्यात्म मुक्त भौतिक विकास
स्वार्थों का टकराव छोड़
नैतिकता का हो सतत विकास
अब हो विश्व शांति का नाद
हर चेतन में हो नया विश्वास
तुलसी युग को रखें हम याद
अणुबम का होगा सदा विनाश

विभूति-वैभव : आचार्य श्री तुलसी

समणी मंगलप्रज्ञा

साधना सिद्धि का द्वार है। साधना के द्वारा साधक अपनी लक्षित मंजिल को प्राप्त करता है। मंजिल प्राप्ति की चाह साधक को साधना की राह पर अग्रसर करती है। साध्य का प्रारम्भ बिन्दु साधना एवं साधना का चरम बिंदु साध्य होता है। साधक प्रारम्भ से लेकर चरम तक की यात्रा में यात्रायित होता है। उस यात्रा पथ में उसे अनेक शारीरिक, मानसिक कठिनाइयों को सहन करना पड़ता है तथा साथ में अनेक विलक्षण उपलब्धियाँ भी उसे प्राप्त होती हैं। साधक इन दोनों ही स्थितियों में तटस्थ रहने का अभ्यास करता है। कुछ साधक ऐसे होते हैं जिनको साधना का पथ एवं सिद्धि की सन्निकटता सहज जन्मजात प्राप्त होती है। पूर्व संचित योग-विशुद्धि से वे साधना के उच्च स्थान पर आरूढ़ होते हैं तथा सहज रूप से ही योगज विभूतियों से सम्पन्न होते हैं। ऐसे ही विशिष्ट ऋद्धि सम्पन्न साधकों की कोटि में आचार्य श्री तुलसी का नाम परिगणित है।

आचार्य श्री तुलसी का जीवन गीता में वर्णित स्थितप्रज्ञता का उत्कृष्ट उदाहरण था। योग-साधना उनको सहज सिद्ध थी। विभूतियों का वैभव उनके चरणों में न्यौछावर था। पातंजल योग दर्शन के तृतीय विभूतिपाद में अनेक प्रकार की योगज विभूतियों का उल्लेख है। उन विभूतियों के विवेचन के आलोक में आचार्य श्री तुलसी के जीवन को देखने से ज्ञात



होता है कि विना किसी विशेष वार्तमानिक प्रयत्न के अनेक विभूतियाँ उनके पास थी ।

पातंजल योग सूत्र में 'काय संपद' विभूति का उल्लेख है । उस काय संपद विभृति के प्रभाव से योगी दर्शनीय, कांतिमान, अतिशयवल से युक्त तथा वज्र की तरह अभेद्य दृढ शरीर से युक्त होता है– 'रूपलावण्यवल वज्र संहननत्वानि कायसम्पद्' आचार्य श्री तुलसी उस 'काय सपद्' नाम की विभूति से विभूषित थे । उनका रूप, लावण्य, बल एवं शरीर का सहनन अतिशय युक्त था । उनके रूप सौन्दर्य को देखकर दर्शक मोहित हो जाते थे ।

कोई उनके कानो को देखकर उनमे महावीर का दर्शन करता तो कोई उनकी आँखो में बुद्ध की करुणा का अहसास करता । आचार्य श्री तुलसी सुदर्शन व्यक्तित्व के धनी थे । उनको घंटो-घंटो निहारते हुए भी नयन तृप्त नही होते थे । अनेक विदेशी भाई-वहन जो उनकी भाषा नही समझते थे, फिर भी घंटो-घंटो उनके पास वैठे रहते । एक वार एक जापानी शिष्य मंडल से स्वयं गुरुदेव ने पूछा– "मै तुम्हारी भाषा नहीं समझता, तुम मेरी भाषा नही समझते फिर भी इतने लम्बे समय तक मेरे पास क्यों वैठे हो ? दुभाषिये के माध्यम से उस जापानी ने कहा– हम आपके हृदय की भाषा को समझते हैं । आपके पास बैठने से ही हमें शांति की अनुभूति हो रही है ।" साधक अपनी साधना के बल पर अपने आभामंडल को इतना पवित्र बना लेता है कि उस आभामंडल मे प्रवेश करने वाला अशांत मन भी शांत हो जाता है । गुरुदेव श्री तुलसी के आभामंडल की सन्निधि में अनेक बार हमने इस सत्य को साक्षात् जिया है ।

गुरुदेव श्री तुलसी का शरीर, वचन एवं मन का वल भी अद्वितीय था । अपने विशेष प्रकार के शारीरिक संहनन के कारण ही वे दिन मे १८ से २० घंटा बिना थके परिश्रम कर लेते थे । न केवल अपनी युवावस्था के समय किन्तु जीवन के नवें दशक में भी पूरी मुस्तैदी के साथ वे अपने कार्य में संलग्न रहे । उन्होने अपने जीवनकाल में लगभग एक लाख किलोमीटर की पैदल यात्रा की । यात्रा के दौरान तीन से चार घंटा प्रवचन, फिर व्यापक जन संपर्क, साधु जीवन की सम्पूर्ण चर्या का अप्रमत्तता से पालन, शरीर की दिव्य शक्ति के बिना संभव नही था । उनका वचन बल तो विख्यात था । वाणी का प्रभावी ओज श्रोता को चमत्कृत कर देता था । उनके प्रवचन से सामान्य जन तथा बुद्धिजीवी वर्ग दोनों सहज ही संतुष्ट हो जाते थे । अपनी बात को प्रस्तुत करने की कला मे सिद्धहस्त थे । गहन-गंभीर बात को सहज, सरल प्रस्तुति उनके वक्तव्य का अलंकार थी । माधुर्य उनकी भाषा का वैशिष्ट्य था । आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने उनके प्रसिद्ध स्मृति गीत मे लिखा भी है– 'माधुर्य कण्ठ मे घोला' । उनके एक-एक वोल प्रेरणा के महासमंदर थे । उन वोलों से प्रेरणा प्राप्त कर लाखों लोगों ने अपने जीवन मे नया उजास भरा है ।

आचार्य श्री तुलसी का मनोवल अद्वितीय था । उस मझले कद की काया मे सुमेरु-सा अडिग साहस निवास करता था । अपने मनोबल के द्वारा ही उन्होने तेरापंथ धर्मसंघ में प्रगति के नये आयाम उद्घाटित किए । राष्ट्र चेतना एवं विश्व चेतना को शांति एवं सह अस्तित्व

का आलोक प्रदान किया । उनके जीवन में विरोधों के झंझावात आते रहे, किन्तु उनके सुदृढ़ मनोबल के आगे वे स्वतः ध्वस्त हो गए । 'अग्नि परीक्षा' जैसे भयंकर विरोध भी उनको विचलित नहीं कर सके । आन्तरिक एवं बाह्य दोनों प्रकार के विरोधों को उन्होंने अपने मनोबल के द्वारा परास्त कर दिया ।" जो हमारा हो विरोध हम उसे समझे विनोद' यह उनके जीवन का स्वर्णिम सूत्र था । उनके मनोबल ने अनेकों गिरते मनोबलों को वैशाखी प्रदान की है ।

योगदर्शन में 'यत्रकामावसायित्व' नाम की योगज विभूति का उल्लेख प्राप्त होता है । वह सत्य-संकल्पता रूप होती है । यह विभूति जिस योगी के पास होती है, वह पुरुष जैसा संकल्प करता है भूत तथा प्रकृति का उसी रूप में अवस्थान हो जाता है अर्थात् प्रकृति उस योगी पुरुष के संकल्प के अनुसार कार्य करने लगती है । आचार्य श्री तुलसी के जीवन में घटित होने वाली घटनाओं को देखकर लगता है वे 'यत्रकामावसायित्व' नाम की विभूति से युक्त थे । उनके जीवन के ऐसे अनेकों घटना प्रसंग हैं जो इस विभूति के अस्तित्व की प्रामाणिकता प्रस्तुत करते हैं । दक्षिण यात्रा का प्रसंग है । मंदाभारी क्षेत्र से विहार कर गुरुदेव आगे अपने गन्तव्य स्थल की ओर बढ़ रहे थे । इतने में प्रकृति ने अपना रूप बदला । आकाश बादलों से आच्छन्न । बड़ी-बड़ी बूँदों के साथ वर्षा प्रारम्भ हो गई । यह असमय की वर्षा सभी के लिए बाधा उपस्थित कर रही थी । उस समय गुरुदेव के मुख से सहज ही ये शब्द निकले— 'समय पर बरसे तो जल और असमय पर बरसे तो जड़ । आश्चर्य ! शब्द सुनते ही प्रकृति स्तब्ध रह गई और बूँदा-बाँदी समाप्त हो गई । सभी इस दृश्य को देखकर आश्चर्याभिभूत हो गए । ऐसा ही एक प्रसंग और है, गुरुदेव 'समवसरण' में उत्तराभिमुख विराजमान थे । उस समय उनके मन नें एक चिंतन उभरा कि बचपन में उत्तर दिशा में काली-कजरारी घटाएँ अनेक बार देखी हैं किन्तु इन वर्षों में ऐसा देखने को नहीं मिला । उनका यह सोचना था इतने में उत्तर दिशा में काली कजरारी घटाएँ उमड़ पड़ी । प्रकृति में उनके चिंतन के अनुसार ही परिवर्तन हो गया । यात्राओं के समय अनेक बार अनुभव किया धूपभरी दोपहरी में भी उनके विहार के समय प्रकृति बादलों का चंदोवा छा देती थी । इन सारी घटनाओं से प्रतीत होता है कि वे 'यत्रकामावसायित्व' विभूति से संपन्न थे ।

यह कहा जाता है कि जो सत्यवादी होता है उसे सहज ही वाक् सिद्धि प्राप्त होती है । उनके मुखारबिन्द से सहजता से ही कोई शब्द निकलते, वह घटना प्रायः घटित हो जाती थी । ऐसे सैंकड़ों उदाहरण उनकी वाक् सिद्धि के उपलब्ध हैं । इसी तथ्य को आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी ने 'तुलसी अष्टकम्' में गुम्फित किया है । वे सिद्ध पुरुष थे । उनके संकल्प का कल्पवृक्ष यथार्थ के आंगन में फलीभूत होकर मानवता के कल्याण में योगभूत बनता रहा । आज भी उस दिव्य पुरुष की आलोक बरश्मियाँ संत्रस्त, पीड़ित मानवता को शांत सुधारस का पान कराती रहे । वे दिव्य लोक से दिव्यता का संदेश देते हुए हम सबका पथ-प्रदर्शन करें, यही हार्दिक आकांक्षा है ।



विकास का सही सूत्र है :
चिन्तन, निर्णय एवम् क्रियान्वयन
-आचार्य श्री तुलसी

मानवता के मसीहा, राष्ट्रसंत आचार्य श्री तुलसी को
प्रथम पुण्यतिथि पर हार्दिक श्रद्धांजलियां

श्रद्धाप्रणत

सभी सदस्यगण

तेरापंथ युवक परिषद्

मरीन ड्राईव,(मुम्बई)

जगद्वन्द्य: विशदचरितो नाम तुलसी

डॉ० गौतम कोठारी

कोई उन्हें पाँव-पाँव चलने वाला सूरज कहता तो कोई त्वरित ऊर्जा प्रदाता महाप्राण ऊर्जा का उद्गाता । कोई उन्हें बहुत सरल शब्दों में पॉवर हाउस कह देता । प्रत्येक की दृष्टि में वे कुछ-न-कुछ पृथक व विलक्षण थे । उनके बहुआयामी व्यक्तित्व व कृतित्व का कुछ ऐसा योग था कि गणित की भाषा में उनके व्यक्तित्व व कृतित्व के लाखों संयोजन संबंध स्थापित होना स्वाभाविक है । इसीलिए प्रत्येक की दृष्टि में वे पृथक पहचान थे किन्तु अनेकांत के प्रवक्ता आचार्य तुलसी स्वयं अनेकांत थे ।



भाषा व भाष्य में अत्यंत शुद्ध, वाणी से दृढ़ किन्तु अत्यंत सहज-सरल, कलात्मक व विशेषणात्मक प्रस्तुति उनकी अपनी ही शैली थी । जो उनके संपर्क में थे वे निश्चित रूप से यह मानते हैं कि आचार्य तुलसी मितभाषी थे । आवश्यकता से भी कम कहना किन्तु अपनी भाव भंगिमा से अनपढ़ व नासमझ को भी समझा देने की उनकी अपनी विलक्षण प्रतिभा थी । आँखों-आँखों में बात जाना, इस आशय में सामान्यबात है कि आचार्य तुलसी की आँख की कोर से संपूर्ण धर्मसंघ का अनुशासन चलता था ।

व्यक्तित्व के बाह्य पक्ष में सैंकड़ों हजारों मुद्राओं का अनुसंधान संभव है किन्तु आचार्य तुलसी की मुद्राएँ उतनी थी जितने किसी भाषा के शब्द हो सकते हैं । कदाचित् इससे भी अधिक या कहें असंख्य तो भी अतिशयोक्ति नहीं होगी ।

गत २-३ दशक में जिन्होंने कम अंतराल में आचार्य तुलसी को देखा, उन्होंने

सामान्यतया उनमें कोई शारीरिक परिवर्तन अनुभव नही किया वरन् उन्हे और अधिक क्रियाशील अवश्य पाया । सामान्यतया चर्चा में श्रद्धालु कह बैठते थे कि गुरुदेव कब सोते हैं, कब आराम करते है, कुछ पता ही नही चलता ! हर बार उन्हे अधिक क्रियाशील देखकर उन्हें चिर युवा कहना अधिक सम्यक् लगता था । श्रम प्रधान जीवन कदाचित उन्हे पसंद था । संघर्ष और विरोध को वे विनोद मानते थे । उनके जीवन में अनेक ऐसे अवसर आये जब उन्हे भयकर विरोध का सामना करना पड़ा किन्तु वे सदैव सम रहे, अडिग रहे तथा विरोधो का अत्यंत सहजता व सरलता से सामना किया । समय ने सिद्ध किया कि वे सदैव संघर्षो से और अधिक उजले होकर बाहर आये ।

दुनिया मे अनेकानेक महापुरुष हुए हैं । बड़े-बड़े संतों व योगी जनो ने इस धरती पर जन्म लिया है किन्तु कोई विरला ही होगा जो पूर्णतः सार्वजनिक जीवन में रमकर अपनी

> **"आज संपूर्ण विश्व उपभोग व आधुनिकताजन्य कठिनाइयों में कुछ इस प्रकार उलझ चुका है कि वह दिग्भ्रमित स्थिति में है । उन्हें त्राण यदि दे सकता है तो वह है अणुव्रत आंदोलन । अणुव्रत अनुशास्ता आचार्य महाप्रज्ञ सदा ही कहते आये हैं कि अणुव्रत आंदोलन आधुनिक चकाचौंध में मात्र दीपक की तरह ही क्यों न हो किन्तु जब संपूर्ण विश्व तिमिर के साये में होगा, यह दीपक ही संपूर्ण जनमानस का पथदर्शक बनेगा । हमें अणुव्रत के दीप को निरंतर जलाए रखना है । यह मानव जाति के प्रति हमारा नैतिक दायित्व है ।"**

संतता को सुरक्षित रखते हुए पूर्ण पारदर्शी जीवन जी पाया हो । आचार्य तुलसी, जो थे, जैसे थे सबके सामने थे । उनका सम्पूर्ण जीवन एक खुली किताब की तरह था । एक ऐसी किताब जिसे पढ़ने के लिए किसी भाषा का अक्षर ज्ञान भी जरूरी नहीं था । उनके पाठक (श्रद्धालु) घंटो दूर बैठे उन्हें एकटक पढ़ते (निहारते) रहते थे । आचार्य तुलसी वह गद्य थे जिसे जितना पढ़ो, जितनी बार पढ़ो, नयापन मिलता था । वे ऐसा महाकाव्य थे जिसमें डूबे लोग भंवरे की

तरह स्वयं के अस्तित्व को भूल बैठते थे । उनके प्रवास स्थलों पर प्रायः कुछ श्रद्धालु सामायिक में बैठे कुछ यों खो जाते ज्यों खुली आँखों ध्यान में समा गए हों । अपने ही महाकाव्य के वे स्वयं महानायक थे जिसके अचानक महाप्रयाण ने संपूर्ण जगत को ठीक वैसा ही स्तब्ध कर दिया जैसा किसी कथानक में महानायक के अचानक प्राणांत पर होना स्वाभाविक है ।

प्रखर बुद्धि के धनी, युग दृष्टा आचार्य तुलसी आचरण व व्यवहार को उतनी ही प्राथमिकता देते थे जितनी कोई संत अध्यात्म को देता है । वे व्यावहारिक जीवन की कठिनाइयों को पहचानते थे अतः कभी अव्यावहारिक नहीं बने । धर्म और व्यवहार को उन्होंने कभी एक तराजू में नहीं रखा । वे सदैव सचेत करते थे कि व्यवहार में धर्म सम्मतता ऊर्ध्वगामी बने, यह प्रयोग होना चाहिए किन्तु सामान्य व्यवहार को धर्म मान लेना उन्हें अभीष्ट नहीं था । आचरण में धर्म का अधिकतम समावेश कैसे हो, यह उनके चिंता का हेतु था जिसके लिए उन्होंने अणुव्रत आचार संहिता रूपी सेतु तैय्यार किया । आज अणुव्रत आंदोलन की अर्द्ध शताब्दी वर्ष में इसका मूल्यांकन हो रहा है । गत पचास वर्षों में इस आंदोलन ने दो पीढ़ियों का मार्गदर्शन किया है । लाखों व्यक्तियों ने अणुव्रतों को अंशतः या पूर्णतः अपनाया है, लाखों परिवार इससे लाभान्वित व सुखी हुए हैं । इतने बड़े भारत में जहाँ जनसंख्या लगभग एक अरब तक पहुँच रही है वहाँ उन लाखों लोगों का जनसंख्या में प्रतिशत यद्यपि अधिक नहीं है किन्तु एक विचार क्रांति निरंतर अक्षुण्ण रहकर आगे बढ़ रही है, यह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है । आचार्य तुलसी ने अपने अणुव्रत आंदोलन के रचनात्मक पक्ष तथा परिमाण पक्ष को सदा गौण रखा क्योंकि विषमता बहुल इस देश में कोई रचनात्मक आंदोलन अधिक प्रसारित हो पाना संभव नहीं है । यदि हम अन्य रचनात्मक गतिविधियों और इस विचार क्रांति से लाभान्वित व्यक्तियों एवं परिवारों का अध्ययन करें तो ज्ञात होगा कि आडम्बरहीन अणुव्रत विचार क्रांति अत्यधिक सफल रही है ।

आज संपूर्ण विश्व उपभोग व आधुनिकताजन्य कठिनाइयों में कुछ इस प्रकार उलझ चुका है कि वह दिग्भ्रमित स्थिति में है । उन्हें त्राण यदि दे सकता है तो वह है अणुव्रत आंदोलन । अणुव्रत अनुशास्ता आचार्य महाप्रज्ञ सदा ही कहते आये हैं कि अणुव्रत आंदोलन आधुनिक चकाचौंध में मात्र दीपक की तरह ही क्यों न हो किन्तु जब संपूर्ण विश्व तिमिर के साये में होगा, यह दीपक ही संपूर्ण जनमानस का पथदर्शक बनेगा । हमें अणुव्रत के दीप को निरंतर जलाए रखना है । यह मानव जाति के प्रति हमारा नैतिक दायित्व है ।

आचार्य तुलसी यद्यपि आज हमारे बीच नहीं हैं किन्तु उनकी स्थापित विचारधारा, उनका जीवन दर्शन और मीमांसाएँ हमारी धरोहर हैं । उनका मार्गदर्शन सार्वभौमिक व सार्वकालिक है जिसके लिए संपूर्ण मानव जगत युगों-युगों तक उनका ऋणी रहेगा ।



हमारा देश जातिवाद के जाल में फंसा है। जाति का महत्व अपनी जगह पर है। मनुष्य का महत्व उससे बड़ा है। आज देश के नागरिकों को जरूरत है मानव को मानव समझने की। अणुव्रत का आन्दोलन जो कि आचार्य श्री तुलसीजी द्वारा चलाया गया। वह यह कहता है कि मानव को मानव समझो। इसके छोटे-छोटे नियम देश के चरित्र की नींव को मजबूत बनायेंगे। मुझे आशा है कि देश के नागरिक लोग इसे सुनेंगे और अपनायेंगे।

—नीलम संजीव रेड्डी

वात्सल्य रस की अनुपम वर्षा

❑ साध्वी रतनश्री ❑

मेरी दीक्षा सं० २००८ कार्तिक शुक्ला त्रयोदशी के दिन दिल्ली चाँदनी चौक में आचार्य श्री तुलसी के करकमलों द्वारा हुई। मुझे गुरुकुलवास में रहने का सौभाग्य विशेष नहीं मिला। लगभग एक महीने के पश्चात् ही साध्वीश्री गोरांजी के साथ बर्हिविहारी बना दिया। वि०सं० २००८ एवं २०१० का चातुर्मास बम्बई में हुआ। सं० २०११ में आचार्य श्री स्वयं चातुर्मास हेतु पधार गए। बम्बई की जनता हर्ष से झूम उठी। खुशियों की तरंगें तरंगित होने लगी। सबका दिल दरिया उछाला खाने लगा।

साध्वी श्री गोरांजी आदि साध्वियों ने आचार्यश्री का भावभीना स्वागत किया। बोरीवली पर्यन्त अगवानी के लिए सामने पधारी। गुरुदेव ने महती कृपाकर साध्वी श्री गोरांजी आदि साध्वियों को अपने पास बुलाया। अंतरंग पृच्छा की। स्वास्थ्य कैसा है ? प्रचार-प्रसार कैसा है ? क्षेत्र कैसा हैं ? आदि विषयों में विशेष जानकारी की। सभी साध्वियों के अध्ययन स्वभाव आदि विषयों में बातें चलीं। मैं सिर्फ दो वर्ष की दीक्षिता थी। आचार्यश्री ने मेरी ओर ध्यान केन्द्रित करते हुए साध्वी श्री जी से पूछा—यह रतन श्री कैसी है ? क्या तुम्हारा कहना मानती है ?

साध्वी श्री जी ने फरमाया और सब बातें ठीक है पर एक बात की लापरवाही करती है।

आचार्यश्री—किस बात की ?

साध्वी जी—मैं कहती हूँ रतनश्री जी व्याख्यान देने चली जाओ। तब यह कहती है अभी तक श्रोता बहुत कम आये हैं।

आचार्य श्री ने यह बात सुनी और वात्सल्यरस से अभिसिंचित करते हुए शिक्षात्मक शब्दों में फरमाया देखो—रतनश्री ! अब आगे ऐसा नहीं करना है। साध्वी गोरांजी निर्देश दें उसी वक्त व्याख्यान देने चले जाना है। श्रोता कम हो या ज्यादा इसकी चिंता तुझे नहीं करना है। वंदन की मुद्रा में आज्ञा को शिरोधार्य किया।

हमारा तृतीय चातुर्मास बम्बई (मुलुण्ड) में हुआ। आचार्य प्रवर का सिक्कानगर हुआ। चातुर्मास परिसंपन्न हुआ। पुनः दर्शनों का सुअवसर प्राप्त हुआ।

साध्वी श्री जी को बुलाया। आवश्यक बातों की जानकारी की गई। तत्पश्चात् पूछा क्यों अब यह कहना मानती है ? साध्वी श्री गोरांजी—हाँ, आचार्यवर जब मैं कहती हूँ तत्काल व्याख्यान में चली जाती है।

आचार्यवर ने मेरे पर अमृत रस की वर्षा करते हुए फरमाया ५१ कल्याणक बक्सीस। मै गद्‌गद् हो गई। गुरुकृपा का अद्‌भूत पाथेय पाकर। मेरे शरीर की एक-एक कोशिका हर्ष से रोमांचित हो गई। गुरु की अनुपम सुधाभरी दृष्टि पाकर।

मै समझती हूँ व्यक्ति निर्माण की यह एक बहुत बड़ी कला है। शिक्षामृत से सिंचन कर आगे का मार्ग प्रशस्त करना। ऐसे हृदय देवता को पाकर सचमुच ही मै तो निहाल हो गई। जन्म-जन्मान्तरपर्यन्त आपके अथक उपकारो से उऋण नहीं हो सकूँगी।

आज से लगभग २० वर्ष पहले हमारा चातुर्मास ग्वालियर (मध्य प्रदेश) मे हुआ। चातुर्मास परिसंपन्न होते ही आसपास में विचरने का आदेश हुआ। उस वक्त का मर्यादा महोत्सव सुजानगढ़ होने वाला था। मिगसर महीना पुरा हो गया। पोष महीने मे हमें दर्शन करने का संदेश मिला। आदेश मिलते ही हमने लंबेटर विहार किए और जल्दी ही आचार्यश्री के दर्शन कर लिए।

उस दिन हमारे दर्शनो का समय ११ बजे का था। श्रद्धेय आचार्यश्री के सान्निध्य में विद्वानों की महत्त्वपूर्ण संगोष्ठी हो रही थी। ज्यों ही हम पहुँचे, दर्शन किये त्यों ही आचार्यश्री ने सुख पृच्छा पूछी। सुख पृच्छा पूछते ही हमारी सारी थकान चकनाचूर हो गई।

फिर पूछा तुमको ग्वालियर कितना किलोमीटर पड़ा। हमने कहा लगभग छः सौ किलोमीटर। फिर फरमाया तुम्हारे मे चक्कर पड़ गया है। हमने निवेदन किया चक्कर किस बात का, हमारे दर्शन हो गए। आचार्यश्री तुमको वहाँ से सीधे रायपुर भेजना था। कोई बात नहीं आ गए तो अच्छा ही है। ठिकाने जाओ आहार पानी करो।

बड़े-बड़े विद्वत् लोग दृष्टा बन देखते ही रह गए। एक सामान्य साध्वी के आने पर उन्हें कितना स्नेह देते है। कितना माधुर्य देते है, कितने प्रेम से वार्तालाप करते हैं। वास्तव मे ही तेरापंथ के धर्मगुरु महान हैं, जो अपने शिष्यों को दिव्यता प्रदान करते हैं। उनके दिलो को जीत लेते है।

मेरी दृष्टि में आचार्य श्री तुलसी इंसान के रूप में भगवान

हम ग्वालियर चातुर्मास करके आये ही थे। चार-पाँच दिन के पश्चात् ही पूज्यपाद ने याद फरमाया। मै उपस्थित हुई, आपने फरमाया इस बार तुम्हें रायपुर की यात्रा मे भेजना है। जानती हो कौन-सा रायपुर? हाँ गुरुदेव रायपुर को कौन नहीं जानता। जहाँ अग्नि परीक्षा काव्य की अग्नि परीक्षा हुई थी।

आपने शिक्षात्मक शब्दो मे फरमाया देखो घबराना नही है। वहाँ खूब साहस के साथ कार्य करना है। हम सभी साध्वियों ने निवेदन किया। हम मर्यादा महोत्सव के पश्चात् शीघ्र ही विहार कर देगी लेकिन करुणा सागर ने फरमाया नही तुम अभी तक समझती नही हो। फिर गर्मी हो जाएगी। रास्ते में पानी का योग मिलना मुश्किल हो जाएगा। विहार की

तारीख आचार्य प्रवर ने वहीं बता दी ।

मर्यादा महोत्सव के सिर्फ १० दिन ही अवशिष्ट थे । आचार्यश्री ने फरमाया तुम्हारा मर्यादा महोत्सव तो आसीन्द तक होगा । मैंने कहा नहीं गुरुदेव हम भीलवाड़ा तक तो पहुँच ही जाएँगी ।

सूर्योदय की पावन रश्मियों के साथ हम साध्वियों ने महा मंगल पाठ सुना । हाथ से ग्रास भी लिया । वंदन करके वहाँ से प्रस्थान किया । चलते-चलते आसीन्द पहुँचे । मर्यादा महोत्सव के तीन दिन अवशिष्ट थे । भीलवाड़ा अच्छे ढंग से पहुँच सकते थे । पर आसीन्द निवासी श्रावकों का इतना आग्रह रहा कि हम किसी भी स्थिति में आपको विहार नहीं करने देंगे । मर्यादा महोत्सव का कार्यक्रम यही कराएँगे ।

मैंने कहा आप कौन-सा ऐसा विशिष्ट कार्यक्रम कराएँगे । जो हमें यहाँ रोक रहे हैं । उन्होंने कहा हम यहाँ एक बृहद् श्रावक सम्मेलन आयोजित करेंगे । आसपास ग्रामों के श्रावकों को बुलाएँगे । संभवत: २१ ग्रामों के लोग आये । हम श्रावकों का नम्र निवेदन भरा आग्रह टाल नहीं सके और वहीं मर्यादा महोत्सव करना पड़ा । फिर स्मृति में आया अरे ! भविष्य द्रष्टा आचार्यश्री ने पहले ही फरमा दिया था कि तुम्हारा मर्यादा महोत्सव तो आसीन्द तक होगा । हम कैसे भीलवाड़ा जा सकती । मेरी दृष्टि में आचार्यश्री बहुत बड़े भविष्यद्रष्टा थे ।

ऐसा ही एक दूसरा प्रसंग है । आचार्यश्री ने फरमाया था—तुम उज्जैन तक चले जाना । फिर रायपुर के श्रावक मोतीलाल जी धारीवाल संभाल लेंगे । उपासना में उपस्थित हो जाएँगे । हम साध्वियाँ चलती है । आपस में बातचीत की क्या बात है ? रायपुर चातुर्मास फरमाया है । अभी तक किसी ने दर्शन नहीं किए । और कोई वहाँ के संदेश भी नहीं मिले ! विहार करते-करते हम उज्जैन पहुँचे और ठीक उसी दिन रायपुर के वरिष्ठ श्रावक मोतीलाल जी धारीवाल और वहाँ के सभा के मंत्री मंगलचंदजी लूंकण अपने परिवार सहित उपासना में पहुँचे । फिर हमारा ध्यान गया अरे ! ये पहले कैसे आते । आचार्य श्री ने पहले ही फरमा दिया था कि तुम उज्जैन तक पहुँच जाओ । फिर रायपुर के श्रावक मोतीलालजी आ जाएँगे । मैं तो मानती हूँ आचार्य प्रवर एक इंसान के रूप में साक्षात् भगवान थे और पूरे भविष्यवेत्ता थे । ऐसे दो ही प्रसंग नहीं बल्कि अनेकानेक ऐसे प्रसंग हैं । गुरुदेव के मुखारविन्द से जो शब्द निकल गए वे वैसे के वैसे साकार हो जाते थे ।

आज तो केवल जिनकी स्मृतियाँ ही अवशेष रह गईं । याद आते ही दिल का दरिया छलकने लग जाता है । आँखें नम हो जाती हैं । वाणी गद्गद् हो जाती है ।

हृदय देवता को पुन:-पुन: भावांजलि समर्पित ।

□□□



जो समय चिन्ता में जाता है, वह कूड़ेदान में डाले गए कचरे की तुलना में आता है। जो समय चिन्तन में जाता है, वह तिजोरी में जमा हो जाता है।

-आचार्य श्री तुलसी

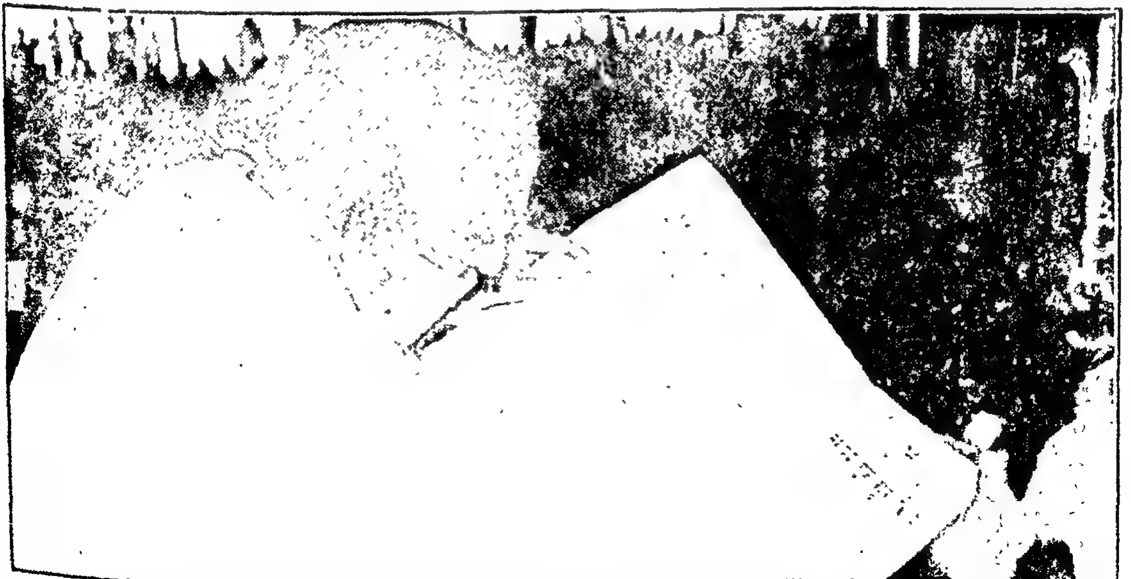
अब तुम ठीक ही रहोगी

❑ साध्वी पुण्ययशा ❑

इस जहाँ में कुछ लोग ऐसे नज़ीर होते हैं ।
जिन्हें जमीं झुकाए आस्मां सलाम भरे ॥

उन महान नजीरों में से एक थे तेरापंथ के नवमाधिशास्ता गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी । उत्साह, उल्लास, चुस्ती और क्रियाशीलता का नाम था अणुव्रत अनुशास्ता गुरुदेव श्री तुलसी । चिन्तन में अहिंसा, भाषा में कल्याणकारिता, हाथों में पुरुषार्थ और चरणों में लक्ष्य तक पहुँचने वाली गतिशीलता का नाम था अणुव्रत अनुशास्ता गुरुदेव श्री तुलसी । करुणा का हिमालय, अध्यात्म का उत्कर्ष, नव-निर्माण की पुकार और सत्यं-शिवं-सुंदर की समन्विति का नाम था अणुव्रत अनुशास्ता गुरुदेव श्री तुलसी । आहार-विजय, निद्रा-विजय और आसन विजय का नाम था अणुव्रत अनुशास्ता गुरुदेव श्री तुलसी । सकारात्मक, सृजनात्मक दृष्टिकोण और कथनी-करनी की एकता का नाम था अणुव्रत अनुशास्ता गुरुदेव श्री तुलसी । जिनके रत्नत्रय के आलोक ने लाखों-लाखों व्यक्तियों को आलोकित कर दिया । नदी के प्रवाह की तरह निरंतर गतिशील पूज्य गुरुदेव की संयम यात्रा की प्रत्येक लहर न जाने कितने व्यक्तियों की पिपासा शांत कर गई । कितनों के उत्ताप का हरण कर गई और कितनों की सूखती हुई खेतियां लहलहा गईं । साथ में यह भी सत्य है कि वह न जाने कितने अवरोधों को ढ़हाकर अपने साथ ले गईं ।

वे एक महान तेजस्वी, ओजस्वी, वर्चस्वी, यशस्वी और मनस्वी आचार्य थे । उनका



आध्यात्मिक ओज अप्रतिम था । चिन्तन का स्तर बहुत ऊँचा था । वे प्रियता-अप्रियता के संवेदन से काफी ऊर्ध्वारोहण कर चुके थे । उनका वक्तृत्व कौशल वेजोड़ था, व्यक्तित्व में एक चुम्वकीय आकर्षण था । साधना से प्रभास्वर आभामंडल को एक बार देखने के वाद वह व्यक्ति पुन: श्री चरणो मे पहुँचने के लिए समुत्सुक रहता था । आचार्य कुन्द-कुन्द ने एक जगह लिखा है– "जं देई दिक्ख सिक्ख कम्मक्खय कारणे शुद्धा" आचार्य वह होता है जो कर्म क्षय करने वाली शुद्ध दीक्षा और शुद्ध शिक्षा देता है । अणुव्रत अनुशास्ता गुरुदेव उन्हीं प्रभास्वर आचार्यो मे से थे, जिन्होंने अपने कुशल हाथों से लगभग एक हजार मुमुक्षुओं को दीक्षित कर नया कीर्तिमान स्थापित किया । समण श्रेणी का प्रादुर्भाव, जिसमें भविष्य की उज्जवल संभावनाएँ निहित है । जैन समाज को गुरुदेव की यह युगानुकूल अनुपम मौलिक देन है । परम श्रद्धेय आचार्य श्री महाप्रज्ञजी के शब्दों में—समण श्रेणी क्या है ? "पुराने ग्रंथो का नया संस्करण । दिवस और संध्या के बीच नया अवतरण ।" गुरुदेव की लगभग एक लाख किलोमीटर की पदयात्राओं ने तेरापंथ के यशस्वी भाल को विशिष्ट तेजस्विता प्रदान की है । अणुव्रत प्रेक्षा की गूँज न केवल भारत मे अपितु देश-विदेश में अनुगुंजित है । राष्ट्रीय एकता पुरस्कार में गुरुदेव के नाम का चयन तथा इंदिरा गांधी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार से समग्र जैन समाज गौरवान्वित हुआ है । अणुव्रत अनुशास्ता गुरुदेव श्री तुलसी विश्व विश्रुत आचार्य थे, यदि ऐसा कहूँ तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी ।

वे पद से नही पद उनसे सुशोभित बने । भारत ज्योति, राष्ट्रसंत, युगप्रधान, अमृतपुरुष, वाक्पति हाकिम खाँ सूर, गणाधिपति आदि अलंकरणों से उन्हे अलंकृत किया गया लेकिन पद लिप्सा से कोसों दूर गुरुदेव ने कभी भी अपने लेखन के बाद अपना उपनाम नही लगाया । तुलसी नाम ही सर्वप्रिय था । जहाँ कही भी अपना नाम लिखते वह होता संत तुलसी या गणाधिपति तुलसी । इतना ही नही अपने आचार्य पद का विसर्जन कर अपने हाथो अपने सुयोग्य शिष्य का आचार्य पदाभिषेक किया । यह १५०० वर्षो के इतिहास की दुर्लभ घटना तथा वैज्ञानिकों के लिए शोध का विषय है ।

जब समाज अंधविश्वासों, कुप्रथाओ और अधार्मिक प्रवृत्तियो से गुजर रहा था उस विकट बेला मे गुरुदेव ने नारी जागृति का शंखनाद कर समाज के समक्ष नारी जाति के स्वस्थ रूप को दर्शाया । विशेषकर तेरापंथ साध्वी समाज और महिला समाज को अपनी स्मिता से परिचित कराया । महाश्रमणी साध्वीप्रमुखा श्री जी को संघ महानिर्देशिक जैसा गुरुत्तर दायित्व सौपा, जिससे न केवल साध्वी समाज को अपितु संपूर्ण धर्मसंघ और मानव समाज को सात्विक गौरव है ।

अव तुम ठीक ही रहोगी–

पूज्य गुरुदेव की शासकीय प्रशासनिकता मे अनुशासन और वात्सल्य का अद्भुत संगम

था । साधु हो या साध्वी, श्रावक हो या श्राविका, समण हो या समणी, प्रश्न बनकर सन्निधि में पहुँचते और समाधान बनकर लौटते । तब स्वत: ये बोल थिरक पड़ते– "त्वमेव माता च पिता त्वमेव" गुरुदेव की वाणी का जादुई प्रभाव देखा मैंने अपने जीवन में । घटना प्रसंग संवत् २०४४ का है । दीक्षित होते ही तीन-चार वर्षों तक मैं बहुत ज्यादा अस्वस्थ रही । बहिर्विहार के तीन वर्षों के बाद जब मैंने सर्वप्रथम पूज्य गुरुदेव के दर्शन किये तब इतनी व्यस्तता में भी गुरुदेव ने अपने चरणों की इस नन्हीं-सी रजकण को याद रखा । लगभग पंद्रह मिनट तक स्वास्थ्य के बारे में जानकारी की । दूसरे दिन जब मैं साध्वी श्री सुखदेवा जी (चूरु) के साथ गुरुदेव के उपपात में पहुँची तो मैं कुछ दूरी पर बैठी थी और साध्वी श्री सुखदेवां जी गुरुदेव की नजदीकी से समुपासना कर रहे थे । वात्सल्य निधि गुरुदेव ने इंगित कर मुझे भी अपने नजदीक बुला लिया । फिर साध्वी श्री सुखदेवां जी से कहा– "आ भली तो घणी है पर इर तो कोई कर्मा रो ही जोग है ।" फिर मुझे शिक्षा देते हुए कहा– "देख ! भला पणो कदेई नहीं छोड़णो, पाप भिरु रहणो, संघ-संघपति क प्रति समर्पित रहणो ।" फिर अनायास गुरुदेव के मुखार्विन्द से यह वाक्य नि:सृत हुआ ।" "अब तुम ट‍ीक ही रहोगी" गुरुदेव के इन आशीर्वचनों ने मेरे जीवन में संजीवनी बूँटी का काम किया और उसी दिन से मेरे स्वास्थ्य में क्रमश: सुधार प्रारंभ हो गया तथा धीरे-धीरे उस बीमारी से मैं मुक्त हो गई ।

बीदासर में मोह मत रखना–

वि०सं० २०५१ की घटना है । साध्वी श्री सुखदेवां जी के स्वर्गवास होने के पश्चात मेरी मन: स्थिति बीदासर में साध्वी श्री भत्तुजी की सेवा में रहने की थी । मैंने गुरुदेव को निवेदन किया । गुरुदेव ने विनोद में फरमाया– "बीदासर की हो, बीदासर में रंज गई, छ: साल हो गए बीदासर रहते अब भी बीदासर की ही अर्ज कर रही हो ।" फिर फरमाया– "देखो ! बीदासर में मोह मत रखना ।" मैंने निवेदन किया– "गुरुदेव ! बीदासर में तो मोह नहीं है पर साध्वी श्री भत्तुजी की सेवा में रहने का मन जरूर है ।" गुरुदेव ने मेरे मन को पढ़ा और मुझे साध्वी श्री भत्तुजी की सेवा में अन्तिम समय तक रखा । मैंने यह अनुभव किया कि छायानिधि पक्षी की छाया की तरह जहाँ गुरुदेव की दृष्टि टिक जाती वह निहाल हो जाता तथा उसके सब कार्य सिद्ध हो जाते ।

आलोकमय, कान्तमय और अतिशयी व्यक्तित्व के धनी आराध्य देव का उज्ज्वल एवं पारदर्शी व्यक्तित्व शब्दों के फ्रेम में आबद्ध दस्तावेज नहीं हो सकता ।

कैसे माप सकूँ शब्दों से मैं व्यक्तित्व तुम्हारा ।
संघ संपदा के कण-कण में है कर्तृत्व तुम्हारा ।।

वह कर्तृत्व, वह व्यक्तित्व, वह मन मोहिनी मूरत आज भी हमारे नयनों में ऐसे बसी है जैसे सूर के श्याम, तुलसी के राम और मीरा के घनश्याम ।

काश ! हम समझ पाते

❑ साध्वी कल्पलता ❑

आचार्य तुलसी परम पुरुषार्थी और पराक्रमी महामानव थे । उनकी भुजाओं में युग प्रवर्तन की क्षमता थी । उनके चिन्तन में युगनिर्माण के स्वर थे और उनके कर्तृत्व में निष्काम कल्याण की कामना थी । वे आने वाले हर क्षण का सृजन से स्वागत करते और वर्तमान क्षण को सार्थकता का लिबास पहनाकर अभिनन्दनीय बता देते । आचार्य तुलसी के मन-मस्तिष्क में तो क्या उनके आसपास के परिवेश में प्रमाद और निशा को स्थान तक नहीं मिलता । जब कभी उनके शरीर पर रोग ने आक्रमण किया, उन्होंने उसके साथ भी समझौता करने का प्रयत्न किया । बीमारी को भी उन्होंने मात्र एक परिस्थिति के रूप में देखा । उन्होंने कभी हारना नहीं सीखा । एकमात्र श्वास की बीमारी ऐसी थी, जिसने लम्बे समय तक अपना प्रभाव दिखाया । वि०सं० २०१० में आपको श्वास की तकलीफ हुई । प्रथम बार की गई चिकित्सा के बाद उन्होंने एक लम्बी यात्रा कर ली । बीच में किसी प्रकार का व्यवधान नहीं आया । एक बार लगा कि बीमारी से छुटकारा मिल गया किन्तु उसने पुनः उभार ले लिया । उसके बाद अनेक प्रकार की चिकित्सा करवाई पर सफलता नहीं मिली । उसी समय आचार्य तुलसी ने उसके साथ मैत्री स्थापित कर ली । जीवन के कई कालखण्डों में इस अस्थमा ने ऐसा भयंकर उभार लिया कि देखने वाले कम्पित हो गए । डॉक्टरों का धैर्य डोल गया पर आचार्य श्री के इस्पाती चिन्तन में कहीं मोच नहीं आई । सच्चाई यह है कि अस्थमा ने भी आचार्यश्री के उस मैत्री के विश्वास को स्थापित नहीं किया ।

कैसे ठीक होगा

दमा, जुकाम और कभी-कभी बुखार वर्षों से सखा बनकर साहचर्य निभा रहा था । उससे व्यथित होकर आचार्यश्री के मुख से निराशा भरे स्वर कभी सुनाई नहीं दिए । ईस्वी सन् १९९६ की मई-जून से आचार्यश्री को एसीडिटी और कब्ज का अनुभव हो रहा था । साधारण चिकित्सा चल रही थी और मन भी निर्भार था । धीरे-धीरे एसीडिटी कम हो गई, पर कब्ज यथावत चलती रही ।

३१ दिसंबर, १९९६ को आचार्य श्री महाप्रज्ञजी ने चाड़वास मर्यादा महोत्सव के लिए प्रस्थान करने के पश्चात् १३ जनवरी को जयपुर से उदररोग विशेषज्ञ डॉ० पोकरणा आए । उन्होंने जाँचकर दवा प्रारंभ की । उससे एक बार कब्ज से राहत मिली । कुछ दिन बीते थे कि स्थिति पूर्ववत् हो गई । उन्हीं दिनों का प्रसंग है । कब्ज के कारण मन बेचैन था ।

संघपरामर्शक मुनि मधुकरजी पास मे खड़े थे । गुरुदेव ने उनसे कहा—यह रोग कैसे लग गया, कुछ समझ मे नही आ रहा है । इससे घबराहट होती है, मन भी प्रभावित होता है । यह रोग कैसे ठीक होगा—? लगता है कि बीकानेर जाकर इलाज कराना पड़ेगा । क्योकि जैसे खाने से तृप्ति होती है, वैसे शुद्धि से भी तृप्ति होनी चाहिए ।

अब तो रामायण कोई दूसरा ही सुनाएगा

प्रसंग लाडनूं का है । गुरुदेव भिक्षु विहार के एक कक्ष मे मालिश करा रहे थे । उन दिनो प्रज्ञालोक हाल मे महाश्रमणी, साध्वीप्रमुखा कनकप्रभाजी प्रवचन करती थी । गुरुदेव द्वारा रचित प्रभुता री पराजय (भरत बाहुबलि) व्याख्यान चल रहा था । साध्वी प्रमुखाजी का संगान सुन गुरुदेव ने कहा—कनकप्रभाजी अच्छा गाने लगी हैं ।

मुनि मधुकरजी ने निवेदन किया—व्याख्यान बहुत जम रहा है । गायनशैली अच्छी है । साध्वी प्रमुखाजी व्याख्यान मे हमेशा गाती है । ग्रंथो का सम्पादन करते-करते गुरुदेव से प्रायः सभी रागें सीख ली है, ऐसा लग रहा है ।

तभी मुनि दिनेश कुमारजी बोले—गुरुदेव ने कृपा कर इस वर्ष हमे रामायण की रागें सिखाई पर लगता है कि हम अच्छी तरह से सारी रागें पकड़ नहीं पाए है । इसलिए गुरुदेव को एक बार और कृपा करानी होगी ।

मुनि श्रेयांसकुमारजी—गुरुदेव ! यह चातुर्मास्य गंगाशहर है । हमारे गाँव में आप रामचरित फरमाने की कृपा करे ।

संतो की अनुनय-विनय भरी प्रार्थना सुन गुरुदेव दो क्षण मौन रहकर बोले—अब तो रामायण कोई दूसरा ही सुनाएगा, इस शरीर से तो मुश्किल लगता है ।

ये शब्द किसी के मन को अच्छे नहीं लगे, कानो को सुखद नहीं लगे, किन्तु गंभीर बात समझकर इन पर जितना गौर करना चाहिए था, नहीं किया ।

मृत्यु शाश्वत क्रम है

गंगाशहर पदार्पण के कुछ दिन बाद गुरुदेव ने श्रावक-संबोध की वाचना प्रारंभ की । वाचना का उद्देश्य श्रावक-संबोध का भाष्य तैयार करना था । महाश्रमणी, साध्वीप्रमुखा श्री जी सौद्देश्य उपस्थित होती थीं । महाश्रमणजी (युवाचार्य श्री) और कुछ साधु-साध्वियाँ भी उसमें संभागी होते थे । वाचना प्रारंभ होने ही वाली थी कि श्रीमती सज्जनदेवी चौपड़ा दर्शन करने पहुँची । अपने पति धर्मचन्दजी चौपड़ा के अचानक चले जाने से वे बहुत व्यथित हो रही थी । उस दिन उनके मन मे व्यथा का ज्वार उमड़ रहा था । वे अपने आपको रोक नही पाई । अविरल बहती आँसुओं की धारा और अवसाद मे डूबे चेहरे ने बिना बोले ही सब कुछ कह दिया । उस समय गुरुदेव ने उनको आश्वासन का एक शब्द भी नही कहा । आदेश की भाषा में कहा—उपासना कर लो, श्रावक-संबोध की वाचना चल रही है, इसे सुनो ।

गुरुदेष्टि में अनन्त शक्ति होती है। इस कथन का श्रीमती चौपड़ा ने उस दिन अनुभव किया। उस दिन के सान्निध्य ने जो शक्तिपात किया, उसका वर्णन असंभव है। उस दिन से वे शांत बनी रही। विचारों में संतुलन बना रहा और अपने आप शक्ति का अनुभव किया।

वाचना का क्रम नियमित चल रहा था। दो-चार दिनों के बाद वाचना देते-देते गुरुदेव ने कहा—मृत्यु शाश्वत क्रम है। इसका अपवाद कोई नहीं बन सकता। इसलिए मोह किसी से नहीं रखना चाहिए।

साधारण भाषा में साधारण से ये तीन वाक्य गुरुदेव ने जिस असाधारण ढंग से प्रस्तुत किए, हम समझ नहीं सके। उनकी आँखों में वहाँ बैठे एक-एक सदस्य के अंत:करण को स्पर्श करने के भाव थे। वाणी में आत्मीयता के साथ मोहग्रन्थि को भेदने की वेधकता थी और इस सचाई को अनुभव कराने की प्रेरणा थी। इस वाक्य को आपने तीन बार दोहराया। पहले श्रीमती चौपड़ा को संबोधित कर कहा, दूसरी बार महाश्रमणीजी को लक्षित कर कहा और तीसरी बार साधु-साध्वियों की ओर दृष्टि डालते हुए कहा। उस समय गुरुदेव की आँखों में अप्रतिम तेज था और थोड़े में बहुत कुछ करने का भाव था।

जो रहेगा, वही मनाएगा

२३ जून, १९९७ को प्रात: लगभग आठ बजे गुरुदेव आसन कर विराजे ही थे कि मुनि मोहनलाल 'आमेट' बोथरा-भवन गुरुदेव के दर्शन करने आए। उससे पहले दिन मेवाड़ कान्फ्रेंस के अधिकारी लोग गंगाशहर आए। उन्होंने केवला में भिक्षु-भूमि के संदर्भ में होने वाले कार्यक्रम की विस्तार से जानकारी दी तथा कहा—गुरुदेव ! आपने वि०सं० २०६० में सिरियारी पधारना फरमाया है। वहाँ से मेवाड़ में पधारना फरमाएँ।

इस कथन को दोहराते हुए गुरुदेव ने कहा—मोहनजी ! किसने कहा कि हम सिरियारी जाएँगें ? मुनि मोहनलालजी—एक बार मेवाड़ पधारने की कृपा करें। गुरुदेव—हमने कभी नहीं कहा है। कौन जाने, कौन।

इतना कहकर गुरुदेव मौन हो गए। जब-जब इस प्रसंग की स्मृति होती है, मघवा शताब्दी कार्यक्रम की याद आ जाती है। साध्वी प्रमुखाजी ने निवेदन किया—गुरुदेव ने इस शताब्दी महोत्सव कार्यक्रमों के माध्यम से पूर्वाचार्यों के कर्तृत्व को वर्तमान युग को परिचित करा दिया है। अब हमारे सामने दो महत्त्वपूर्ण प्रसंग और हैं। वि०सं० २०५४ में माणकगणी का निर्वाण शताब्दी समारोह तथा २०६० में आचार्य भिक्षु का निर्वाण द्विशताब्दी महोत्सव। मैं गुरुदेव से प्रार्थना करती हूँ कि भिक्षु स्वामी का यह ऐतिहासिक महोत्सव पूरी तैयारी के साथ सिरियारी में मनाने की कृपा करें। गुरुदेव ने उसी समय एक वाक्य—जो रहेगा, वहीं मनाएगा—कहकर उस विषय का पटाक्षेप कर दिया।

ये कुछ ऐसे अनछुए प्रसग है, जिनकी मस्तिप्क मे छुवन होते ही मन भर जाता है और चारो ओर पसर जाती है एक शून्यता, जिसको भरना मुश्किल ही नही असंभव है। रह-रहकर मन सागर में एक ही लहर उठती है—काश ! हम समझ पाते।

लो वंदन आज़ हमारा ॥

—साध्वी रतन श्री

तुलसी तुम आये धरती पर लेकर नया उजारा
लो वंदन आज हमारा ॥
चंदेरी का लाल लाडला माँ वदना का प्यारा
तेरी दिव्य छटा से चमका झूमर कुल उजियारा
कालूगणि से दीक्षा लेकर संयम पथ स्वीकारा ॥
बने संघ के नेता स्वामी तुम छोटी आयु मे
काव्य कोष, आगम, व्याख्याता बने इसी आयु में
यात्राओ के माध्यम से दिया, व्यसन मुक्ति का नारा ॥
संघर्षो की घडियों मे भी रहे सदा मुसकाते
चट्टानों को चीर-चीरकर आगे कदम बढ़ाते
तेरे पद-चिह्नों पर चलने का हो लक्ष्य हमारा ॥
विप की घूँटे पीकर तुमने अमृत सबको बाँटा
काँटो की राहों पर चलकर विषम मार्ग को काटा
महामानव ! तेरी शक्ति का कैसा दिव्य नजारा ॥
मानवता के प्रहरी तुमने दर्द पराया जाना
स्नेह सुधा से अभिसिंचित कर अपना सबको माना
महासंमदर ! क्या बतलाएँ (तूं) जन-जन का रखवारा ॥
करुणा मैत्री और अहिंसा का संदेश सुनाया
विश्व क्षितिज पर अणुव्रतो का तुमने बिगुल बजाया ॥
स्वर्णाक्षर मे अंकित होगा नव इतिहास तुम्हारा ॥
ज्योतिपुंज उठ गए क्षणो मे हक्के बक्के सारे
विश्वास नही होता कानो को रहे देखते सारे
कुटिल काल की क्रूर कहानी का यह खेल है सारा ॥

आचार्य श्री तुलसी

वसुधा के वैभव

साध्वी स्वस्तिकाश्री

एक विद्वान व्यक्ति किसी महात्मा के अनन्य भक्त थे । किसी मित्र ने उनसे पूछा— पंडितजी ! महात्माजी महान् योगी और पहुँचे हुए साधक थे । उनके यशस्वी जीवन की बहुत-सी बातों को आप जानते हैं फिर आप उनका जीवन चरित्र क्यों नहीं लिखते ? पंडितजी ने गंभीरता के साथ कहा— "मैं महात्माजी के जीवन चरित्र लिखने के प्रयत्न में लगा हूँ । मैंने कुछ लिखना आरम्भ भी कर दिया है । मित्र ने फिर पूछा— वह कब तक प्रकाशित हो जाएगा ? पंडितजी ने कहा— आपने शायद समझा होगा कि मैं महात्माजी का जीवन चरित्र कागजों पर लिख रहा हूँ । ऐसा सोचकर आप भूल कर रहे हैं । मेरे विचार से महापुरुष का जीवन चरित्र अपने जीवन में उतारकर लिखा जाना चाहिए । इसलिए मैं तो उनके आदर्शों को यथासंभव अपने जीवन में उतारने का प्रयास कर रहा हूँ । महापुरुष का जीवन हीरे की तरह मूल्यवान होता है, सूर्य के समान प्रकाशवान होता है । पृथ्वी की तरह सहिष्णु तथा सागर के समान गंभीर होता है । इस संदर्भ में पूज्य गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी एक ऐसे महापुरुष हुए हैं जो दूसरों के लिए दीपक की भाँति तिल-तिल कर जलते रहे, प्रवाही निर्झर की भाँति परहितार्थ अविरल बहते रहे । वे दुनिया से भरकर लेते और दरिया बनकर देते रहे ।

गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी ८३ वर्ष पहले लाडनूं की धरा पर जन्मे । उन्होंने अपना आध्यात्मिक तेज चारों तरफ फैलाया । अपनी साधना व नैतिक आंदोलन के माध्यम से समूची मानवता को अपना परिवार बनाया और मानवता के मसीहा कहलाए ।

११ वर्ष की उम्र में वे साधु बन गए । उन्होंने परम पूज्य गुरु कालूगणी के प्रकाशमान साये में संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी आदि अनेंक भाषाओं का गहरा अध्ययन किया । गुरु का अगाध वात्सल्य और प्रेम तथा विश्वास प्राप्त कर ज्ञान का अमृत पिया । गुरु ने आपकी क्षमता को पहचानकर २२ वर्ष की अवस्था में ही संघ का गुरुत्तर भार आपको सौंप दिया था । आचार्य पद पर आसीन होते ही पूज्य गुरुदेव श्री तुलसी संघ विकास, नारी विकास, राष्ट्र विकास और मानव विकास के नए-नए कार्यक्रमों की योजना बनाने लगे ।

मानव जाति को गुरुदेव ने अगणित अवदान दिए हैं । जिनकी गणना की जाए तो कई महाकाव्य बन सकते हैं । वे एक ऐसे युगपुरुष हुए हैं जिन्होंने समय की नब्ज को पहचानकर

अपनी सीमा में रहकर असीम कार्य किए है । इसलिए सारा संसार आज उनकी पूजा करता है । वे जगबंध वन गए । विश्व प्रकाशी पूज्य गुरुदेव श्री तुलसी का जीवन आरोहण की गाथा है । लघु से विराट बनने की सफल कहानी है, बिन्दु से सिन्धु तक पहुँचने की सफल प्रक्रिया है । उन्होने अपनी जीवन पद्धति से सारे राष्ट्र को प्रवाहित किया है । चीन मे लाओत्से और कन्फ्यूसियस जैसे विचारको ने अपने विचार दर्शन से जन-मानस को प्रभावित किया । ईरान मे जरथुस्त्र, यूनान मे सुकरात और प्लेटो जैसे दार्शनिका ने चिन्तन क्षितिज के नए स्तूप खड़े किए ।

जैन दर्शन को जन दर्शन बनाने की आकांक्षा रखने वाले आचार्य श्री तुलसी बीसवीं सदी के महामनीषी आचार्य थे । उनके जीवन का एक-एक क्षण आत्मजागृति और जनजागृति के पुण्य अभिक्रम से संयुक्त था । वे जो कुछ कहते शास्त्र बन जाता, जो कुछ करते आदर्श बन जाता और जिधर उनके चरण बढ़ते वह राजमार्ग बन जाता ।

जगत के मूलभूत ६ घटक तत्त्वों को जब हम इस संदर्भ में देखते हैं—पुनर्वीक्षण करते है तब ऐसा प्रतीत होता है कि आचार्य श्री तुलसी ने इस संघ को धर्मास्तिकाय के रूप में हर पल, हर क्षण गतिशील बनाया । अधमास्तिकाय की तरह साधना की दृष्टि से सबको स्थितात्मा बनने की प्रेरणाएँ दी और उसमे सहयोगी बने । जैसे आकाशास्तिकाय सबको आश्रय देता है वैसे ही चरण-शरण में आने वाले हर मानव को पनाह दी ।

काल के रूप में अध्यात्म से परिपूर्ण नई-नई प्रणालियो को संचालित किया । पुद्गल के रूप में मूल मर्यादाओं को सुरक्षित रखकर परिवर्तन किए । चैतन्य के रूप में सबको प्राणवान बनाया । ऐसे महान् गुरु जिन्होने हजारों-हजारों बुझते दीपों को जलाया । संघवेदी पर प्राणार्पण करने वाले अनगिन फूलों को सौरभ प्रदान की इसलिए, वे प्रणम्यों के भी प्रणम्य बन गए ।

जैन परम्परा में अनेक प्रभावक आचार्य हुए है- आचार्य कुन्दकुंद, भद्रबाहु, उमास्वाति, आदि ने युग प्रधान व्यक्तित्व से और जैन परम्परा को अपने अप्रतिम प्रतिभा कौशल से नई ऊँचाइयाँ दी है । इसी शृंखला मे ज्योतिपुंज गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी भी युगप्रधान व्यक्तित्व से विशिष्ट ऊँचाइयो तक पहुँचे । वे स्वयं ही, श्री, धी, धृति, शांति, शक्ति, नन्दी, तेज, शुक्ल से संपन्न थे । वे अमित, आत्मबली व कुशल थे, वे अनुशासक थे अनुशासन करते थे, तलवार से नही किन्तु प्यार से । वे वैज्ञानिक थे, आविष्कार करते थे, हिंसक अस्त्रो से नही, शांति के शस्त्रों से । वे क्रांतिकारी थे। बगावत करते थे पापियो के विरुद्ध नही, पाप के विरुद्ध । उनके अंतरंग मे अखण्ड रसधारा अनवरत प्रवहमान थी । जिसे पाकर मानव ही नहीं, अणु रेणु भी सजीव हो जाते थे ।

आचार्य श्री तुलसी मानवता के महामंगल थे । लेकिन लाखो-लाखो लोगो के तीर्थधाम

थे । उनका मन मंगल था, वाणी मंगल थी और कर्म मंगल थे । इसलिए वे महामंगल थे । उन्हें देखकर अत्यन्त पतित व्यक्ति के हृदय में भी पावनता के भाव पैदा हुए बिना नहीं रहते थे । उनके आभामंडल से अविरल स्वच्छ, क्रांति प्रवाहित होती रहती थी । जिन्हें देखकर ऐसा लगता था मानों तीर्थंकरों के अतिशयों से आबद्ध हो, शुक्ल लेश्या में निमग्न हो या क्षमा मुक्ति आदि दस गुणों से समावृत हो ।

बृहत्कल्प भाष्य में कहा है—

गुण सुट्ठियस्स वयणं घय परिसितुव्व पावओ भवई ।
गुणहीणस्य न सोहइ नेहविहूजो जइपईवो ।।

गुणवान का वचन घृत सिंचित अग्नि की तरह तेजस्वी होता है तथा गुणहीन का कथन तैल शून्य दीपक की भाँति निस्तेज होता है और वह सर्वग्राहीं नहीं बनता । आचार्य श्री तुलसी के विराट व्यक्तित्व में हिमगिरि-सी ऊँचाई और सागर-सी गहराई थीं- अपने सर्वातिशायी व्यक्तित्व के कारण ही वे लोकप्रिय बन गए थे । उनके पास तीन दुर्लभ चीजें थी । सत्य, पवित्रता, और निःस्वार्थता । इसलिए ही उनका नाम स्मरण और दर्शन प्रियंकर है शुभंकर है ।

योग विशिष्ट में ठीक कहा है—

यस्मिन् क्षुति पथा याते, दृष्टे स्मृति भूणगते ।
आनन्द यानि भूतानि, जीवितं तस्य शोभितं ।।

जिनके दर्शन, श्रवण एवं स्मरण मात्र से प्राणियों को आनन्दानुभूति होती है उसी का जीवन सुशोभित है । आचार्य श्री तुलसी का नाम अधरों पर आते ही प्राणियों को अपार आनन्द की अनुभूति होती है क्योंकि वे रोशनी की मीनार थे । उनमें अल्लाह का नूर था । गुरु का गौरव था और मानवता का मान था । यही कारण है कि अध्यात्म के आकाश में उज्ज्वल नक्षत्र की भाँति सदैव देदीप्यमान रहेंगे । सारा जहाँ उनके पावन चरणों में अपनी श्रद्धासिक्त भावांजलियाँ अर्पित करता रहेगा और वे सदा जीवन्त बने रहेंगे ।

वसुधा के वैभव आचार्य श्री तुलसी अपनी परोपकारी वृत्तियों के कारण जगत में वंदनीय और पूजनीय बन गए । क्योंकि उनका ध्येय मानव मात्र को सद्गुणों की पराग बाँटना था । उनका चिन्तन उन्नत था । कर्म निःसंग था । यह सत्य है कि उदार चिन्तन वाले मानव ही सबके आदर्श बनते हैं । जो व्यक्ति केवल अपना हित चाहते हैं वे मिट्टी के समान होते हैं । जो मात्र कुटुम्ब का पोषण चाहते हैं वे वृक्ष की तरह और राष्ट्र को सर्वोपरि महत्त्व देते हैं वे मानव होते हैं तथा जो समूचे संसार का मंगल चाहते हैं वे इंसान के वेश में भगवान होते हैं, आचार्य श्री तुलसी इस जगती तल के महामानव थे । उनकी यशोगाथा एवं कीर्ति के आलेख जब तक नभ में नीलिमा और भू पर हरीतिमा रहेगी, तब तक लिखे जाते रहेंगे ।

सन्निधि के आईने में

❒ साध्वी शारदा श्री ❒

वह पल जीवन की अमोल थाती बन जाता है, जो अपने आराध्य की सन्निधि में बीतता है । फिर उस पल को तो कोई शब्द ही नहीं दिया जा सकता, जो विशिष्ट प्रेरणा दे जाता है या अविस्मरणीय धरोहर छोड़ जाता है ।

वह प्रसंग जीवंत है, जो सीधा दिल के तहखाने में उतरकर वक्त-बेवक्त अंतर आह्लाद की गुदगुदी पैदा करता रहता है । वह सान्निध्य प्राणवान होता है, जिसमें मन की धरती पर सद्‌गुणों का अंकुरण होता है । वे श्रोता भाग्यशाली है, जो अपने गुरु की सुधावाणी का रसपान करते हैं । वे आँखें सार्थक हैं, जो अपने प्रभु के आभामण्डल की रश्मियों का स्पर्श करती हैं । ऐसे ही दुर्लभ क्षण दिव्य रत्नाकार पूज्य गुरुदेव श्री तुलसी की सन्निधि के हैं । आज वे सारी स्मृतियाँ हाथी के पैर जैसी मन की आर्द्र भूमि पर गहरे पदचिह्न छोड़े हुए हैं । उन चिह्नों की संचित रेखाएँ यहाँ प्रस्तुत कर रही हूँ—

कमनीय कलापुरुष

पूज्य गुरुदेव कमनीय पुरुष थे । कलापुरुष थे । चुम्बकीय पुरुष थे । उनका संपूर्ण जीवन कलामय था । जीवनपर्यन्त कला की प्रेरणा देते रहे । जीवन एक कला है कोई जीना जाने,



यह उनका महत्त्वपूर्ण सूत्र था ।

कलात्मक पुरुष पूज्य गुरुदेव की सन्निधि मे एक बार हम पन्द्रह-बीस साध्वियाँ व समणियॉ संस्कृत-व्याकरण का अध्ययन कर रही थी । पूज्य गुरुदेव की दृष्टि एक साध्वी पर पडी, जिसकी मुखवस्त्रिका का धागा नीचे लटक रहा था । पूज्य गुरुदेव ने प्रेरणा देते हुए कहा– "देखो, तुम्हारी मुखवस्त्रिका का धागा किधर जा रहा है । व्यक्ति को सुव्यवस्थित रहना चाहिए, क्योकि हमारा रहन-सहन भी व्यक्तित्व को निखारता है ।

यह अध्ययन के साथ कला का प्रशिक्षण था । कैसे बैठना ? कैसे बोलना ? कैसे रहन-सहन होना ? कैसे सलीके से वस्त्र पहनना आदि जीवन की हर प्रकृति मे उन्हें कलात्मकता पसंद थी । इसका साक्ष्य है समय-समय पर इस दिशा मे दिया जाने वाला साधु-साध्वियों का प्रशिक्षण ।

अक्षय वात्सल्य पुरुष

पूज्य गुरुदेव करुणा के अक्षय स्रोत थे । उस स्रोत की धारा मे अभिष्णात होने के महनीय अवसर प्राप्त हुए । जिस प्रकार सुमनो का स्पर्श पाकर बहने वाली बयार पूरे वातावरण को सुवासित कर देती है वैसे ही पूज्य गुरुदेव की निकटता के क्षण, कुसुमों से आने वाली वत्सलता की हवा हर मानस को अपनत्व की सुवास से सुवासित कर देती है । प्रस्तुत है एक प्रसंग–

एक बार हम लोग पूज्य गुरुदेव के साथ नीमली गाँव पहुँचे । पूज्य गुरुदेव का विराजना गाँव के बाहर स्कूल में हुआ । महाश्रमणी साध्वी प्रमुखा श्री जी का आवास स्थल गाँव मे था । भयंकर गर्मी का मौसम, मध्याह्न का समय, हम साध्वियाँ गुरुदेव की सन्निधि मे पहुँची । उस समय पूज्यवर हमें दसवैकालिक सूत्र की सार्थ वाचना देते थे । हमें जैसे ही उस चिलचिलाती धूप में आते देखा, तत्काल फरमाया– "इतनी कड़ी धूप मे क्यों आई हो ? पैर नही जले ?" हम सब सहम गए । 'तहत्' कहकर मौन हो गए । चेहरे पर थोड़ी उदासी के भाव उभर आए–इतनी गर्मी में इतनी दूर से तो आए और उस पर भी उपालम्भ के स्वर ही सुनने को मिले । इन विचारों की तरंगें पूज्य गुरुदेव ने पढ़ ली । तत्काल वात्सल्य की वृष्टि करते हुए फरमाया– "ठीक है आई हो तो अब बैठ जाओ, पर आगे से ध्यान रखना । ऐसी गर्मी हो तो नही आना चाहिए । हम सब व्यवस्थित व पंक्तिबद्ध बैठ गए । अध्यापन कार्य प्रारंभ हुआ । अध्याय के साथ संस्मरणो व अनुभवों का ऐसा सिलसिला चला कि कब समय बीत गया पता ही नही चला । जब हम अपने आवास-स्थल पर जाने लगे तो पूज्य गुरुदेव ने कारुण्य रस बरसाते हुए कहा– "तुम लोग इतनी कड़ी धूप में आई हो, इसलिए तुम्हें ५-५ कल्याणक बख्शीस है ।

वात्सल्यमय पुरस्कार पाकर हम सभी साध्वियों का सिर श्रद्धा से नत हो गया । लम्बे समय तक गुरु सन्निधि का आनन्द, उसमें भी संस्मरणों की मधुर सुवास व बख्शीस का शीतल झरना । ऐसे अपनत्व और वत्सलता से आप्लावित आत्मीयता और आनन्द के माहौल में गर्मी व थकान तो न जाने कब और कहाँ काफूर हो गई । अंतस्तल में प्रसन्नता की लहरें हिलोरें लेने लगीं । वत्सलता की बारिश से रोम-रोम भीग उठा ।

अद्वितीय संगायक

पूज्य गुरुदेव दिव्य संगायक थे । उनका संगान संपूर्ण सभा को संगीतमय बना देता था । जब वे गाते तो जनता के सिर डोल उठते थे । अंगुलियों के पोर थिरकने लगते । न गाने वालों के कण्ठों से भी स्वर फूट पड़ते थे । जब वे गाते तो ऐसा लगता उनका रोम-रोम गा रहा है । उनके अलौकिक गायन व स्वर संधान को सुनकर प्रशिक्षित संगीतज्ञ भी आश्चर्य चकित हो उठते थे ।

जय शताब्दी का ऐतिहासिक चातुर्मास दिल्ली में था । पूज्य गुरुदेव के गीत रिकॉर्ड करने के लिए आकाशवाणी से एक टीम आई । गुरुदेव ने अनुगायन में कुछ संतों व साध्वियों को भी साथ में लिया । 'जय ज्योतिर्मय चिन्मय' आदि कई गीत रिकॉर्ड किए । दूसरे दिन टीम निदेशक गुरुदेव के पास आए और बोले— 'आचार्य जी ! आपका एकल स्वर जहाँ गूँजता है, उस स्वर की बराबरी ये अनेक स्वर मिलकर भी नहीं कर पा रहे हैं । बिना साजबाज के लय, ताल, तान व पंचम, सप्तम स्वर में सन्धान कर लेना, यह कोई आपको दैविक वरदान ही है ।

पूज्य गुरुदेव के कण्ठों में हजारों राग-रागिनियाँ विराजमान थीं । उन रागों के लिए उन्हें कभी रियाज नहीं करना पड़ा । श्रीमज्जयाचार्य की भाँति एक बार सुनते ही वह राग कण्ठ में रम जाती । एक बार गुरुदेव हम साधु-साध्वियों को जैन रामायण की रागें सीखा रहे थे । हम साध्वियों की ओर दृष्टिपात करते हुए पूज्य गुरुदेव ने पूछा—

'रीस रढ़ राण' आदि कड़ी रागों को गा सकती हो ?

साध्वियों ने कहा—हमने तो इस तरह की कड़ी रागें पहली बार ही सुनी है । गुरुदेव ने हम साध्वियों को सम्प्रेरित करते हुए कहा—एक समय था जब पूज्य कालूगणी कोई भी कठिन राग आती तो साध्वियों से पूछते, पर आजकल न तो वे रागें हैं और न ही वैसा गायन । आजकल आधुनिक धुनों का प्रवाह बह रहा है, जिसमें न तो शाश्वत स्वर है और न ही वह आलाप है । संगीत के लिए मूल रागों को सीखना बहुत जरूरी है ।

इस प्रकार पूज्य गुरुदेव के जीवन का हर क्षण हर पल संस्मरण था । प्रेरणामय था । उस पावन सन्निधि को पाने वाला ही उसमें सराबोर हो सकता था ।

मेरी बलवती इच्छा है कि हमारा धर्मसंघ एक तेजस्वी और प्राणवान् धर्मसंघ हो। इसके लिए हमें जितना भी बलिदान करना पड़े करना चाहिए।

-आचार्य श्री तुलसी

खामोश हो गया जहां

□ साध्वी श्री मंजुरेखा □

श्रद्धा हृदय की वह मौलिक मनोभावना है जो हर किसी को समर्पित नहीं की जा सकती। श्रद्धा प्रेरणा व उपदेश से भी जगाई नहीं जा सकती है जो महान् आत्माएं अलौकिक गुण-सम्पन्न होती है उनके प्रथम दर्शन में ही हृदय-प्रणत हो जाता है, श्रद्धा समर्पित हो जाती है किन्तु ऐसी महान् आत्माओं से साक्षात्कार यत्र-तत्र सुलभ कहाँ? मैंने देखा, अनुभव किया गणाधिपति पूज्य गुरुदेव श्री तुलसी एक ऐसी महान् आत्मा थी, जिन्हें जन भाषा में ईश्वरीय अवतार कहा जाता है। उनके चरणों में जो भी आया। श्रद्धा से नत हो ही गया। फिर चाहे वह अशिक्षित हो या राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न उपाधियों से विभूषित हो । सचमुच, पूज्य गुरुदेव तपोधन थे, ज्योतिपुंज थे। ऋजुता, मृदुता, करुणा, समता व मैत्री के मूर्तरूप थे। ब्रह्मचर्य का तेजस रूप आपके नयनों से टपकता था। मानव मात्र के प्रति अगाध वात्सल्य का समन्दर आपके हृदय में लहराता था। फिर चाहे वह अनुसूचित हो या सूचित हो। शास्त्रों का पारगामी पंडित हो या अनपढ़ हो, अधिनेता हो या अभिनेता हो, भक्त हो था अभक्त हो, आस्तिक हो या नास्तिक हो। जो भी आपके चरणों में आया। वह आपका हो गया, श्रद्धा से झुक गया। ऐसा चुम्बकीय आकर्षण अन्यत्र दुर्लभ नहीं पर सुदुर्लभ है।

ऐसे ऊर्जस्वल व्यक्तित्व से लाखों-लाखों व्यक्ति मार्ग दर्शन प्राप्त कर रहे थे, सहस्त्रों-सहस्त्रों छोटे-मोटे दीप प्रज्वलित हो रहे थे। कई अप्राप्त स्नेह के कारण बुझ जाने के बावजूद भी आपकी थोड़ी-सी महर नजर प्राप्त कर फिर टिमटिमाने लग गए थे। सारांश यह कि आप जन-जन के आधार थे, त्राण थे, शरण थे। उन सभी ने जब यह संवाद सुना कि गणाधिपति पूज्य गुरुदेव महा प्रयाण कर गए हैं तब कई मिनटों तक कानों को विश्वास नहीं हुआ। अन्तर्मन ने कहा ऐसा तो हो नहीं सकता। यह कोई अफवाहों का दौर है। किसी ने असद् भावना के कारण गलत अफवाह प्रसारित की है। पर अफवाह असत्य कहां होनी थी।? चारों ओर से समाचार पर समाचार आते ही गए। आखिर सचाई को न नकारा जा सकता था और न स्वीकार किया जा सकता था।

पूज्य गुरुदेव हमारे जीवन सर्वस्व थे आराध्य थे, मार्गदर्शक थे, वात्सल्य प्रदाता थे। श्वास के सिवाय हमारा सब कुछ श्री चरणों में न्यौछावर था। इस दुःखद समाचार से हमारे मन विचलित हों, वाणी अवरुद्ध हो, पैर निस्तब्ध हों इसमें क्या अतिरेकता? यथार्थता तो यह थी हर श्रद्धालु का मन व्यथित था, आंखें अश्रुपूरित थीं, एक ऐसी गहरी टीस उत्पन्न हो गई कि कोई अपने आपको सम्भाल नहीं पा रहा था। आखिर शनैः-शनैः सम्भालना ही पड़ा। न चाहते हुए भी इस बज्राघात को सहना ही पड़ा।

आचार्य श्री तुलसी का विलक्षण व्यक्तित्व हर मानवीय संवेदना का समाधान था, हर पीड़ा का हरण करने वाला था। हजारों दिलों को थामने वाला एक अजीब करुणाधाम था। हर व्यक्ति के मूल्यांकन का दरबार था। अनेकों व्यक्तियों की क्षमता ने आपके श्री चरणों में आकार प्राप्त किया था तो हर निर्बल सबल ने इसी वट वृक्ष की गहरी छांव में शीतलता का भी अनुभव किया था। जो व्यक्ति आचार्यश्री तुलसी के चरणों

में सदा समर्पित रहा उसने जीवन में नई ऊर्जा और नई दिशा प्राप्त की। अनगिन ऐसे व्यक्ति भी थे जिनको हर पल इन्तजार था कि आपके मुखारविन्द से क्या बोल निकल रहा है क्योंकि वे उसे अपनी श्रद्धा की चादर में समेट कर अपने जीवन को आवाद करते चले आ रहे थे। आपके चुम्बकीय अभामण्डल के परिपार्श्व में अनेकों साधक समर्पित रहकर आत्म आराधना के नए आयाम उद्घाटित कर रहे थे। लेकिन क्या किया जा सकता था नियति का यह भी एक अकाट्य नियम था।

आचार्य श्री तुलसी अपने उदात्त विचारों से जन प्रिय बन गए। उनकी अपनी सहज भाषा में अपना परिचय असंकीर्ण भावनाओं का परिचायक था। जो कोई नवागन्तुक उनसे आपका परिचय पूछता तो आप फरमाते- मैं सबसे पहले मानव हूँ, फिर धार्मिक हूँ, फिर जैन हूँ तत्पश्चात् तेरापंथ का आचार्य हूँ। इस प्रकार वे हर वर्ग व जाति के इन्सान के लिए आराध्य बन गए। उनकी प्रवचन सभा में हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई, पादरी, बौद्ध, हरिजन सभी का समादर था। आपने इन्सान का सम्मान किया। तथाकथित धार्मिकों की जगह नेतिक, प्रामाणिक व्यक्ति का मूल्यांकन किया, फिर चाहे वह अपने आपको नास्तिक ही क्यों न कहता हो। आपने सत्य, अहिंसा, मैत्री समन्वय एवं सह-अस्तित्वमूलक धर्म की व्याख्या की जिससे प्रबुद्ध नास्तिक भी आपके सामने प्रणत हो गए।

आपने अपने आचार्य शासन काल में कच्छ से कलकत्ता एवं पंजाब से कन्याकुमारी तक लगभग 1 लाख किलोमीटर की पदयात्राएं कीं। इन यात्राओं में अणुव्रत आन्दोलन का कार्यक्रम जन-जन तक पहुँचा है। हजारों व्यक्तियों ने मांसाहार का परित्याग कर शुद्ध सात्विक जीवन जीने का संकल्प किया। उसी प्रकार अनगिनित व्यक्तियों ने सभी प्रकार के नशीले पदार्थों का परित्याग कर सुखी पारिवारिक जीवन जीने की राह अपनाई। आपके प्रवचनों में जादुई प्रेरणा थी। आप फरमाते कि मुझे नोट नहीं चाहिए, वोट नहीं चाहिए आपके जीवन की खोट चाहिए। तत्काल जन मानस परिवर्तित हो जाता। आप मानवता के मसीहा थे।

आपके कुशल नेतृत्व में आपके शिष्य-शिष्याओं ने बहुमुखी गति-प्रगति की है साधु-साध्वियों के सैकड़ों ग्रुप न केवल भारत के विभिन्न प्रान्तों में बल्कि नेपाल एवं भूटान में भी आपके संदेशों को जनमानस तक पहुंचाने में अथक परिश्रम कर रहे हैं। आपने समण दीक्षा नाम से एक नई श्रेणी की स्थापना कर विदेशों में भगवान महावीर के संदेशों की प्रभावना की है।

आचार्य श्री तुलसी क्रांतिकारी महापुरुष थे। राजस्थानी समाज की महिलाएं, जो रूढ़िग्रस्त थीं, अशिक्षित थीं, उनको अपनी अस्मिता का बोध कराया। जो रूढ़ परम्पराएं सामाजिक परिवेश को जीर्णशीर्ण कर रही थीं उन पर आपने खुला प्रहार किया। यद्यपि प्रारम्भ कटु था। क्योंकि समाज ने उसे सहजता से स्वीकार नहीं किया, विरोधों के स्फुलिंग उछले पर आखिर सबने स्वीकार कर धन्यता का अनुभव किया। आज राजस्थानी महिलाएं हर क्षेत्र में गति कर रही हैं, स्वस्थ व सुखी जीवन जी रही हैं उसका महत्व पूर्ण श्रेय पूज्य गुरुदेव श्री तुलसी को है।

आपकी जीवन डायरी में विश्राम नाम का कोई शब्द नहीं था। कार्य परिवर्तन को ही आप विश्राम मानते थे। वे अनवरत पुरुषार्थ की अमिट प्रज्वलित मशाल थे जो अंतिम श्वास तक प्रकाशमान रहे। आपका मौन साक्षात भी दर्शनार्थी को प्रेरणा देने वाला था तो प्रवचन छटा का तो वर्णन ही क्या किया जाए। परन्तु आज वे सभी क्षण अतीत हो गए हैं। अन्तर्मन वेदना से भरा है, किसको कहें, क्या कहें? न चाहते हुए भी अघटित घटित हो गया। नहीं सुनने वाली बात भी सुनने के लिए मजबूर हो गए, नहीं सहने वाले पलों को भी खामोश निगाहों, से अवरुद्ध कण्ठ से सह रहे हैं।



मैं सोचता हूँ, थोड़े से अंधेरे को देखकर ढेर सारे प्रकाश से आँख नहीं मूँद लेनी चाहिए। आज समाज में उल्लुओं की नहीं, हंसों की आवश्यकता है, जो क्षीर और नीर में भेद कर सकें।

—आचार्य श्री तुलसी



मैं सारे संसार को सुखी बनाने की अति कल्पना नहीं करता तो कुछ नहीं कर सकने की हीनता भी मेरे मन में नहीं है । मैं हीनता और गर्व के बीच मध्यस्थता में रहना चाहता हूँ ।

—आचार्य श्री तुलसी

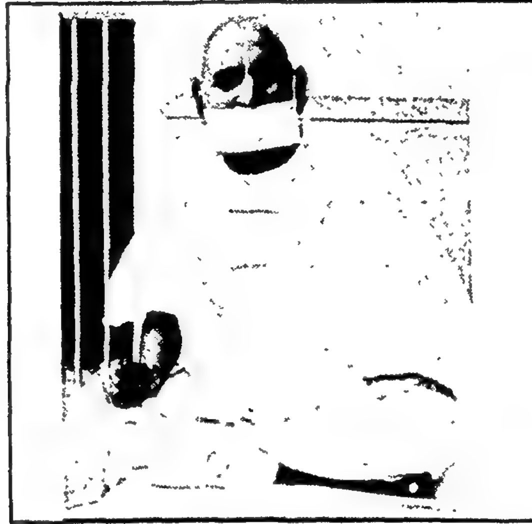


सजग-नयन, सुकर्ण, मृदु-मुस्कान, गुरु-गम्भीर-वाणी ।
गौर-वर्ण, विशाल-भव्य-ललाट, सात्विक-सरल-प्राणी ॥
राम-नाम-ललाम लेकर कर गये जो कार्य 'तुलसी' ।
कर रहे हैं अब वही अविराम श्री 'आचार्य-तुलसी' ॥

—निर्भय हाथरसी



आचार्य श्री तुलसी अणुव्रत आंदोलन के माध्यम से मानव कल्याण के लिए मानव समुदाय को जागृति का संदेश देते रहे। वह जागृति है नैतिकता की, मनुष्य के चरित्र-निर्माण की। देश के जन-जीवन के विकास के लिए सच्ची खुशी और स्थायी सुख के लिए मानव-चरित्र पर बहुत कुछ निर्भर करता है। —बी०डी० जत्ती

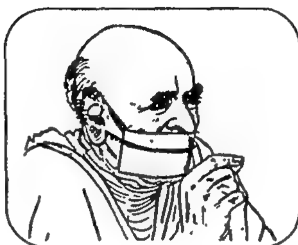


गणाधिपति आचार्य श्री तुलसी





मौत से डरता नहीं जो, मौत जिससे डर चुकी थी
मौत जिसको मार न सकी, अमर उसको कर चुकी थी।



गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी की
प्रथम पुण्यतिथि पर

श्रद्धानत



सभी सदस्यगण

तेरापंथ युवक परिषद

चेम्बूर (मुम्बई)

अणुव्रत एक महत्त्वपूर्ण आन्दोलन

समणी अक्षयप्रज्ञा

अणुव्रत अनुशास्ता श्री तुलसी नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों के पर्याय तथा स्वस्थ समाज-संरचना के प्रणेता थे। वे अंतर्दृष्टि सम्पन्न युगपुरुष तथा क्रान्ति की मशाल जलाने वाले महान राष्ट्रसन्त थे। सन्त श्री तुलसी देश और समाज में व्याप्त बुराइयों एवं अन्धविश्वास की विभीषिका को मिटाने के लिए अहर्निश प्रयत्नशील थे। वे समाज के दुःख-दर्द को अपना दुःख-दर्द मानने वाले मनस्वी मनीषी थे। वे व्यक्ति और समाज के प्रति बहुत संवेदनशील तथा सही अर्थ में कुशल समाज-सुधारक थे। उनके द्वारा प्रदत्त अणुव्रत सन्देश विश्वशान्ति के लिए अनूठा उपक्रम है। आज से पांच दशक पहले भारतवर्ष राजनैतिक दासता के घेरे में बन्दी था। देश के अधिसंख्य लोगों ने उस दासता को सहज भाव से अपने ऊपर ओढ़ लिया था। उनके मन में भारत को स्वतन्त्र देखने का न कोई स्वप्न था और न कोई संकल्प। कुछ चेतनाशील युवकों में अन्तर्द्वन्द्व जगा। उन्होंने देश को दासता की गिरफ्त से मुक्त करने का संकल्प किया और वे अहिंसक शक्ति का आलम्बन लेकर क्रान्ति के मैदान में कूद पड़े। वर्षों तक शारीरिक और मानसिक यातना भोगकर भी उन्होंने हिंसा का सहारा नहीं लिया। आखिर अहिंसा की जीत हुई, भारत स्वतंत्र हुआ और भारतीय जनता स्वतंत्रता की खुशियों में झूम उठी। अणुव्रत आन्दोलन का इतिहास काल भी उसी बिन्दु पर जाकर रुकता है।

अणुव्रत शब्द की शाब्दिक मीमांसा - अणु और व्रत - इन दो शब्दों के योग से अणुव्रत बना है। अणु का अर्थ सूक्ष्म और व्रत का अर्थ है संकल्प। संकल्प कितना ही सूक्ष्म और छोटा क्यों न हो, उसकी शक्ति असीम है। अणुबम के इस युग में अणुव्रत जैसे धर्म की ही अपेक्षा थी। आकार में सूक्ष्म होने पर भी अणुबम एक शक्ति सम्पन्न अस्त्र है। इसी प्रकार अणुव्रत में भी असीम शक्ति है। यह दूसरी बात है कि अणुबम की शक्ति विध्वंसात्मक है और अणुव्रत की शक्ति सृजनात्मक है। अणुबम मानव जाति का संहारक है - जब कि अणुव्रत मानव जीवन का निर्माता है। अणव्रत का लक्ष्य है - व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के जीवन में पनपने वाली बुराइयों को दूर कर एक नीतिमान और चरित्रनिष्ठ पीढ़ी का निर्माण। इसकी संरचना असाम्प्रदायिक और मानवीय दृष्टिकोण की पृष्ठभूमि पर की गयी है। सम्यक् दर्शन, सम्यक् संकल्प और सम्यक् आचरण - अणुव्रत का कार्यक्रम है। यह अपराध चेतना को रूपान्तरित करने का आन्दोलन है। अपराधी मनोवृत्ति का शोधन इसका लक्ष्य है। इसके लिए यह किसी दण्ड या कानून से भी अधिक महत्व हृदय परिवर्तन को देता है। इसमें देश, काल, परिस्थिति, जाति और मजहब आदि को गौण कर सर्व-धर्म सम्मत

तत्वों का समाकलन किया गया है। निःशस्त्रीकरण, मानवीय एकता, धार्मिक सहिष्णुता, सामाजिक कुरूढ़ियों का बहिष्कार, व्यसन मुक्ति और नैतिक मूल्यों की स्थापना इस युग की समस्याओं का सीधा समाधान है। अणुव्रत आन्दोलन का प्रवर्तन एक सुचिन्तित विचार यात्रा की निष्पत्ति है। उस यात्रा के कुछ विचार-बिन्दु ये हैं -

- ☐ अणुव्रत एक धर्म है, किन्तु इसके पीछे कोई सम्प्रदाय नहीं है। प्रत्येक सम्प्रदाय के लोग इसे अपना धर्म मानते हैं, किन्तु इस पर किसी सम्प्रदाय विशेष की मुद्रा नहीं है।
- ☐ *अणुव्रत में उपासना का तत्त्व गौण है और चरित्र की प्रधानता है। यह धर्म को रूढ़ियों और* आडम्बरों के घेरे से मुक्त कर प्रयोग का धरातल देता है।
- ☐ अणुव्रत वर्तमानजीवी है यह परलोक-सुधार का आश्वासन नहीं देता है पर इस जीवन को शान्त, स्वस्थ एवं सुखमय बनाने का दिशादर्शन देता है।
- ☐ अणुव्रत जाति, प्रान्त, भाषा आदि संकीर्णताओं से जकड़ा हुआ नहीं है, इसका द्वार मानव मात्र के लिए खुला है। कोई भी मनुष्य अणुव्रती बनकर सही अर्थ में मनुष्य बन सकता है अणुव्रत का धर्मस्थान है व्यक्ति का कार्यक्षेत्र। कोई व्यक्ति मन्दिर, मस्जिद आदि धर्म-स्थानों में जाए या नहीं? उपासना करे या नहीं, पर अपने कर्म के प्रति ईमानदार रहे, यही उसकी धार्मिकता है चरित्र को प्रतिष्ठित करने में अणुव्रत ने एक अहम् भूमिका निभाई है। मनुष्य की आन्तरिक चेतना को जगाने के लिए बौद्धिक विकास एवं मानसिक विकास के साथ-साथ चारित्रिक विकास की ओर ध्यान देना नितान्त आवश्यक है। चरित्र व्यक्ति का भी होता है, समाज का भी होता है और राष्ट्र का भी। वैयक्तिक चरित्र का प्रभाव राष्ट्र पर होता है, इसी प्रकार राष्ट्रीय चरित्र से व्यक्ति प्रभावित होता है। चरित्र को प्रतिष्ठित करने में अणुव्रत रामबाण औषधि के रूप में सिद्ध हुआ है।

अणुव्रत आन्दोलन पाशविक प्रवृत्तियों के लिए एक सुदृढ़ चुनौती है। अनैतिकता, अनाचार और भ्रष्टाचार के गहन अन्धकार को दूर करने वाला दिव्य प्रकाश है, और हिंसा, अधार्मिकता, दुराचार, अशान्ति, शोषण सबके लिए यह एक अमोघ मंत्र है। नैतिक विश्वास के सहारे जन-जन के उत्पीड़ित हृदय को झकझोर कर मानवता का संदेश पहुंचाना ही अणुव्रत आन्दोलन की प्रमुख पृष्ठभूमि है। *अणुव्रत आन्दोलन का मुख्य ध्येय मानव-मानव की बुराइयों को दूर करना है।* तभी मनुष्य अपनी प्रखर प्रतिभा, साधना और ज्ञान में वृद्धि कर सकेगा। यह क्रान्तिकारी दृष्टिकोण सर्वतोमुखी ज्ञान की प्रेरणा जागृत करता हुआ एक आत्मा, एक हृदय, एक भावना, एक आदर्श और एक संगठन के रूप में हमारे सामने है।

विश्व में शान्ति का साम्राज्य हो सके, परस्पर सौहार्द की सद्भावना को जगा पृथ्वी पर स्वर्ग लाया जा सके और ऐसे नवयुग का दर्शन हो सके, जहां न शोषण हो, न उत्पीड़न हो, नवंचना हो, इस दिशा में आचार्य श्री तुलसी की विश्व को अणुव्रत के रूप में यह एक अनुपम देन है।

अद्भुत गुरु : अद्भुत शिष्य

❑ विश्रुत विभा ❑

सम्राट श्रेणिक एक बार बिहार यात्रा के लिए उद्यान में आया। घूम-फिर कर उसने उद्यान की शोभा निहारी। देखते-देखते उसकी आंखे एक ध्यानस्थ तरुण मुनि पर जा टिकी। राजा पास में गया। मुनि के रूप-लावण्य की अद्भुतता को देख वह विस्मित हो गया। उसके कहा -

अहो! वण्णो अहो! रुवं अहो! अज्जस्स सोमया।
अहो! खंती अहो! मुत्ती अहो! भोगे असंगया।।

आर्य का अद्भुत है वर्ण और रूप। अद्भुत है सौम्यता। अद्भुत है क्षमा और निर्लोभता। अद्भुत है भोगों में अनासक्ति।

विलक्षणता को देखकर सहज ही अद्भुत का उच्चारण हो जाता है। स्तुति के रस में निमग्न आचार्य हेमचन्द्र ने महावीर को देखा और कहा-

शमोऽद्भुतोऽद्भुतं रूपं सर्वात्मसु कृपाद्भुता।
सर्वाद्भुतनिधीशाय, तुभ्यं भगवते नमः।।

प्रभो! अद्भुत है तुम्हारा शम। अद्भुत है तुम्हारा रूप! अद्भुत है तुम्हारी सव प्राणियों के



प्रति करुणा। सब आश्चर्यों की निधि के स्वामी हो इसलिए तुम्हें नमस्कार।

वर्ण और रूप की अद्भुतता, सौम्यता, क्षमा, निर्लोभता और भोगों के प्रति अनासक्ति की अद्भुतता केवल उस तरुण मुनि अनाथी में ही नहीं थी। उपशम भाव, आन्तरिक सौन्दर्य और सबके प्रति करुणा की अद्भुतता केवल महावीर में ही नहीं थी। इन सब गुणों एवं विशेयताओं का निदर्शन मिलता है तेरापंथ धर्मसंघ के प्राणवान् तेजस्वी नवमाचार्य गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी में तथा उसके यशस्वी शिष्य दशम अधिशास्ता आचार्य महाप्रज्ञ में।

तेरापंथ धर्मसंघ में आचार्य तुलसी के शासनकाल को स्वर्णिम काल कहें तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। वे समर्थ और शक्ति सम्पन्न आचार्य थे। व्यक्तित्व निर्माण के वे कुशल शिल्पी थे। अपने हाथ में छेनी लेकर न जाने कितने अनगढ़ पत्थरों को उन्होंने तराशा। मूर्ति का आकार



आचार्य श्री तुलसी का ज्ञान के प्रति अत्यधिक अनुराग था। वे स्वयं ज्ञान के अथाह समुद्र में अवगाहन करते। अपने पार्श्ववर्ती साधु-साध्वियों को भी ज्ञानाराधना के लिए प्रेरित करते। यही कारण था कि उन्होंने जैनागमों के संपादन का कार्य हाथ में लिया और उस कार्य की निरन्तरता का दायित्व अपने मेधावी शिष्य मुनि नथमल (वर्तमान में आचार्य महाप्रज्ञ) को सौंप दिया। आचार्य श्री तुलसी को यह आत्मविश्वास था कि मुनि नथमल इस गुरुतर कार्य का सम्यक् निर्वाह कर सकता है। मुनि नथमल ने गुरुदेव के इस स्वप्न को यथार्थ रूप से परिणत किया।

दिया। गण मन्दिर में प्रतिष्ठित है।

आचार्य श्री तुलसी आध्यात्मिक व्यक्तित्व के धनी थे। अद्भुत था उनका ज्ञान, अद्भुत था उनका दर्शन, अद्भुत था उनका चरित्र और अद्भुत था उनका वीर्य। इन सब अद्भुत विशेषताओं का संप्रेषण उन्होंने अपने अभिन्न शिष्य आचार्य महाप्रज्ञ में किया।

आचार्य श्री तुलसी का ज्ञान के प्रति अत्यधिक अनुराग था। वे स्वयं ज्ञान के अथाह समुद्र में अवगाहन करते। अपने पार्श्ववर्ती साधु-साध्वियों को भी ज्ञानाराधना के लिए प्रेरित करते। यही कारण था कि उन्होंने जैनागमों के संपादन का कार्य हाथ में लिया और उस कार्य की निरन्तरता का दायित्व अपने मेधावी शिष्य मुनि नथमल (वर्तमान में आचार्य महाप्रज्ञ) को सौंप

दिया। आचार्य श्री तुलसी को यह आत्मविश्वास था कि मुनि नथमल इस गुरुतर कार्य का सम्यक् निर्वाह कर सकता है। मुनि नथमल ने गुरुदेव के इस स्वप्न को यथार्थ रूप से परिणत किया। गुरुदेव ने दशवैकालिक सूत्र के संपादन कार्य पर आत्मसंतोष व्यक्त करते हुए लिखा है :-

"दशवैकालिक सूत्र के सर्वांगीण सम्पादन का बहुत कुछ श्रेय शिष्य मुनि नथमल को ही मिलना चाहिए, क्योंकि इस कार्य में अहर्निश वे जिस मनोयोग से लगे हैं, इसी से यह कार्य सम्पन्न हो सका है अन्यथा यह गुरुतर कार्य बड़ा दुरूह होता। इनकी वृत्ति मूलतः योगनिष्ठ होने से मन की एकाग्रता सहज बनी रहती है, साथ ही आगम का कार्य करते-करते अन्तर रहस्य पकड़ने में इनकी मेधा काफी पैनी हो गई है। विनयशीलता, श्रमपरायणता और गुरु के प्रति सम्पूर्ण समर्पण भाव ने इनकी प्रगति में बड़ा सहयोग दिया है। यह वृत्ति इनकी बचपन से ही है। जब से मेरे पास आए मैंने इनकी इस वृत्ति में क्रमशः वर्धमानता ही पाई है। इनकी कार्यक्षमता और कर्त्तपरायणता ने मुझे बहुत संतोष दिया है।"

विलक्षण व्यक्तित्व वाले गुरु ही अपने शिष्य की अर्हताओं का अनुमान लगा सकते हैं। विलक्षण शिष्य ही गुरु की कल्पना को मूर्त्त रूप दे सकता है।

गुरु और शिष्य के इस विरल युगल को हमने अपनी आंखों से देखा। गुरु शिष्य की प्रशंसा करते-करते नहीं थकते और शिष्य मूकभाव से अपने गुरु की प्रमोद भावना को पढ़ते रहते। एक बार लाडनूं में गुरुदेव कालू यशोविलास का वाचन कर रहे थे। अचानक गुरुदेव का ध्यान 'जैन भारती' पत्रिका की ओर चला गया। गुरुदेव ने उपस्थित साधु-साध्वियों को पूछा - महाप्रज्ञजी का लेख पढ़ा? सभी साधु-साध्वियां एक दूसरे को देखने लगे। इतने में ही आचार्य प्रवर का आगमन हो गया। गुरुदेव - हम तुम्हारी ही बात कर रहे हैं 'जैन जीवन शैली' पर अच्छा लेख लिखा है।

आचार्यप्रवर - मैंने क्या लिखा है। गुरुदेव विषय का मार्मिक प्रतिपादन करते हैं।

गुरुदेव - वह ठीक है किन्तु मेरा प्रथम शिष्य लिखता है उसे पढ़कर मुझे जिस प्रसन्नता की अनुभूति होती है वह स्वयं के लेख को पढ़कर नहीं।

साधना के क्षेत्र में वही व्यक्ति आगे बढ़ सकता है जो अपने गुरु के प्रति समर्पित होकर निश्चिन्तता का जीवन जीता है। समर्पण जितना हार्दिक होता है निश्चिन्तता उतनी ही गहरी होती है। मुनि नथमल जैसे विलक्षण व्यक्ति ही समर्पित होकर पूर्ण निश्चिन्तता का जीवन जी सकते हैं। स्वयं आचार्य श्री तुलसी लिखते हैं "मुनि नथमल ने अपने खाने-पीने, घूमने-फिरने, बैठने-सोने, पहनने-ओढ़ने आदि के संबंध में कभी सोचने-विचारने का प्रयत्न ही नहीं किया। मैं जो कुछ कहता, वे सहजभाव से कर लेते। भोजन कब करना है और क्या करना है? इस दैनंदिन कार्य में ये मेरे निर्देश की प्रतीक्षा करते रहते। वस्त्र कब सिलवाने हैं, कब पहनने हैं? यह

कार्य भी अपने आप नहीं करते।" भला जिस शिष्य की स्वयं गुरु इतनी चिन्ता करे इससे बढ़कर उसका भाग्य क्या हो सकता है। इस माने में मुनि नथमल जीवन के प्रारम्भकाल से बहुत अधिक सौभाग्यशाली रहे हैं। इस प्रकार की निश्चिन्तता विलक्षण आभावाले गुरु ही प्रदान कर सकते हैं।

गुरु शिष्य को चिन्तामुक्त बनाए, आश्चर्य नहीं है किन्तु शिष्य अपने गुरु के इंगित और आकार की आराधना कर गुरु को निश्चिन्त बनाए, यह आश्चर्य है। आचार्य तुलसी के शासनकाल में तेरापंथ धर्मसंघ में अनेक विरोधी तूफान आए। उन तूफानों को शांत करने में मुनि नथमल की सक्षम भूमिका रही। स्वयं गुरुदेव ने लिखा है "वि॰ स॰ २००० तक महाप्रज्ञ इस रूप में तैयार हो गए कि हर क्षेत्र में ये मेरे सहयोगी बन गए। एक ओर ये मेरे चिन्तन के सफल भाष्यकार थे तो दूसरी ओर ये मेरे हर स्वप्न को साकार करने के लिए कटिबद्ध हो गए। यद्यपि नए कार्य का प्रारंभ करने में ये हिचकिचाते थे किन्तु मेरे द्वारा प्रारब्ध कार्य को परिसम्पन्नता तक पहुंचाना इनकी सहज प्रवृत्ति हो गई थी।"

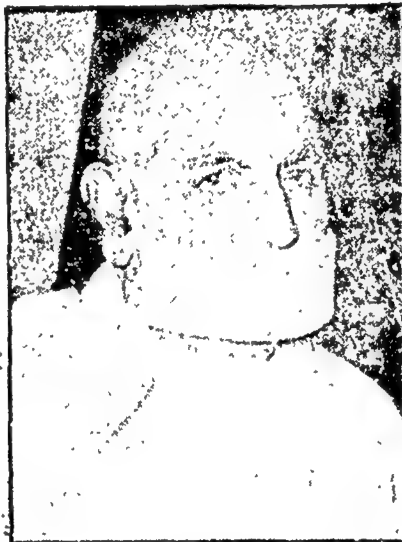
आचार्य श्री तुलसी का व्यक्तित्व गंभीर था। किसी भी कार्य को करने से पूर्व वे गहराई से चिन्तन करते थे। जैन आगमों के संपादन का कार्य शुरु करना था। गुरुदेव इस कार्य को उपधानपूर्वक शुरू करना था। गुरुदेव इस कार्य को उपधानपूर्वक शुरु करना चाहते थे। प्रारंभ में तीन दिन के उपवास के अनुष्ठान के साथ कार्य शुरू किया जाए। मुनि नथमलजी ने कहा - मैं अनुष्ठान करूं। गुरुदेव ने फरमाया - 'नहीं, तुम कमजोर हो, मैं स्वयं तेले का तप करूंगा। कार्य को संपादित करेंगे मुनि नथमल और अनुष्ठान करेंगे आचार्य श्री तुलसी। गुरु और शिष्य का यह विलक्षण तादात्म्यभाव हमने तेरापंथ धर्मसंघ में देखा। आचार्य श्री तुलसी ने आचार्य महाप्रज्ञ को शिक्षित और परीक्षित ही नहीं किया अपितु अपने गरिमामय पद का विसर्जन कर आचार्य पद पर अभिषिक्त किया। यह अद्भुत कार्य अध्यात्म के प्रकर्ष पर पहुंच कर ही किया जा सकता है। आचार्य तुलसी का यह विसर्जन उनकी विलक्षण अनासक्ति को अथवा पद के प्रति सर्वथा निस्पृह भाव को अभिव्यक्त कर रहा है। विशाल संघ का दायित्व आ जाने पर भी शिष्य किसी प्रकार की भारानुभूति नहीं कर रहा है। सब कुछ करते हुए भी अकर्तृत्व का अनुभव कर रहा है। विलक्षण गुरु अथवा विलक्षण शिष्य ही इस भूमिका तक पहुंच सकते हैं।

आचार्य तुलसी सौभाग्यशाली थे कि उन्हें मुनि नथमल जैसे समर्पित विनम्र, और अन्तर्दृष्टिसम्पन्न शिष्य मिले। मुनि नथमल (आचार्य महाप्रज्ञ) सौभाग्यशाली हैं जिन्हें आचार्य तुलसी जैसे पराक्रमी , धृतिसम्पन्न और शक्तिसम्पन्न गुरु का सुयोग उपलब्ध हुआ। आचार्य तुलसी और मुनि नथमल के बीच शिक्षक और विद्यार्थी का संबंध था। वह गुरु और शिष्य के रूप में बदल गया और फिर अद्वैत की अवस्था तक पहुंच गया। इसीलिए गुरुदेव ने कहा - महाप्रज्ञ में तुलसी देखो और तुलसी में महाप्रज्ञ।

मर्यादा पुरुष : गुरुदेव श्री तुलसी

श्रीमती नीलम बोरड़

अपने धर्मसंघ की मर्यादा-सीमा में रहकर जिसने सीमातीत कार्य किया, उस महान व्यक्तित्व का नाम है गणाधिपति श्री तुलसी, जिनकी पहचान के लिए किसी उपाधि, पद या विशेषण की जरूरत नहीं, बस नाम ही काफी है। वे भारतीय सन्त माला के अनूठे पुण्य हैं, जिसकी गुणवत्ता और सुगन्ध लुभावनी ही नहीं बल्कि संजीवनी है। ऐसी संजीवनी, जो पत्थर में भी स्फुरणा पैदा कर सकती है, मुर्दे में भी प्राणधारा प्रवाहित करने में सक्षम है। उन्होंने युग की नब्ज को गिनकर समय पर सही निदान और सही उपचार किया है जो आज समाज के आमूल-चूल परिवर्तित रूप में स्पष्ट परिलक्षित हो रहा है। आज से पचास वर्ष पूर्व जो समाज अनेक कुरूढ़ियों में जकड़ा दमघोटू वातावरण में जीता था वही अब स्वस्थ सामाजिक पर्यावरण में खुली सांस लेकर राहत महसूस कर रहा है।



न सिर्फ अपना जैन समाज बल्कि सम्पूर्ण मानव जाति में प्रसुप्त मानवता को जगाने के लिए उन्होंने अणुव्रत का शंखनाद किया। नैतिक उत्थान के लिए एक-एक कदम चल कर भारत के इस छोर से उस छोर तक पहुंचे। अपने सतत् यायावरी जीवन की पदयात्राओं में देश के कितने ऐसे ग्रामीण अंचलो में पहुंच कर जन-सम्पर्क साधा होगा, जहां राह किनारे किसी पेड़ की छाया तले सैकड़ों देहाती लोग अपनी असरकारी वाणी से प्रभावित होकर वर्षों से पाली हुई अपनी "खोटें" (धूम्रपान, मद्यपान आदि नशे की आदतें) संत - चरणों में भेंट कर निहाल हो उठे। क्या कोई वाहन पर सवार समय से भी तेज दौड़ने वाला जन-सुधारक इतनी नजदीकी से आम जनता के दुःख दर्द सुनकर उनका सही मार्ग-दर्शन कर सकता है?

"रूढ़ियों ने संत्रस्त महिला समाज के लिए तो आपका "नया मोड़" अभियान वरदान ही साबित हुआ। "हम भी मूल्यवान और सक्षम हैं-" इस अनुभूति से गौरव-मंडित आज का महिला समाज आपके उपकार का चिर ऋणी रहेगा।

आपकी पैनी नजर हर वर्ग तक पहुंची है। आपकी उदान्त विचारधारा के सामने जाति, सम्प्रदाय कभी अड़चन नहीं बन सके। क्या हरिजन क्या महाजन, क्या मजदूर क्या राजनेता जो

कोई भी आपके सम्मुख आया समाहित-संतुष्ट होकर गया। एक ओर जहां जन-जन के मानस तक आप पहुंचे, दूसरी ओर बड़े-बड़े उलझे हुए मसलों को भी आपने अपनी प्रखर मनीषा से सहज ही में सुलझा दिया। एक सरल निस्पृह संत आत्मा के सामने दुराग्रह टिके भी तो कैसे?

आज के इस समस्या संकुल परिवेश में ऐसे उदारचेता महापुरुषों की निहायत आवश्यकता है जो अपने आत्म-कल्याण के साथ विश्व-कल्याण की दिशा में भी सतत् जागरूक और सक्रिय हों। आपके सुयोग्य उत्तराधिकारी, तेरापंथ धर्मसंघ के दशम आचार्य श्री महाप्रज्ञ जी आपके स्वर्णिम स्वप्नों को साकार कर युग को सतत् नेतृत्व देंगे - ऐसी शुभाशंसा है।

पर्यावरण चेतना के जनक

□ पन्नलाल मूंधड़ा □

अणुव्रत अनुशास्ता आचार्य श्री तुलसी के महाप्रयाण से मानवता हित चिंतक, विचारक, प्रेरक, निष्ठावान एक महापुरुष को न सिर्फ जैन श्वेताम्बर तेरापंथ समाज ने बल्कि विश्व ने खो दिया। धर्मगरु प्रायः अपने पंथ के आदर्शों का व्याख्यान करते हैं और यही इनकी सीमाएं हैं पर आचार्य तुलसी ने 'मानवता हित कर्म ही धर्म है' की भावनाओं को सर्वदा प्राथमिकता दी, और उन्होंने पंजाब की अराजकतापूर्ण विकट समस्या के समाधान में, असुविधाओं को झेलते हुए उनका समाधान किया। यह उपलब्धि अपने आप में इस बात का प्रमाण है कि उनका जीवन त्याग, तपस्या, मानवोचित व्यवहार से पूर्णतः प्रभावित था या फिर उनका जीवन मानव-चेतनाहित समर्पित था। आचार्य तुलसी द्वारा आंदोलित 'अणुव्रत' के आदर्श सही व्याख्या में 'सर्वधर्म समभाव' का ही पर्याय हैं। यह एक ऐसा विचार या पद्धति या फिर मार्ग है जो इन्सान को इन्सानियत या मानव को मानवता के द्वार तक ले जाने में सक्षम है। अणुव्रत के आदर्श ऐसे यथोचित आदर्श हैं जिन्हें किसी भी धर्म में आस्थावान व्यक्ति अपनाकर लाभान्वित हो सकता है।

आज की इन अमानुषिक स्थितियों में जब नागरिकों के धन, माल, अस्मत, जीवन की रक्षा का दायित्व लेने वाले स्वयं अपने प्राणों के लिए शंकित हैं, दिन-रात हथियार-बंद अंगरक्षकों से घिरे रहते हैं, मारधाड़, खून-खराबा, बलात्कार, नारी शोषण दिनचर्या बनता जा रहा है, आज मानव तनाव की बीमारियाँ भुगत रहा है। तथा शांति के लिए तरस रहा है। जहां गंगाजल अपनी विशेषताओं के कारण जगप्रसिद्ध था, आज उसी पावन गंगा में पशु कंकाल व गंदगियाँ बह रही हैं। आज प्रदूषण और प्रदूषण की दौड़ में भारत के महानगर संसार के महानगरों में अग्रिम नहीं तो समकक्ष अवश्य बन गये हैं। आज पशुओं के अभाव में गरीब बेरोजगार किसान स्वयं हल खींच रहा है व उसका लाड़ला कल कारखानों में प्राणलेवा कार्य करने को विवश हैं। ऐसी ही विकट, जघन्य समस्याओं को पराभूत करने का मार्ग 'अणुव्रत' है। उन्होंने लोगों को अणुव्रती बनाकर विसंगतियों से लड़ने की प्रेरणा दी और ऐसा कोई युग पुरुष, कोई भविष्य द्रष्टा, कोई संत ही कर सकता है। और निःसंदेह वे युग पुरुष, भविष्य द्रष्टा, संत थे। ऐसे संत पुरुष को मैं नमन करता हूँ।

आचार्य श्री तुलसी

विशाल, तेजस्वी पुंज के धनी

भगतराम जैन

लगभग सन् १९५० में आचार्य श्री तुलसी जी का दिल्ली में चतुर्मास हुआ, उस समय नया बाजार रेलवे कालोनी में विशाल पाण्डाल में कार्यक्रम आयोजित होते रहे। मेरा बड़ा सौभाग्य था कि जब से मैं अणुव्रत आन्दोलन की गतिविधियों में सक्रिय होकर जुड़ गया तब से आचार्य श्री का मुझे बराबर आशीर्वाद प्राप्त होता रहा।

भारत जैन महामण्डल दिल्ली प्रदेश के तत्वावधान में 'विश्व मैत्री दिवस' को समस्त जैन समाज गठित होकर विशालरूप से मनाने का भी कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। जिसे सफल बनाने में आचार्य श्री तुलसी का पूरा सहयोग प्राप्त होता रहा।

जैन समाज के सभी सम्प्रदायों के आचार्य, मुनिगण, साधु-साध्वी एक मंच पर विराजे, इसके लिए प्रयास प्रारम्भ हुए। उसके लिए इस महत्वपूर्ण कार्य में भी आचार्य श्री ने अपना सहयोग प्रदान किया।

हमें सौभाग्य प्राप्त हुआ कि हमने कई महत्वपूर्ण आयोजनों में सभी जैन सम्प्रदायों के



आचार्यों, मुनिराजों को एक मंच पर लाकर उनके विचार सुनने का अवसर प्राप्त हुआ। यह समाज के लिए अत्यन्त गौरव का कार्य था, इससे सामाजिक संगठन को बड़ी शक्ति प्राप्त हुई।

भारत जैन महामण्डल दिल्ली प्रदेश ने दिल्ली में जैन एकता विचार परिषद का विशाल आयोजन किया। जिसमें दिल्ली के अतिरिक्त मुम्बई, कलकत्ता, राजस्थान, हरियाणा, उत्तरप्रदेश आदि के प्रमुख अग्रणीय महानुभावों ने भी भाग लिया, इस शुभ अवसर पर आचार्य श्री तुलसी जी, आचार्य श्री देशभूषण जी, आचार्य श्री आनन्दऋषि जी आदि तो पधारे ही, इसके अतिरिक्त समाज भी बड़ी सख्या में सम्मिलित हुआ। इस अवसर पर आचार्य श्री तुलसी जी ने समाज को सुझाव दिया कि पर्यूषणों के अवसर पर भादों सुदी पंचमी के दिन को समस्त समाज संगठित होकर विशाल रूप से मनाये।

भगवान महावीर के २५००वें निर्वाण महोत्सव के बारे में बहुत कुछ लिखा जा सकता है, यहां केवल ये ही निवेदन कर रहा हूं कि देश-विदेशों में इस महापर्व को विशालरूप से मनाने के कार्यों में आचार्य श्री तुलसी जी के महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

आचार्य श्री तुलसीजी कट्टरवादिता के विरुद्ध थे, उन्होंनें देश में लगभग एक लाख किलोमीटर पैदल घूमकर अणुव्रत जैसे सशक्त आन्दोलन के माध्यम से नैतिकता का शंखघोष किया। धर्म को रूढ़ियों और कुरीतियों की जकड़ से मुक्त कर उसे मनुष्य मात्र के लिए सुलभ कराने की प्रेरण दी व कहा कि दुःख की बात तो यह है कि मंदिरों, धर्मस्थानों, तीर्थों को लेकर झगड़े चल रहे हैं, पुलिस कचहरी चल रही है। मैं मानता हूं कि यदि जैन अनेकान्तवादी/स्याद्वादी हैं तो उन्हें सारे झगड़े समाप्त कर देने चाहिए और परस्पर प्रीतिपूर्वक रहना चाहिए।

जैनेतर समाज के विशाल आयोजनों में हिन्दू समाज के प्रमुख छत्रधारी आचार्यों के समक्ष जिस विशाल दृष्टि से जैन धर्म की विशेषतायें उन्होंने प्रस्तुत की उसकी छाप सभी के हृदयों में पहुंची व जो आपसी भ्रम थे वे दूर हुए।

उनके विषय में केवल एक शब्द लिख रहा हूं कि प्रत्येक पहलुओं पर उन्होंने गहराई से चिन्तन कर देश व समाज को अपने विचारों से प्रेरणा दी है।

अभी दो वर्ष पूर्व दिल्ली में छत्तरपुर के चातुर्मास से विहार करने के समय उन्होंने मुझे आशीर्वाद दिया : कहा कि भगतराम आपने अपना समस्त जीवन समाज संगठन के लिए समर्पित किया है समाज उसे कैसे भूल सकता है।

मैं उनके चरणों में श्रद्धा के सुमन अर्पित करता हूं।

- *बोलना या नहीं बोलना - ऐसा द्वन्द उत्पन्न होने पर मौन रहना उत्तम है।*
- *क्रोध को असफल करने का उपाय है - मौन।*

-आचार्य श्री तुलसी

जीवन के सच्चे कलाकार आचार्य श्री तुलसी

☐ भूपेन्द्र कुमार मुथा ☐

पतझड़ का आना ही बसन्त के आगमन का सूचक है, रात्रि की कालिमा में ही सुनहरा प्रातः छिपा रहता है और नन्हें अंकुरों में ही वट-वृक्ष का अस्तित्व होता है। विरोधों और संघर्षों के झरोखों से ही जीवन का जाज्वल्यमान इतिहास बनता है।

हर युग कुछ विशिष्ट व्यक्तियों से गौरवान्वित होता है। आज भी विश्व के चित्रपट पर ऐसे महान पुरुष हुए हैं जो फूल बन महके हैं और सिंह बन गरजे हैं। आचार्य श्री तुलसी भी विश्व की महान विभूतियों में से एक है जो सावन बन बरसते हैं और सूर्य बन चमकते हैं।

आचार्य प्रवर का विराट व्यक्तित्व भाषा के परिधान से, उपमाओं के बन्धन से दूर, बहुत दूर, अपरिमेय और अनन्त है। सूर्य-सा तेजस्वी, चन्द्र सा शीतल, नवनीत सा कोमल, सागर की गहराई और पर्वत की ऊंचाई से ऊपर है। उसे व्यक्त करने में शब्द मूक हैं, सर्मथ्य अधूरा है। संसार की हर शक्ति उसके आगे नतमस्तक है, प्रणत है।

जीवन का कलाकार मिट्टी को सोना बनाता है। आत्मा को परमात्मा और शव को शिव। भगवान महावीर, बुद्ध, राम और गाँधी जीवन के सच्चे कलाकार थे। उन्होंने लाखों लोगों को जीने का ज्ञान-विज्ञान और प्रकाश दिया। इसी श्रृंखला में जीवन के कलाकार, सच्चे पारखी अष्टमाचार्य श्री पूज्य कालुगणी ने आज से ५३ वर्ष पूर्व एक अनमोल हीरे को परख कर संघ का भार उसके नन्हें कन्धों पर डाला। २२ वर्ष की तरुण अवस्था में विशाल तेरापन्थ धर्मसंघ के नेतृत्व का भार आचार्य प्रवर के कोमल कन्धों पर आया। यह पूज्य कालुगषी की दूरदर्शिता थी। आज आचार्य काल का अर्द्ध शतक पूरा हो गया है और शतक का प्रारम्भ नव निर्माण की नई कल्पनाओं के साथ शुरू हो गया है। आज सम्पूर्ण विश्व भुवन भास्कर अमृत पुरुष आचार्य तुलसी जिनका व्रत आरोहण की गाथा है, प्रज्ञा की ज्योतिर्मयी सजीव मूर्ति है। इसी लिए कहा है-

"नयनों में वात्सल्य हृदय में करुणा का संचार लिए।
तुलसी तुम आए धरती पर मानवता का प्यार लिए"।

आप एक दिव्य संस्कारी महामनीषी हैं, शान्ति कर अनेय श्रोत आपके भीतर प्रवहमान है। आपका तेजोवलय इतना पुष्ट, आकर्षक और शक्ति-शाली है कि निराशा के कुहरे में दिग्मूढ़ बना मानव आपके सान्निध्य में आकर सदा सहज रूप से नया जीवन पाता है। पाता ही नहीं,

एक मिट्टी के ढेले को घड़े का आकार मिल जाता है। उस घट में इस प्रकार का अमृत भर देते हैं कि संसार की विपदाओं से सदैव के लिए मुक्त होने की राह ले लेता है। आचार्य श्री तुलसी एक पदयात्री थे। अणुव्रत आन्दोलन के माध्यम से सम्पूर्ण विश्व में नैतिकता का शंखनाद फूंका। जीवन में धर्म नहीं धार्मिकता का प्रकाश, मानव में मानवता का बोध, नैतिक में नैतिकता का निर्झर प्रवाहित करने के निमित्त चारों ही दिशाओं में पश्चिम से पूर्व की ओर उत्तर से दक्षिण की ओर, लगभग एक लाख किलोमीटर की यात्रा कर हर प्रान्त की सीमा पर पंहुच कर संयम वाणी का स्वर झंकृत किया। इसलिए कहा है-

"मानवता देवी के तुमने नित्य नये शृंगार सजाये
मानवता देवी की खातिर अरमानों के दीप जलाये।।
मानवता के अमर पुजारी मानवता ही तुमको प्यारी।
घर घर मानवता पहुंचाने बन गए प्रभुवर पाद विहारी।।"

आचार्य प्रवर ने धर्म का यथार्थवादी रूप प्रस्तुत कर मानव बनने की प्रेरणा दी। आचार्य प्रवर का घोष है- पहले इन्सान इंसान फिर हिन्दू या मुसलमान। आपने नवीन शासन में नवीनतम कार्य किए।संघ के सर्वतोमुखी विकास के लिए आपके स्मृति पटल से विभिन्न प्रयोगों के आविष्कार होते रहे है। आपने अपने अभिनव प्रयोगों के द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में साध्वियों को आगे बढ़ाया। इसका नमूना हम वर्तमान में साध्वी समाज को देख रहे हैं। आप जीवन के सच्चे कलाकार हैं, जन जन को जीने की कला सिखा रहे हैं। आप स्वयं कलात्मक जीवन जीते हैं तथा अपने संघ को उपयोगी कलाओं से परिपूर्ण देखना चाहते हैं। आपने तेरापंथ संघ को बाहर और भीतर से कलात्मक बनाया है।

आचार्य श्री श्रमण परम्परा के ज्योतिपुंज नक्षत्र है वे प्रकाश स्तंम्भ है। व श्रमण परम्परा के तेजस्वी प्रतिनिधि हैं। वे मात्र तेरापंथ के आचार्य ही नहीं अपितु जैन समाज के सर्वोपरि नेता भी रहे।

युग युग तक आपका कुशल नेतृत्व इस संघ को विकासोन्मुख बनाता रहे, साधना के नये-नये आयामों के साथ संघ ओजस्वी व तेजस्वी बने, शान्ति का प्यासा मानव चिर शान्ति और जीवन आनन्द को प्राप्त करे, इन्ही शुभ भावनाओं के साथ में अमृत पुरुष का सहस्त्र नमन, वंदन-अभिनंदन करता हूं।

> *O आज राष्ट्र में जिस तरह टूटनपूर्ण स्थितियां है, उनमें अणुव्रत आन्दोलन जैसे उपक्रम ही रचनात्मक भूमिका निभा सकते है। अणुव्रत अनुशास्ता आचार्य श्री तुलसी ने इस आन्दोलन के माध्यम से राष्ट्रीय एकता एवं साम्प्रदायिकता सद्भाव का महान कार्य किया है।*
>
> -के० नारायणन्

मौत का पश्चाताप

साध्वी सविताश्री

मौत! ज़ी हां मैं मौत हूं। जब से दुनिया बनी है तभी से मेरा अस्तित्व है। जन्म का जितना महत्व है, उससे कई गुणा अधिक मेरा महत्व है। जन्म व्यक्ति की महानता को सिद्ध नहीं कर सकता क्योंकि उसका भविष्य अज्ञात रहता है किन्तु मृत्यु के समय व्यक्तित्व का मूल्यांकन होता है। संसार भर के कवि, लेखक, प्रवक्ता, प्रबुद्धजन मुझे अगणित उपनामों से उपमित करते हैं। कभी-कभी कलकल वह सरिता से मेरा गठबंधन किया जाता है तो कभी आकाश की भावभूमि पर मुझे खड़ा किया जाता है।

वस्तुतः तो मैं समुद्रीय लहरों से उद्वेलित विशाल जलराशि हूं। तथा आस-पास के भूखण्ड को जलमग्न करती हुई बेतहाशा दौड़ने वाली प्रलयंकारी नदी हूं। मैं निरभ्र आकाश नहीं हूं अपितु काली कजरारी घटाओं से घिरी पृथ्वी को चीर देने वाली कड़कती बिजली हूं। मैं प्रचण्ड शिखा हूं।

बड़े-बड़े राजा-महाराजा सभी मेरी शरण स्वीकार करते हैं। मैं किसी को भी क्षमा नहीं करती। मेरे सामने वे सब गिड़गिड़ाने लगते हैं। सौ-सौ आंसू बहाने लगते हैं। अधिकांश लोग मुझे यमराज के नाम से पहचानते हैं। गालियां दी जाती हैं पर मैं बड़ी सहनशील हूं। सब प्रकार के विरोधों को सहन कर लेती हूं। करणीय को अपना धर्म मानती हूं। मानव के मनसूबे ज्यों के त्यों रह जाते हैं।



मैं हर कार्य को सोच-समझ कर पूरा लेखा जोखा करके सम्पादित करती हूं। पर कभी-कभी मैं बड़ी गलती कर बेठती हूं। गत वर्ष भी मैं एक ऐसी गलती कर बैठी। बड़ा असर है जिसका मेरे मन पर। आज तक भी मेरे दुःख का कोई आर-पार नहीं है। मैं स्वयं पश्चाताप की अनल में झुलस रही हूं। मेरे मन में बार-बार वेचारिक बिजली कोंधती है। हाय! मैंने यह क्या किया? समूची मानवता के नाम विश्वशान्ति का पैगाम देने वाले एक दिव्यपुरुष को मैंनें अपनी गोद में ले लिया जो धरती के अणु-अणु को आलोकित कर रहा था। जिसका तीन अक्षर का बड़ा प्यारा नाम था तुलसी। जिसे उनके गुरु कालूगणी बड़े स्नेह थे 'तुलछु' कहते थे।

वस्तुतः अणुव्रत अनुशास्ता तुलसी का महाप्रयाण मेरे जीवन की भयंकर भूल है। उनके भक्तजन जितने दुःखी है उससे कई गुणा अधिक मैं दुःखी हूं। उनके भक्तों की करुण पुकार सुनकर मेरा वज्र हृदय भी विदीर्ण हो रहा है। मैं स्वयं वज्राहत हूं, मर्माहत हूं। मेरे पास ऐसा कोई शब्द नहीं, जिससे मैं अपनी व्यथा को व्यक्त कर सकूं। मैं नहीं जानती थी कि दुनियां मेरे इस कृत्य पर थू-थू करेगी। अब तो मेरा दिल विलख रहा है। उफ!

बहुत बार मुझे कोसा जाता है। मैंने क्या किया, कितना अनर्थ कर दिया। जैन धर्म के महान संत का परिनिर्वाण क्यों किया? एक विशाल असाम्प्रदायिक चिन्तक को एक असमय ही क्यों उठा लिया? राष्ट्रीय चरित्र के उन्नायक को जन आंखों से ओझल क्यों कर दिया? इस प्रकार सोचते सोचते मेरी सिसकियां शुरू हो गईं। सिर भयंकर दर्द से फटने लगा।

आप सब जानते हैं कि तुलसी ने तेरापंथ की भाग्यलिपि को स्वर्णाक्षर में अंकित किया। उनका आभामण्डल प्रभास्वर था। लाखों व्यक्तियों की चेतना का स्विच ऑन करने वाले को मैंने ऑफ कर दिया। अब मैं किस मुंह से उनसे और आप सबसे क्षमायाचना करूं। मेरा अभिमान चूर-चूर हो गया। गरीब की झोंपड़ी से लेकर राष्ट्रपति भवन तक जिन्होंने नैतिकता की अलख जगाई थी, जिनके सामने आते ही हर समस्या समाधान बन जाती थी, निषेधक भाव नौ दो ग्यारह हो जाते थे, चरैवेति-चरैवेति जिनका आदर्श सूत्र था। यद्यपि उनकी कर्मजा शक्ति उनके विचार, उनका कार्य, उनका यश आज तक भी विद्यमान है। किन्तु मेरे पास अब पश्चाताप के अलावा कुछ भी तो नहीं है।

गुरुदेव तुलसी को इस लोक से स्वर्गलोक ले जाने के बाद मेरी हालत वैसी ही है, जैसी उनके गुरु को जब मैं ले गई थी। उन्हीं के रचित पद्यों का उपयोग करती हुई, परोक्ष रूप से सबसे क्षमायाचना करती हूं।

मनड़ो लाग्यो रे, चितड़ो लाग्यो रे
खिण-खिण समरु गुरु थारो उपगार रे
कियां विसराऊं म्हारै हिवड़ै रा हार।।
वज्राहत हूं मर्माहत हूं, पीड़ा रो नही पार रे
मैं ही जाणूं म्हारे मन री जाणै करतार।।

संगीत सम्राट : आचार्य श्री तुलसी

साध्वी स्वर्णरेखा

इस बहुरंगी सृष्टि में संगीत के मधुमय स्वर सर्वत्र विद्यमान हैं। भ्रमरों की गुंजन में, सरिता की कल-कल में, हवा के संचरण में, सूखे और त्रण पत्तों की खड़खड़ाहट में, चिड़ियों की चहचहाहट में, यहां तक की श्वास के हर स्पंदन में संगीत सुनाई देता है। मनुष्य की गति में, अवस्थिति में भी संगीत की अनुगूंज है। जो उसकी गतिशीलता का परिचायक है।

संगीत जन मानस को आकृष्ट करने का अमोघ साधन है। बालक हो या जवान, अल्पज्ञ हो या विद्वान, सुर हो या असुर, पशु हो या पक्षी, सभी पर इसका प्रभाव अचूक है। बंशी की टेर सुनकर हिरणों के झुंड के झुंड गायक को घेर कर खड़े हो जाते हैं। सपेरे की बीन बजते ही जहरीले फनधर भी नाचने लगते हैं।

संगीत में अजब जादू होता है। कहते हैं कि लव-कुश के संगीत से सरयू का जल प्रवाह थम गया। पूज्य जयाचार्य ने संकट की उन घड़ियों में जब तन्मय होकर गुण कीर्तन किया तो अंगारों की वर्षा थम गई। संगीत में तरलता होती है उसमें राग-द्वेष अपना-पराया सब कुछ घुल जाता है।



उसमें एक झंकार-सी उठती है जो मन को तरंगित कर देती है।

राष्ट्रसंत आचार्य श्री तुलसी कवि थे, भक्त थे, समाज सुधारक थे, लोकनायक थे, मधुर गायक थे। उनके संगीत में खिलते हुए नाजुक फूलों की मुस्कान थी। गले की लोच और संगीत का प्रवाह अनुपम था। जब-जब भी लोक गीतों की धुनों पर संगीत गाते तो श्रोतागण झूम उठते थे।

विश्व में कई महान् संगीतकार, तबलावादक आदि हुए हैं जिन्होंने वर्षों साधना करके संगीत कला का विकास किया है। लेकिन बिना संगीत की साधना सातों सुरों के ज्ञाता बने हैं, वे हैं "गुरुदेव श्री तुलसी"। यदि ऐसा कहा जाए कि गुरुदेव के कंठों में देवी सरस्वती स्वयं विराजमान थी तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। जब वे गाते तो चारों ओर शान्ति बिछ जाती। ऐसा प्रतीत होता मानो प्रकृति का कण-कण उन्हें सुनने के लिए उतावला हो रहा है।

तेरापंथ के अष्टम आचार्य पूज्य कालूगणी ने एक बार अपने पास रहने वाले संतों को बुलाकर कहा - "असवारी" की राग सुनाओ। इसकी पूरी पंक्ति है राणाजी ! थारी देखण द्यो असवारी।

मुनि कुन्दनमल जी, चौथमल जी, सोहनलाल जी (चुरू) आदि कई सन्त इस रागिनी से परिचित थे उन्होंने राग सुनाई पर कालूगणी की दृष्टि में वे उत्तीर्ण नहीं हुये। कई मुनियों की रागिनी सुन लेने के बाद आपने मुनि तुलसी से कहा तुम सुनाओ।

मुनि तुलसी ने कुछ दिन पूर्व ही वह रागिनी कालूगणी से धारी थी। ग्रहणशीलता होने के कारण आपने उस रागिनी में रचित एक पद्य उसी रूप में सुना दिया। पूज्य कालूगणी ने फरमाया - यह ठीक गाता है, इस प्रकार गाना चाहिए। इसका स्वर बारीक है, मीठा है, सुशील है, गाने की कला ठीक है। अपने मधुर और सुरीले कंठों के कारण गुरुदेव बांसुरी महाराज के नाम से प्रसिद्ध थे।

गुरुदेव प्रगतिशीलता के प्रतिनिधि थे। उनकी वाणी में उत्साह और ओज था। उनका जीवन-दीप-संयम स्नेह से छलाछल भरा था। उनके मन मस्तिष्क में एक चिन्तन चलता रहता था कि जनता को ऐसे गीत दिये जाए जिनसे उनमें शक्ति, भक्ति, साहस और नये बल का संचार हो तथा साथ में नवयुग का निर्माण हो। उन्होंने हजारों गीत लिखे। उनके द्वारा रचे गये और गाए गए कुछ गीतों की अनुगूंज जब तक सुनी जा सकती है। कुछ गीत तो जन-जन के अधरों पर थिरक रहे हैं। सिरियारी रो संत, शासन कल्पतरू, श्रद्धा स्वीकारो तेरापंथ रा अधिदेवता, अणुव्रत गीत आदि-आदि।

गुरुदेव बार-बार कहते थे कि गीत केवल गाने के लिए नहीं जीवन को नया अर्थबोध देने वाले हो। समाज के कटे हुए व्यक्तियों को सामाजिक सूत्र में बांधने वाले हों। राष्ट्रीयता का रंग भरने वाले हों और सबको भक्ति रस की धारा में निष्णात करने वाले हों।

आचार्य श्री तुलसी राजस्थानी भाषा के लोकप्रिय कवि थे। उन्होंने अपनी सशक्त लेखनी से मायड़ भाषा का मस्तक ऊंचा किया है। उनकी रचनाएं जनमानस में नव जागरण का शंखनाद करने की शक्ति रखती है। निःसन्देह वे आधुनिक काव्य जगत में उच्च कोटि के सर्जक एवं शिल्पी हैं। उनके गीतों में बेधकता, भाषा में प्रौढ़ता, विचारों में परिपक्वता और कल्पना में अद्भुत

नत्यता है। काव्य में स्वर-लय का सामंजस्य है। छन्दों का संयोजन है। रचनात्मक धरातल पर प्रकृति के साथ मानव वृत्ति का समन्वय उनके सृजन की उपलब्धि है। एक अनुशास्ता होने के बावजूद उन्होंने काव्य, ग्रंथों की एक लम्बी शृंखला जनता के हाथों में थामी। उनके द्वारा रचित किये गये काव्य में अनेक रचनाएं हैं कालु यशोविलास, माणक महिमा, डालिम चरित्र, मगन चरित्र, माँ वदना, मैं तिरू म्हारी नाव तिरै, नंदन निकुन्ज, सोमरस, चन्दन की चुटकी, आषाढ़ मूर्ति आदि ऐसे ग्रंथ हैं जिन्हें जितनी बार पढ़ा जाए अपूर्व आनन्द की अनुभूति होती है।

आचार्य श्री तुलसी संगीतकार के साथ-साथ संगीत प्रेमी थे। प्रवचन में संगीत की मधुमय धारा बहाते थे। वे एक ऐसा समां बांधते थे कि सब उनके साथ ही बंध जाते थे। महाप्रयाण के पहले दिन २२ जून के प्रवचन में गाया गीत "प्रभो यह 'तेरापंथ महान्' आज भी श्रोताओं के कानों में गूंज रहा हूं। वे गीत गले से नहीं रोम-रोम से गाते थे। इसलिए ही उनका गीत सत्यं शिवम् सुन्दरम् होता था। वे कहते थे संगीत के बिना प्रवचन में माधुर्य नहीं होता है। संगीत अलसाए मन को विकसित करता है और आत्मा के हर ताप को शान्त करता है। संगीत मेरे जीवन की औषधि है। इसके द्वारा मैं स्वास्थ्य लाभ भी करता हूं। गाने में मुझे इतनी तन्मयता आती है कि मैं अस्वस्थता को भूल जाता हूं। जब मैं गाता हूं तब मुझे ऐसा अहसास होता है मानो नई शक्ति का संचार हो रहा है।

महात्मा गांधी ने लिखा है संगीत मन को शान्ति प्रदान करता है। सन् १६०७ में जब दक्षिण अफ्रीका में मुझ पर कातिलाना हमला हुआ, तब तक मैं अशान्त था। लेकिन जब मेरे कहने पर अलाईन डीक ने बडी मधुर आवाज में यह गाया "लीड काइंडली लाईट' (हे करुणाकार ! मार्ग दर्शा दो) तो मेरे घावों की पीड़ा कम होगी।

चिकित्सा वैज्ञानिकों ने अनेक प्रयोग करके यह सिद्ध किया है कि संगीत में मन और आत्मा ही नहीं, शारीरिक प्याधियों का इलाज संभव है।

आचार्य श्री तुलसी प्राचीन-अर्वाचीन सभी राग-रागिनियों के ज्ञाता थे। श्रीमज्जयाचार्य द्वारा रचित भगवती की जोड़ में ५०१ गीत हैं। प्रायः गीत पूरानी रागो में हैं उन सब राग-रागिनियों को जोड़ने वाला एक मात्रज्ञेतु थे-आचार्य श्री तुलसी।

ऐसा कहा जाता है कि प्राचीन समय में अनेक राग रागनियों प्रचलित थी जैसेः- दीपक राग, मेघ राग। दीपक राग अलापने से दीपक जल उठते थे। मेघ राग गाने से वरसात हो जाती थी। हालांकि आज के संगीत साधक पूर्णता के साथ उस विन्दु पर नहीं पहुंच पाये हैं किन्तु गुरुदेव के गाने में ऐसी शक्ति थी कि सभी श्रोताओं को शीतलता का एहसास होता था।

आचार्य श्री तुलसी जितने श्रेष्ठ गायक थे, उतने श्रेष्ठ शिक्षक भी। उनका अभिमत था आज फिल्मी धुनों में रचित गीतो में भले ही सामयिकता की पुट हो, हाव-भाव हो किन्तु शाश्वतिक मिठास नहीं है।

सवत् २०५४ में पूज्य गुरुदेव लाडनूं विराज रहे थे। तव उन्होनें अपने साधु साध्वियों को

रामायण की रागें-सीखने के लिए आह्वान किया। संगीत में रुचि रखने वाले साधु-साध्वियों रामायण की रागे सीखने पूज्य गुरुदेव की उपपात में पहुंचते। जब आचार्य श्री तुलसी राग सीखाते थे तब वे स्वयं उसमें तल्लीन हो जाते थे। गाने के साथ वे सम्बन्धित प्रसंगो को इस रूप में अभिव्यक्त देते थे कि श्रोता मिलि चित्त बन जाते और ऐसा अनुभव होता मानो घटना प्रत्यक्ष में हो रही है। या टी०वी० पर कोई सीरियल चल रहा है। जब सीखाने का समय पूरा हो जाता तब सीखने वालो के मन में आता काश! समय यहीं रुक जाए और हम आनन्द के इस महासागर में गोते लगाते ही चले जाए। वे जिन्दगी भर इसी प्रयास में लगे रहे कि उनके शिष्य उनसे भी आगे बढकर कोई नया कीर्तिमान स्थापित करें। वे जिन्दगी भर दीपक की तरह स्वयं जलकर औरों का मार्ग प्रकाशित करते रहें।

अब तो उनकी प्रेरणा ही हमारे लिए पाथेय है। प्रकाश की यात्रा चलती रहे - यही सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

प्रेरक-प्रसंग

मानव धर्म के व्याख्याता

❑ साध्वी अमृतयशा ❑

एक बार पूज्य गुरुदेव कलकत्ता यात्रा करते हुए लखनऊ पधारे। 'झूठा-सच' के प्रसिद्ध लेखक 'कामरेड यशपाल' आचार्य श्री की सन्निधि में उपस्थित हुए। बातचीत के प्रसंग में उन्होंने कहा- आचार्य श्री ! मैं धर्म-कर्म को नहीं मानता हूं। आचार्यवर ने पूछा-यशपाल जी! ठीक है कि आप धर्म-कर्म को नहीं मानते हैं,मगर यह बताइये कि जीवन की पवित्रता में आपका विश्वास है या नहीं?

यशपाल जी-वह तो है ही। कलुषित जीवन तो समाज को ही कलुषित कर देगा।

आचार्य श्री- जीवन की सत्य और सामाजिक समता में विश्वास करते हैं या नहीं?

यशपाल जी- इसमें तो पूछना ही क्या है।

आचार्य श्री- अहिंसा एवं मैत्री में विश्वास है या नहीं?

यशपाल जी- केवल हिंसा तो समाज को बर्बर बना देगी, अहिंसा एवं मैत्री तो जीवन के आवश्यक तत्व हैं। आचार्य श्री ने सस्मित पूछा- तो फिर बताइये, धर्म इनके सिवाय और किसका नाम है? क्या केवल उपासना,पूजा एवं क्रिया-काण्ड को ही आपने धर्म मान रखा है? वह तो धर्म का प्रेरक तत्व है। धर्म तो जीवन के प्रत्येक कर्म की पवित्रता है। यशपाल जी आश्वस्त भाव से बोले- आचार्य श्री! अगर धर्म का यही स्वरूप है तो इस धर्म को मैं भी स्वीकार कर लूंगा।

हमने अपनी शक्ति को अच्छी तरह से तोला और यह भी सोचा की हम जव भी अपनी सीमाओं को विस्तार देना चाहेंगे विरोध होगा। विरोध को सहे विना गति-प्रगति संभव नही है।

-आचार्य श्री तुलसी

महान् यायावर - आचार्य तुलसी

❑ मानिकचन्द पुगलिया ❑

प्रातः स्मरणीय, अणुव्रत अनुशास्ता, आचार्य श्री तुलसी की पुण्यतिथि १३ जून १९९८ को है। १३ जून १९९७ को अथक यायावर संस्कृत, राजस्थानी और हिन्दी साहित्यकार का वह सुधांशु अपनी पीयूष-वर्षिणी किरणों को समेट कर अस्त हो गया था। उनकी प्रथम पुण्यतिथि के अवसर पर देश विदेश में उस महान् यायावर के कांत पादाम्बुजों में भक्त लोग श्रद्धा के फूल अर्पण कर रहे हैं। मैं भी इस निबन्ध के द्वारा उस महर्षि को पावन पद-रज में अपने विचार-पुण्य को चढ़ाने का किंचित प्रयास कर रहा हूं।

उपनिषद्कारों ने "चरैवेति-चरैवेति" सूत्र से केवल भावात्मक गतिशीलता को ही नहीं, किन्तु यायावरता को अनेकानेक उपलब्धियों का प्रवेश द्वार कहा है। ऐसे तो प्रत्येक जैन मुनि दीक्षा ग्रहण के साथ ही आजीवन पदयात्री बन जाता है परन्तु आचार्य श्री तुलसी ने पदयात्रा अपने आप में एक आयाम लिए हुए सम्मन्न की। जन-सम्पर्क एवं गरीब तथा अमीर को जीने की कला जानने के लिए पदयात्रा करना अति आवश्यक है। आचार्य तुलसी ने अपने आचार्यत्व काल के पूर्वार्ध में कम यात्राएं कीं। उस काल में धर्मसंघ की सारणा-वारणा पर विशेष ध्यान दिया गया, शिक्षा का एक अच्छा अभियान चलाकर अपने धर्मसंघ के प्रत्येक साधु-साध्वी को शिक्षित करने पर विशेष बल दिया। इस काल में आपने जो भी यात्राएं कीं वे यात्राएं केवल बीकानेर डिवीजन तक ही सीमित थीं परन्तु अणुव्रत आन्दोलन की स्थापना के साथ ही सुदूर क्षेत्रों की यात्राएं प्रारम्भ कर दीं। तव से महाप्रयाण तक आपने भारत के दो-तीन प्रान्तों को छोड़कर प्रायः सभी प्रान्तों की यात्रा सम्पन्न कर नैतिक चेतना की अलख जगाई। आप एक यात्रा सम्पन्न नहीं करते उससे पहले ही दूसरी यात्रा की रूपरेखा तैयार कर लिया करते थे। वे अपनी शाश्वत यात्रा में प्रतिदिन लगभग २० से ३० किलोमीटर चलते थे। यायावर वनकर ही उन्होंने जातीयता, गरीवी एवं शोषण के दुश्चक्र को नजदीक से देखा एवं इसके विरुद्ध मे अणुव्रत के माध्यम से गरीव की झोंपड़ी से लेकर राष्ट्रपति भवन तक अपनी आवाज पहुंचाई। चरित्र निर्माण के लिए उन्होंने जो वल दिया वह अति आवश्यक था। आज के युग में तो गिरते चरित्र से हर संभ्रान्त नागरिक चिन्तित है। आपने अपने शिष्य समुदाय को अणुव्रत को घर-घर पहुंचाने का सन्देश दिया। चरित्र निर्माण के द्वारा ही जीवन की पूर्णता को प्राप्त किया जा सकता है, अन्यथा असम्भव है। अणुव्रतों के उद्घोष से जम्मू से कन्याकुमारी तक तथा राजस्थान से असम तव वायुमण्डल मुखरित हो उठा। आपका शिष्य समुदाय अणुव्रत के मिशन को घर-घर पहुंचाने में जुट गया। आपकी ऐतिहासिक पदयात्राओं से प्रारम्भकाल में विविध सन्देहों के वादल भी घिरे परन्तु कुछ समय में ही वे धूमिल पड़ गए। विरोधों

● कविता ●

युगद्रष्टा

मुनि मधुकर

युगद्रष्टा बनकर आया था
अपनी ऊर्जा से घट-घट में आस्था दीप जलाया था
युगद्रष्टा बनकर आया था
खींची एक अलौकिक रेखा,
श्रम की ओर कभी नहीं देखा
अमरित वर्षा जलधर की ज्यों
जन जन मन पर छाया था
युगद्रष्टा बनकर आया था
कितनी प्रतिभाओं का सर्जक,
हर प्रस्तुति होती आकर्षक
मिट्टी जैसे ढेलो पर भी
कौशल को आजमाया था
युगद्रष्टा बनकर आया था
सरस्वती कण्ठों पर बसती
रचनायें न सुहाती सस्ती
कालजयी कृतियों से विविध
विधाओं को पनपाया था।
युग का नक्शा बदला सारा,
दूरदर्शी-आयामों द्वारा
अगली पीढ़ी का सर्जन कर,
अद्‌भुत दृश्य दिखाया था।
युगद्रष्टा बनकर आया था
'ए वन' हो हर काम हमारा,
सर्वाधिक प्रिय था यह नारा
शक्ति जगाओ कदम बढ़ाओं,
प्रेरक पाठ पढ़ाया था।
युगद्रष्टा बनकर आया था



जब कभी किसी व्यक्ति का मन अप्रसन्न होता है अथवा किसी के प्रति शत्रुता का भाव से भरा होता है, शरीर में अस्वास्थ्य के लक्षण प्रकट होने लगते हैं।
-गणाधिपति श्री तुलसी

गुरुदेव श्री तुलसी ने कहा था :-
मै कथनी और करनी की समानता में विश्वास करता हूं।



गुरुदेव तुलसी की पुण्य स्मृति में

दृढ़धर्मी श्रावक

स्व० श्री भैरुदान जी छाजेड़

श्रद्धावनत

गुलाबचंद निर्मल कुमार विनीत छाजेड़

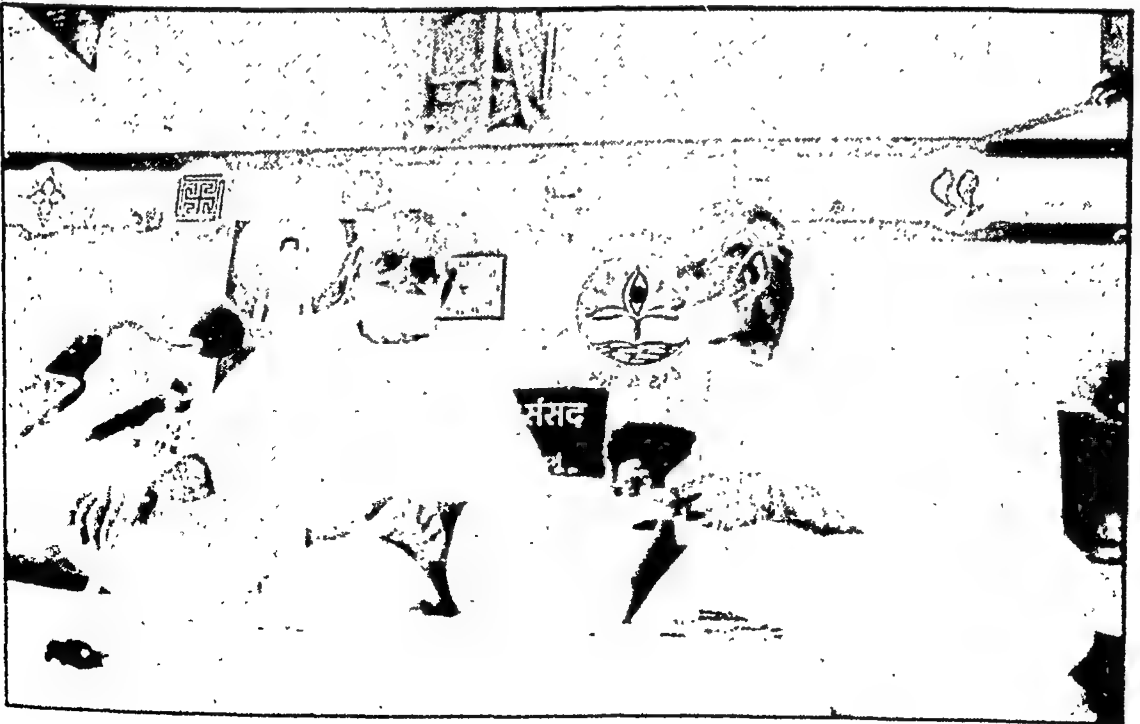
नई दिल्ली

उनका जीवन बिना दीवारों का मंदिर था

साध्वी कनकश्री

जब-जब धरा विकल होती मुसीबत का समय आता।
किसी भी रूप में कोई, महामानव चला आता।

गुरुदेव श्री तुलसी एक ऐसे ही महामानव थे, जिनके मार्ग-दर्शन की समाज, राष्ट्र और पूरे अध्यात्म जगत को जिस समय महती अपेक्षा थी वे ठीक उसी समय पर आए। उन्होंने अपने आध्यात्मिक नेतृत्व, अथाह ऊर्जस्वल व्यक्तित्व और सृजनशील बहुआयामी कर्तृत्व से युग चेतना को नयी दृष्टि और नई दिशा दी। उन्होंने जीवनभर अपनी कालजयी सोच, समयज्ञता, कल्पनाशीलता, श्रम-निष्ठा और साधना संपदा का उपयोग महान प्रयोजनों की सिद्धि के लिये किया। उनकी तपस्या और यायावरी का एक मात्र उद्देश्य था व्यक्ति से लेकर विश्व तक और देह से लेकर आत्मा तक अमृत और आनंदवर्षी चेतना का उदय हो, इसी लक्ष्य की सिद्धि के



लिए उन्होंने अपनी उम्र के प्रत्येक क्षण का सुनियोजित उपयोग किया।

वे एक ऐसे अलौकिक परिजात पुष्प थे, जिसकी महक और मुस्कान युग-युग तक मानवता की धरती को अनुप्राणित करती रहेगी।

वे एक ऐसे कल्पवृक्ष थे जिसकी वरदायी शीतल छांव का आसरा पा कर लाखों लोगों ने अपने कल्पनालोक को श्री-समृद्ध होते देखा था।

अध्यात्म के आकाश में प्रखरता से तपने वाले एक अद्भुत ज्योतिपुंज थे तुलसी। एक महासूर्य थे वे जो समाज और राष्ट्र में व्याप्त अन्याय, अत्याचार, अनैतिकता और विषमता के गहन अंधकार से सदा जूझते रहे थे।

अणुव्रत, प्रेक्षाध्यान और जीवन विज्ञान - ये युगों की शिला पर लिखे गये उनके अमर अभिलेख हैं। अपने उर्वर मस्तिष्क से उपजे इन रचनात्मक उपक्रमों से उन्होंने मानवीय एकता, साम्प्रदायिक सौहार्द, राष्ट्रीय चरित्र निर्माण, नारी शक्ति के विकास, अहिंसक जीवनशैली के प्रशिक्षण, नैतिक मूल्यों के जागरण आदि की दिशा में जो महान काम किये हैं, उनके लिए आने वाली सदियां उन्हें गौरव एवं सम्मान के साथ याद करेंगी।

वे एक युग-पुरुष थे। युग-निर्माता थे। अपने चिंतन, निर्णय और कर्म योग से युग चेतना को प्रभावित किया। उसे सदा गतिशील और परिस्पन्दित बनाए रखा। सामान्य जन से लेकर राष्ट्र के शीर्षस्थ पुरुष भी आप से मार्ग-दर्शन प्राप्त कर गौरव का अनुभव करते थे।

वे एक ऐसे अलौकिक दीप थे, जिन्होंने अपनी सतत साधना, तपस्या और ज्योति की आराधना से असंख्य बुझे दीयों को स्नेहदान देकर ज्योतित किया। विरोधों की तेज आंधियां और संघर्षों के तुफान उस की लौ को कभी कंपा नहीं सके।

"बुझ के रह गये तूफां, उस दीये के सामने,
जिस दीये को तेज तूफानों में जलना आता था।"

उनके सतत परिभ्रमणशील संचेतन चरणों ने मानवता की धरती पर असंख्य ज्योति-स्तंभ खड़े किये थे। जीवन और जगत की समस्याओं को समाहित करने की अद्भुत समझ और क्षमता के साथ उन्हें मानवतावादी सिद्ध दृष्टि उपलब्ध थी। उनका अंतःकरण संवेदनशील था। वे मैत्री और करुणा के हिमालय थे। जन-सामान्य की व्यथा -वेदनाएं देख वे पिघल-पिघल उठते थे। उनकी वाणी चैतन्यमयी नदी थी, जिसके पुण्य सलिल का स्पर्श पाकर पाषाण-हृदय भी कमल से कोमल और विनम्र बन जाते थे।

वे एक शताब्दी पुरुष थे। बीसवीं सदी के भाल पर उनके द्वारा लिये गये नयी परिकल्पनाओं, संभावनाओं और सर्जनाओं के संकेत निश्चित ही इक्कीसवीं सदी को गौरव प्रदान करेंगे। उनके सफल नेतृत्व ने अध्यात्म का एक नया अध्याय सरजा था, जो सरहदों के पार पहुंच कर मानव-मन के तमस को धोने में सफल सिद्ध हुआ।

वे अणुव्रत अनुशास्ता के रूप में नैतिक और चारित्रिक क्रांति के पुरोधा बनकर उभरे थे। देश की आजादी के साथ ही उन्होंने स्वतंत्र देश के स्वतंत्र नागरिकों को "असली आजादी" अपनाने की अपील की, वह इसलिए कि शताब्दियों के दासता के बाद मिली स्वतंत्रता का उन्माद कहीं देशवासियों को उच्छृंखल न बनायें। अणुव्रत के रूप में मानवीय आचार-संहिता को प्रस्तुत कर उन्होंने राष्ट्र के नेता और जनता को "संयम ही जीवन है" का घोष दिया, ताकि राष्ट्रीय चरित्र-निर्माण का ठोस धरातल तैयार हो सके।

सामाजिक क्षेत्र में उनके विचार बड़े क्रांतिकारी थे। वर्ग, जाति और संप्रदायगत भेदभाव और अलगाववादी प्रवृत्तियों पर सदा प्रहार करते रहे। विभिन्न दलों, वर्गों और समुदायों के बीच उभरी दूरियों को मिटाने के लिए अनेक बार स्वयं सेतु कर कर समाज और राष्ट्र की कठिनाइयों को दूर करते थे।

उनका सारा प्रयत्न ही मनुष्य, जीवन और जगत को संवारने का रहा। उनकी सारी सोच और चिंताओं का एक मात्र केन्द्र था मानवता की सुरक्षा। उनका रास्ता था - सत्यनिष्ठा, संयम, सदाचार, सेवा, सहयोग, संवेदनशीलता और श्रम परायणता।

वे मानवधर्म के प्रवक्ता थे। संप्रदायगत संकुचित विधि-विधानों या पूजा-उपासनाओं की अपेक्षा वे आचार-शुद्धि और व्यवहार-शुद्धि पर भार देते थे। वे साम्प्रदायिक सौहार्द स्थापित करने में सदा अग्रगामी रहे थे। विभिन्न धर्मों पर छाए वैमनस्य के कुहासों को छांटने में उनकी भूमिका सदा सराहनीय रही थी।

गुरुदेव वस्तुतः गुरुता के शिखर थे। एक विलक्षण संत थे। आनंद के संन्यासी थे। कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी वे कभी चिंतित, विचलित और प्रकम्पित नहीं हुए। उनका आनंद खंडित, भग्न नहीं हुआ। उस अमृतपायी संन्यासी के पवित्र आभा-वलय की परिधि में जो भी आता, उसके सारे तनाव/दबाव गिर जाते। वह खोजना उस चिन्मय चेतना में। लबालब भर जाता आनंद की अकूत संपदा से।

वे वात्सल्य के समंदर थे। ऐसा समंदर, जिससे कोई कितना ही वात्सल्य-रस ले ले, उसका रस कभी कम नहीं हुआ। उन्होंने बिना किसी भेदभाव के मानव मात्र को अपना वात्सल्य, नेह-दुलार, बांटा। जीवन भर बांटा, अकृपण भाव से बांटा। कितनी सटीक हैं ये पंक्तियां -

लुटाते थे खुले हाथों, कभी मोती कभी हीरे,
बांधते भक्त हृदयों को कभी कस कर कभी धीरे।
बिना बोले बिना पूछे, समाहित प्रश्न हो जाते,
निकट आये भले कोई, विशद वात्सल्य बरसाते।
कभी कोई नयी सूरत, कभी कोई नये चेहरे,
ढलानों पर कभी घूमे, शिखर पर तुम कभी ठहरे

उन्होंने अपने सतत् जागरूक, पवित्र और पराक्रमी जीवन से, संघ, समाज, राष्ट्र ओर संपूर्ण विश्व मानव को शांति, सद्भावना, संस्कार और सुगंधियां ही बांटी थीं। उन्होंने कभी किसी को आहत नहीं किया, कष्ट नहीं दिया। सिवाय अपने अप्रत्याशित महाप्रयाण के।

२३ जून १९९७ का वह अभागा दिन, जिस दिन क्रूर काल ने विश्व की एक महान् आध्यात्मिक विभूति को हमसे छीन लिया। संत श्री तुलसी के आकस्मिक प्रयाण का दुःखद समाचार आग की लपट की भांति कुछ ही मिनट में सर्वत्र फैल गया। जिसने सुना, अंतर्वेदना में डूब गया।

ऐसा लगा आसमान रो पड़ा, धरती कांप उठी, प्रकृति ने संतुलन खो दिया। उस दिन वृद्धों, तरुणों की आंखें नम थीं। महिलाएं फफक रही थीं। छोटे-छोटे बच्चे बिलख उठे थे। एक ही स्वर वातावरण में गूंज रहा था - हमारे जीवन प्राण गुरुदेव ऐसे कैसे जा सकते हैं? हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, पंडित, पादरी, मुनि, मौलवी - सभी ने एक गहरा आघात महसूस किया था, एक मानवता प्रेमी धर्मगुरु के चले जाने से। क्योंकि उनका जीवन बिना दीवारों का मंदिर था।

संभवतः यही कुछ कह रही थी उनके अंतिम दर्शनों के लिये उमड़ पड़ी अपार भीड़ कि "बिना ताज के भी लाखों के सरताज थे तुम निर्बल की शक्ति और मानवता की आवाज थे तुम धर्म और संप्रदाय ने सुख को न बांधा कभी हिन्दू की पूजा और मुसलमानों की नमाज थे तुम।"

जिन घड़ियों में देश संकट के दौर से गुजर रहा हों, जिस समय देश के नेता और जनता दोनों गुमराह हों, जिस क्षण एक समर्थ धर्मगुरु का मार्ग-दर्शन अत्यंत जरूरी हो, ऐसे समय में गुरुदेव श्री तुलसी का अचानक चले जाना समूचे राष्ट्र के लिए दुःखद स्थिति है।

बड़े गौर से सुन रहा था जमाना,
तुम्हीं सो गये दास्तां कहते कहते।।

करोड़ों में एक सर्वातिशायी सुदर्शन व्यक्तित्व, तेजो दीपित मुख-मण्डल, रोशनी बरसाती, बड़ी-बड़ी आंखें, स्निग्ध अंतःकरण, पौरुष और पराक्रम से लबालब अजेय कर्तृत्व, पारदर्शी युग दृष्टि, देश में फैले अनैतिकता, चरित्रहीनता और भ्रष्टाचार की जड़ों को उखाड़ फैंकने का आग्नेय संकल्प, पथ में आने वाली हर बाधा और चुनौति को हंसते-हंसते झेलने वाला एक जुझारु राष्ट्रसंत-तेज और ओज का एक अनंत-प्रवाही स्त्रोत, उसका अचानक यूं थम जाना, अदृश्य हो जाना, तेरापंथ धर्मसंघ की ही नहीं, समग्र जैन समाज और अध्यात्म जगत की अपूरणीय क्षति है। फिर भी वह सिद्धयोगी, परम चैतन्य पुरुष आज भी लाखों-करोड़ों लोगों के दिलों में बसा हुआ है - रोम-रोम में रमा हुआ है। उस युगदृष्टा ऋषि के बनाए रास्ते पर चलना और उस स्वप्न शिल्पी महासंत के सपनों को साकार करना, अपने आप को समर्पित करना, यही हमारी सच्ची श्रद्धार्पणा होगी, उस परम श्रद्धेय के प्रति।

●●●●

नैतिक चेतना के अग्रदूत

आचार्य श्री तुलसी

❑ डॉ० आनन्द प्रकाश त्रिपाठी 'रत्नेश' ❑

भारत की पावन धरती पर अनेक आंदोलनों का समय-समय पर सूत्रपात हुआ। कुछ हल्के झंझावातों को भी सह न सके और काल के कराल गाल में समाहित हो गये। कुछ आन्दोलन हवा के तीव्र झोंकों का भी डटकर मुकाबला किये और चट्टान की तरह अडिग रहे पर युग पर अपनी कोई विशेष छाप नहीं छोड़ सके। किन्तु इनसे पृथक अणुव्रत आंदोलन एक ऐसा आंदोलन है जिसने भगवान महावीर द्वारा प्रवर्तित श्रावक व्रत 'अणुव्रत' को युगानुरूप प्रस्तुत किया है। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य एवं इच्छा परिणाम का एक देशीय पालन ही महावीर का अणुव्रत है। लगभग २६०० वर्ष पूर्व के इस अणुव्रत को वर्तमान समस्याओं के समाधान के रूप में आचार्य तुलसी ने २ मार्च, १९४९ को अणुव्रत आंदोलन के रूप में प्रवर्तित किया।

आचार्य तुलसी भविष्य दृष्टा थे। वे समय की आहट को भांप लेते थे। वे नये-नये स्वप्न भी देखते थे और उन स्वप्नों को साकार रूप देने में उन्हें महारत हासिल थी। उन्हें आजादी के तुरन्त बाद इस बात का आभास हो गया था कि आने वाले दिनों में देश में सबसे ज्यादा संकट चरित्र का होगा। उनके समक्ष यह इतिहास भी था कि जब-जब हमारा चारित्रिक अद्यःपतन हुआ तब-तब हम गुलाम हुए। राजा पोरस, पृथ्वीराज चौहान एवं सिराजुद्दौला जैसे यशस्वी एवं तेजस्वी सम्राट के होते हुए भी हमें मुंह की खानी पड़ी थी क्योंकि पोरस को आम्भी, पृथ्वीराज चौहान को जयचन्द और सिराजुद्दौला को मीर जाफर जैसे पतित देशद्रोही ही मिले थे। और जब-जब ऐसे व्यक्ति प्रभावी हुए तब-तब हमें शिकस्त खानी पड़ी। काश! झाला सरदार, हकीमखां सूरि, भामाशाह जैसे राणा प्रताप के वफादारों में मानसिंह और शक्तिसिंह का नाम होता तो शायद देश का इतिहास कुछ और होता। चारित्रिक अद्यःपतन की इस भयावह त्रासदी ने प्यारे वतन को गुलामी की सांकल में जकड़ दिया था। देश भक्त क्रान्तिकारियों की शहादत के बाद हम आजाद हुए। ऐसी स्थिति में इस अनमोल आजादी की सुरक्षा एवं संरक्षा के लिए आवश्यक थी एक कारगर कदम उठाने की। सरकार द्वारा इस दिशा में कोई सकारात्मक पहल न देख तेरापंथ धर्मसंघ के तत्कालीन युवा आचार्य आचार्य श्री तुलसी ने अणुव्रत आंदोलन का सूत्रपात किया। नैतिक मूल्यों के संवर्द्धन एवं राष्ट्रीय चरित्र निर्माण के लिए प्रवर्तित इस आंदोलन की देश-विदेश में काफी प्रतिक्रिया हुई।

स्वतंत्र भारत के सिरमौर चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य का इस संदर्भ में कहना था कि अणुव्रत

आन्दोलन राष्ट्र के उत्थान के लिए एक सामूहिक आन्दोलन हे। ऐसे आन्दोलन धर्म की पृष्ठभूमि को विकासशील वना सकते हैं। सब धर्म इस आंदोलन को वल दे सकते हैं। इसके प्रवर्तक ने विशाल दृष्टि से इसको रखा है जिससे समस्त धर्मावलम्वी सहयोग कर सके। यह आन्दोलन मूलभूत सिद्धान्तों को लिए हुए हैं। इसके प्रणेता की भावना इसको किसी पर थोपने की नहीं है। परन्तु जो कार्य करे उस पर दृढ़ रहे। साधारण लोग भावना में वह जाते हैं परन्तु अणुव्रत आन्दोलन के प्रवर्तक आचार्य तुलसी अपने कार्य के लक्ष्य को पूरा करने में उस व्यक्ति की सच्चाई चाहते हैं। मेरी राय में यह आन्दोलन जनता के नैतिक एवं सांस्कृतिक उद्धार की दिशा में पहला कदम है।

अणुव्रत आन्दोलन के प्रति राजगोपालाचार्य का यह विचार आन्दोलन की सार्थकता को सिद्ध करता है। आचार्य तुलसी ने इस आन्दोलन का प्रवर्तन ही नहीं किया अपितु देशहित में, राष्ट्रहित में एक नैतिक क्रान्ति की थी। किसी भी राष्ट्र की थाती होती है नैतिकता। जहां नैतिकता को दांव पर लगा दिया जाता, उसकी वलि चढ़ा दी जाती है वहां कुछ न कुछ अनहोनी होती है। महाभारत का दृश्य हमारे सामने है। जव हस्तिनापुर की वहू के साथ भरी सभा में अनैतिक कृत्य करने की कोशिश की गयी तो कुरुक्षेत्र के मैदान में खून की नदियां वह उठीं और इस घृणित कार्य के दोषी कुरुवंश को नैस्तनावूद कर दिया गया। साधु वेश में छलिया रावण ने माता सीता का अपहरण कर जो अनैतिक कार्य किया उसका परिणाम भी हमारे सामने है कि किस प्रकार सोने की लंका में भाइयों के घिनौने कृत्य पर आंसू वहाने के लिए एक धर्मात्मा विभीषण ही शेष वचा था। इस देश ने अनैतिकता को कभी वर्दाश्त नहीं किया। अनेतिक कृत्य करने वाले, छलछद्‌म से दूसरों को धोखा देने वाले, पीठ पीछे से वार करने वालों को भी इस देश ने कभी माफ नहीं किया।

आनन्दपाल को मंत्रणा के वहाने वुलाकर मौत के घाट उतारने का प्रयास करने वाले कन्नौज नरेश विजय चन्द को अपना एक हाथ गंवाना पड़ा जवकि सम्राट आनंदपाल का वाल भी बांका नहीं हुआ। शकों से पराजित गुप्तनरेश रामगुप्त जव अपनी पत्नी ध्रुव स्वामिनी को शकों को सौंपने जैसे घोरतम अनैतिक कार्य करने के लिए राजी होता है तो भाई चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य ने इस कार्य के लिए दोनों को दण्ड दिया।

इससे यह स्पष्ट होता है कि जव-जव नैतिकता को रौंदने की कोशिश हुई तव-तव उसकी रक्षा के लिए स्वतः प्रयास हुए। इसी प्रकार स्वतंत्र भारत में भी जव नैतिक अनुगूंज की जरूरत हुई तो अणुव्रत आंदोलन सामने आया। इस आंदोलन ने विना किसी भेद रेखा के सवको एक साथ वैठने-उठने और विचार करने की दृष्टि से एक मंच दिया। यहां धर्म, जाति, वर्ग, लिंग की चारदीवारी को तोड़कर सवको समान अवसर दिये गये। यदि हृदय की शुद्धता, विचारों की पवित्रता, आचरण एवं व्यवहार की प्रामाणिकता हो तो वह किसी की जाति, वर्ग, संप्रदाय का क्यों न हो, चाहे वह कितना ही अभावग्रस्त क्यों न हो, चाहे वह कितनी ही निम्नजाति में क्यों न पैदा हुआ हो, उसका शृंगार किया जाना चाहिए। ऐसे व्यक्ति को पूरी तवज्जों एवं सम्मान मिलना

चाहिए'. और चाहे कितनी ही उच्च जाति का क्यों न हो, चाहे कितने ही बड़े घर का क्यों न हो यदि अनैतिक कार्य करता है तो उसकी उपेक्षा की जानी चाहिए। अणुव्रत आन्दोलन 'को कहि सके बड़ेन को' कहावन अस्वीकार करते हुए इस मंतव्य को प्रतिष्ठित करता है कि पूजा गुणों की होनी चाहिए न कि जाति या धर्म की। अणुव्रत आन्दोलन आत्मबल को जगाने वाला आन्दोलन है, सबको अपनी क्षमता का अहसास कराने वाला है। तभी तो भारत के द्वितीय राष्ट्रपति डॉ॰ एस॰ राधाकृष्णन ने इस आंदोलन की प्रशंसा में कहा था "हम ऐसे युग में रह रहे हैं, जब हमारी जीवात्मा सोयी हुई है, आत्मबल का अकाल है और सुस्ती का राज है। हमारे युवक तेजी से भौतिकवाद की ओर झुकते चले जा रहे हैं। इस समय किसी भी ऐसे आन्दोलन का स्वागत हो सकता है जो आत्मबल की ओर ले जाने वाला हो। इस समय हमारे देश में "अणुव्रत आन्दोलन" ही एक ऐसा आन्दोलन है, जो इस कार्य को कर रहा है। यह काम ऐसा है कि इसको सब तरफ से बढ़ावा मिलना चाहिए।"

पर इसे देश का दुर्भाग्य ही कहा जायेगा कि राष्ट्रहित में डॉ॰ राधाकृष्णन ने जिस आन्दोलन को बढ़ावा मिलने की बात कही थी उस देश में सरकारी स्तर पर इस तरह का कोई प्रयास नहीं किया गया। जिसके कारण आज चारों तरफ अनेक समस्याएं देखी जा रही हैं। सत्ता के शीर्ष पर बैठे हुए जिनसे राष्ट्रहित के कार्यों की अपेक्षा थी, दुर्भाग्य से राष्ट्रहित की बात तो दूर राष्ट्र का सबसे ज्यादा शोषण ऐसे ही लोगों ने किया। 'चले थे बचाने मंजिल को, खाक में मिलाकर चले गये' की कहावत ही ऐसे लोग चरितार्थ किये। ऐसे लोगों के कारनामों के कारण 'हर शाख पर उल्लू बैठा है, अंजामें गुलिस्तां क्या होगा?' की सच्चाई सामने है।

अतः अणुव्रत आन्दोलन के समक्ष आज कड़ी चुनौती है। अणुव्रत अमृत महोत्सव वर्ष के अवसर पर इस चुनौती का मुकाबला करने के लिए अणुव्रत कार्यकर्त्ताओं को पूरी तैयारी के साथ सामने आना चाहिए। हम भले ही अपने दर्शन के हिसाब से व्यक्ति को ही सुधारने की कोशिश करें पर वह व्यक्ति समाज का उपेक्षित, शोषित, अभावग्रस्त न होकर सत्ता पर बैठा हुआ व्यक्ति हो ताकि एक-एक को सुधारने से ग्यारह पर प्रभाव पड़े। यदि ऐसा होता है तो अणुव्रत अनुशास्ता आचार्य महाप्रज्ञ का यह कथन कि अणुव्रत के कार्यकर्त्ताओं को ५० वर्ष के कार्य पांच वर्ष में करने हैं, सार्थक हो सकेगा और यह नैतिक आन्दोलन समाज पर अपनी छाप छोड़ सकेगा।

युवकों के बारे में आचार्य श्री तुलसी के विचार

- *युवापीढ़ी सदा से मेरी आशा का केन्द्र रही है, चाहे वह मेरे दिखाए मार्ग पर कम चल पायी हो या अधिक चल पायी हो। फिर भी मेरे मन में उनके प्रति कभी भी अविश्वास और निराशा की भावना नहीं आती। मुझे युवक इतने प्यारे लगते हैं जितना कि मेरा अपना जीवन। मैं उनकी अद्भुत कर्मजा शक्ति के प्रति पूर्ण आश्वस्त हूं।*

हमने अपनी शक्ति को अच्छी तरह से तोला और यह भी सोचा की हम जब भी अपनी सीमाओं को विस्तार देना चाहेंगे विरोध होगा। विरोध को सहे बिना गति-प्रगति संभव नहीं है।

-आचार्य श्री तुलसी

दादा का पत्र

किसे कैसे याद करें?

❑ शंकरलाल मेहता ❑

प्रिय बिंदु,
प्रसन्न रहो।

बचपन की कुछ घटनायें अब भी याद हैं। जिन बातों का मानस पर संस्कार रूप में अंकन हो जाता है, उन्हें भुला नहीं सकते। तभी तो संस्कार निर्माण के कार्य को महत्व दिया जाता है। गांव के कच्चों घरों में श्रमशील जीवनयापन करने वाली मां रोज प्रातः जल्दी उठती। अनाज पीसती। स्तवन गाती रहती। नींद लेते हम दो भाई आधा अधूरा श्रवण कर ही लेते थे।

कई अवसरों पर मां पिसाई के कार्य को स्थगित कर देती। बच्चों में जानने की एक सहज जिज्ञासा होती है। मैं कारण पूछता तो वह बताती कि आज अमुक की पुण्य तिथि है। कभी सास की तो कभी ससुर की! कभी अन्य निकट संबन्धी की। उस रोज वह कई ऐसे कार्यों को नहीं करती, जिनमें हिंसा होती। पीसना, लीपना, धोना, कंडे थापना----कई कार्यों के लिए अगता हो जाता। कुछ तिथियां भी निर्धारित थीं। जरूरत तो सदा की होती है। मगर कभी अधिक श्रम करके उसकी भरपाई कर लिया करती।

बिंदु! तुम हंसोगे। मैं कई बार उसके साथ चक्की पीसने लग जाता। गोबर के आंगन बनाने,



में मदद करता। बर्तन मांजता, पानी छानता। बहुत कीमती होता था पानी। एक किलोमीटर दूर स्थित कुएं से खींच कर, घड़े सर पर धर कर लाना होता था। एक बूंद भी व्यर्थ न जाय। पूरी हिदायत रहती थी। उसने सफाई, रसोई, रखरखाव का प्रशिक्षण वड़े लाड़-प्यार से दे डाला। कभी कुछ नाराजगी दिखाकर मैं कह देता- 'मैं क्या छोरी हूं जो तू मुझसे इतना काम लेती है-' वह भी हंस देती। अरे! काम आयेगा यह किया हुआ काम। याद करेगा--।' उसका यह उत्तर जीवन में सार्थक निकला।

लो, मैं इतनी सी बात बताने के लिए तुम्हें अपना इतना अतीत उद्घाटित कर बैठा। बात तो इतनी-सी थी कि मां को याद था कि किसे कब याद रखना है और उसकी स्मृति में सावद्य क्रिया को कितना अल्प करना है। आज भी हमारे कई पुरखों की तिथियां आती हैं। याद भी नहीं रहती। उस दिन विशेष कुछ करने की या न करने की बात तो दूर रही, संयम के साथ मनाने की मानसिकता समाप्त हो गई।

एक दिन तुम्हारे पिता प्रातः से उदास थे । खाना खाने की भी इच्छा नहीं हो रही थी। बहुत पूछने पर बताया, कि आज मेरी माता की पुण्य तिथि है।' उसे समझाया कि उसकी याद में सत् संकल्प करो। विंदु, अब तो वह पुण्य तिथि तैंतीस बार आ चुकी है। शायद कुछ तो प्रमाद में विस्मृत-सी रह जाती है। मैं अवश्य सोचता हूं कि 'उससे किए कई वादे उतने अच्छी तरह पूरे नहीं हुए। और उन्नत होनी चाहिए थी वृत्तियां। आनी चाहिए थी कषायों में अल्पता...

विंदु, तुम जानते हो जयपुर में रहने वाले मेरे चचेरे भाई मीठालाल को। बहुत ललक रहती है उसे अपनी वंशावली का पूरा व्यौरा हो। एक दिन ले भी आया। पूरे नाम पढ़ने में ही एक घंटा लग गया। बहुत श्रम किया उसने। कभी नाम के अन्त में 'पाल' लगता था। किस प्रकार जैन धर्म के अनुयायी होने का अवसर आया। लगभग दस पीढ़ियों के पूरे नाम उसमें हैं। उसके पूर्व के भी एक-एक नाम कई पीढ़ियों के है। हम आज नाम नहीं पढ़ पाते। उन्होंने भी हमारी तरह जीवन जिया होगा। सुख-दुःख की अनुभूति की होगी। कुछ आदर्श जिये होंगे, कुछ आगे विरासत में दे गये होंगे। यादों की उम्र होती है किन्तु संस्कृति को दीर्घजीवी बनाया जा सकता है। नाम महत्व रखते हैं। इस वार विवाह निमन्त्रण पत्रिका में भूल से एक भाई का नाम रह गया। नाराज हो गया।

कभी राजाओं के चित्र देखने को मिलते हैं, उनके पुराने महलों में। पूरी तिथियां पढ़ भी नहीं पाते। सबके चित्र लगाने जितनी जगह भी नहीं रह पाती। जमीन से उठा आदमी जमीन में मिल जाता है। मगर वे अमर होते हैं जो सुख शान्ति से जीने का मार्ग प्रशस्त कर जाते हैं। ऐसे ही एक व्यक्तित्व रहे गणाधिपति तुलसी।

मेरे कक्ष में मेरे पिता के हाथ का बना चित्र है। तुमने उन्हें नहीं देखा। सन् साठ में दिवंगत हो गये। कई वार जब उद्विग्न होता हूं तो उस चित्र को देखने लग जाता हूं। बहुत कुछ पाना

चाहता हूं उससे। अभावों में भी सुख और शान्ति से जीने वाले, या यों कहूं कि अभावों को अभाव न मानने वाले, उस पुण्य आत्मा से मैं प्रेरणा लेना चाहता हूं। दो जोड़े कपड़े रखते थे। मैं पूछता तो कहते कि 'अधिक को क्या करना है। एक धोना है एक पहनना है।' श्रावकत्व उनके जीवन की क्रियाओं में था। हम तो अब केवल कार्यक्रम मनाकर संतुष्ट हो जाते हैं- वैभव मे भी जब-अभाव की अनुभूति होती है, कमी.... हां कमी, जो मस्तिष्क में घर कर जाती है- की कड़वाहट और कसक होती है तो अनायास मुंह से निकल जाता है- 'पिता, हम भटक गये हैं। हमे दिशा दर्शन दो---।' कभी उनका चेहरा उलाहना देता है, कभी हमें देख उदास हो जाता है। हम 'हैं' से परे ही सोचते हैं। तभी तो जो 'नहीं' है वही उभर कर जहन में आता है। कृत्रिम है

“ बिंदु, पूज्य गुरुदेव की पुण्य तिथि आ गई है। आज उन्हें स्मरण करते हुए तुम्हें यह पत्र लिख रहा हूं। यों तो वे स्मृति से ओझल हुए ही कब हैं? जिसे भूले ही नहीं उसे क्या याद करें? आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने महावीर जयंती पर उद्‌बोधन देते हुए कहा था कि एक दिन महावीर को याद कर लें और साल के अन्य दिनों में उन्हें भूल जायें तो याद करने में क्या लाभ है? उसे सदा याद रखना है। उससे अधिक आवश्यक है उसके बताये मार्ग पर चलना। बिंदु, पूज्य गुरुदेव की पुण्यतिथि तभी सार्थकता से मनायेंगे जब हम उनके द्वारा बताये गए मार्ग पर चलेंगे। उनके स्वप्नों को साकार करेंगे। उसे कभी विस्मृत नहीं करेंगे। ”

अभाव। क्या उनके जीवन से हम कुछ सीख पाये हैं? गरम कोट नहीं बनवा पाते तो यह हिम्मत भी तो देते थे- तुम्हारे भीतर शक्ति है। क्या करेगी ठंड तुम्हारा? हिम्मत से सामना करो सर्दी का---' परिषह उन्हें प्रताड़ित नहीं कर पाते थे।

और बिंदु, मुझे याद आते हैं पूज्य गुरुदेव के कई बार के छोटे-छोटे कथन। लोग मान लेते हैं कि अमुक के बिना काम नहीं चलेगा। सुगमता से जी नही सकेंगे। यह सोच की भूल है। दुर्वलता है। मैंने उनके साधुपन के इतने लम्बे काल में कभी यह महसूस नहीं किया कि रात को कुछ भी खाना-पीना आवश्यक होता है। बहुत अच्छी तरह चलता है। जीवन को तो ढालना होता है। जव कभी किसी संकल्प को स्वीकार करना कठिन बताते तव आप इस तरह प्रेरित करते।

जीवन को सहजता, सरलता और त्यागवृत्ति से जीने का महत्व वे अपने ढंग से समझाते। याद है मुझे। एक बार प्रवचन में उन्होंने कहा, लोग स्वर्ग नरक को काल्पनिक वताते हैं। चलो,

उनकी वात मान लें। फिर भी हमें क्या अलाभ हुआ? अल्पतम आवश्यकताओं और अपरिग्रही व्रती जीवन जीने में ग्रहस्थों द्वारा भोगी जाने वाली सुविधाओं को नहीं भोगा। उन्हें भोगने हेतु गृहस्थ जिन कठिनाइयों को उठाते हैं, उनका एहसास भी है। क्या बुरा है अणगार का जीवन? इसके विपरीत कर्मानुसार स्वर्ग-नरक गति सच्चाई हुई तो अन्य लोगों क्या होगा---? परिषद में से उत्तर संभवतः आ गया- वेभाव की पड़ेगी। उस रोज प्रभावशाली ढंग से गुरुदेव ने कहा था- 'प्रलोभन और भय के कारण संयम जीना अधूरी समझ है। व्यक्ति अपने हृदय को टटोले। जो कुछ उसे कचोट रहा है वह नरक ही तो है।'

बिंदु, पूज्य गुरुदेव की पुण्य तिथि आ गई है। आज उन्हें स्मरण करते हुए तुम्हें यह पत्र लिख रहा हूं। यों तो वे स्मृति से ओझल हुए ही कब हैं? जिसे भूले ही नहीं उसे क्या याद करें? आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने महावीर जयंती पर उद्‌बोधन देते हुए कहा था कि एक दिन महावीर को याद कर लें और साल के अन्य दिनों में उन्हें भूल जायें तो याद करने में क्या लाभ है? उसे सदा याद रखना है। उससे अधिक आवश्यक है उसके बताये मार्ग पर चलना। बिंदु, पूज्य गुरुदेव की पुण्यतिथि तभी सार्थकता से मनायेंगे जब हम उनके द्वारा बताये गए मार्ग पर चलेंगे। उनके स्वप्नों को साकार करेंगे। उसे कभी विस्मृत नहीं करेंगे।

गुरुदेव के दिवंगत होने पर मैंने तुम्हें पत्र में लिखा था- उसे कहां खोजे? क्या उलाहना दें समय को? मैं उनके दर्शन नहीं कर सका। उस खेदाभिव्यक्ति के साथ जो लिखा उसकी सार्थकता आज भी है। दूर होकर वे और निकट आ गये हैं। उसे ही पुकारते है हर समाधान हेतु। समाधान मिलता है। मैंने तुम्हें लिखा था 'मैं सोचता रहा रोग जाये तो जाऊं और उससे ही पहले गुरुजी चले गये। एक महंगा सबक मिला। कभी कुछ परिस्थितिजन्य कठिनाइयों को साहस से लांघ कर भी कार्य कर लेना चाहिए। न गये समय को खोज पाते हैं, न उसे जो उस समय के साथ खो जाता है। समय तो सरित प्रवाह है। उसमें से कोई पात्र न भर सके तो समय क्या करे? गतिमान के साथ चलता है समय। उन्होंने संयम का पूरा उपयोग किया था।

बिंदु, उन्हें समय से कोई शिकायत नहीं थी। उन्होंने एक-एक पल का मूल्य आंका था। हमें भी आज उन्हें पुनः स्मरण करते समय उनकी उस सीख को याद रखना चाहिए कि समय को खोओ तो स्वयं को खो दोगे। उनकी अनमोल सीख अनेक हैं। वे केवल बोली या लिखी ही नहीं गई जी कर दी गई हैं। मैंने तुम्हें लिखा था, उसकी आवश्यकता आज भी है। जिन्हें कन्धों पर उठाकर पहुंचा देते हैं, उनके दायित्वों को भी कन्धों पर उठाना होता है।' मैंने तुमसे एक अपेक्षा की थी उसे आज भी दोहरा दूं। 'गणाधिपति के प्रति तुम्हारी बहुत श्रद्धा है बिंदु। कोई ऐसा काम जीवन में मत करना कि उनके नाम को कोई बट्टा लगे। यही सच्चा सर्मपण होगा।'

आज सारे जगत को उनके जीवन से जीने की कला सीखनी है। वह अकेला लाखों को साथ लेकर चला। हम हैं कि परिजन मिलकर नहीं रह सकते। दो भाई साथ नही निभा सकते। इतना

ही नही एक दूसरे को छलने में लग जाते हैं। पति-पत्नी तक अलग रहते हैं। सभी अपने-अपने अहं लेकर बिखरते हैं। क्या मनायेंगे उनकी पुण्य तिथि? अरे पुण्य तो इसमें है कि उसके जीवन से मिलकर जीना सीख लें। दूसरे के दर्द को समझना सीख लें। अपने असत्य से किसी सत्य का गला घोंटने का प्रयास न करें, स्वयं को पहचानने, आंकने और ढालने का अवसर है पुण्य तिथि। वे कहते मुझे अपनी समस्या तो बताओ। मैं समाधान दूगां। इस दृष्टि से कई प्रयास भी किये। आज भी उसे अपनी समस्या बता दो। उसके जीवन की पोथी से समाधान पा जाओगे।

बहुत कुछ लिखा और बोला जायेगा उसके लिए। कई अंक विशेषतया निकलेंगे। प्रश्न तो यह है कि हम जीवन में कितनी विशेषताएं लाते हैं? सच-सच बता दो उसे अपनी कमियां। तुम्हारी दुर्बलताएं और अहं कुछ भी उससे छिपा नहीं है। सच्चे हृदय से संकल्प करो, उसके सच्चे अनुयायी बनकर उन पर विजय पाने हेतु। तिथियां तो आगे से आगे बदलती रहेंगी देखना है कि हम कितने बदलते हैं? उसकी रिक्तता तब भरेगी जब हम स्वयं को दुर्बलताओं से रिक्त करेंगे। ऐसा रहनुमा पाकर भी राह से भटकेंगे तो कौन राह पर लायेगा?

बिंदु, यह सब कुछ अति संभावना नहीं हैं। वह यदि स्मृति में है सन्मुख है तो उसका जीवन भी स्मृति में है - उसका दीप्ति चेहरा दृगों में है। कैलेण्डर बदलते समय स्वयं को बदलने की मानसिकता अपेक्षित है। उसने स्वयं को जीतकर विजयी बनने का सिंहनाद फूंका था। हर युवक को कोने-कोने से विजय गीत सुनाई देता होगा।

लक्ष्य है ऊंचा हमारा, हम विजय के गीत गायें।
चीर कर कठिनाइयों को, दीप बन हम जगमगायें।।

उसने जो लक्ष्य निर्धारित किये थे उनका पुनः स्मरण कर लो। सूर्य-सा तेज, शशि सी शुभ्रता, पवन-सी गति, अथक, अभय, अटल रहकर स्वस्थ तन, मन, चिन्तन चेतना की लौ जलाते रहना है। वे स्वयं ऊंचे थे इसलिए उनके द्वारा निर्धारित ऊंचाइयों का माप भी ऊंचा था। वे युवको को शक्तिशाली देखना चाहते थे। उसके साथ-साथ शालीन भी। कम से कम गिनने वालों की गिनती में कोई न आये।

उसे स्मरण करते समय उन अपेक्षाओं का भी स्मरण करें जो उसने अनुयायियों से की थी। कथन तो बहुत कुछ हो सकता है। उसे विराम देना होगा। किन्तु जो करना है उसे विराम नहीं देता है।

आओ! उस दिव्य आत्मा को हृदय की गहराइयों से नमन करें और अनुगमन के लिए संकल्पित हों।

अच्छा इस अवसर पर तुम्हें अपने साथियों, संबंधियों, परिजनों को भी उनके दायित्वों का स्मरण कराना है। बच्चों को आशीष।

तुम्हारा दादा

सात्त्विक आहार, पवित्र आचरण और संयत कार्य ही सुख और शान्ति के मूलमंत्र हैं। जब तक व्यक्ति अपने आचरण के प्रति सजग नहीं बनेगा, संसार की कोई भी शक्ति उसे सुख और शान्ति का वरदान नहीं दे सकेगी।

–आचार्य श्री तुलसी



जब कभी मुझे शिखर को छूने वाली प्रतिष्ठा मिली, उसके तत्काल बाद इतना भयंकर विरोध मिला कि प्रतिष्ठा का अहं जन्म ही नहीं ले पाया।

—आचार्य श्री तुलसी

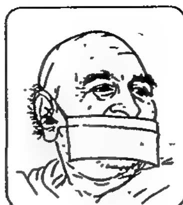
धर्मशून्य विज्ञान खतरनाक है और विज्ञान शून्य धर्म अंधविश्वास है। इसलिए वैज्ञानिक को धार्मिक और धार्मिक को वैज्ञानिक बनना चाहिए। विज्ञान और धर्म के अधूरेपन को दूर करने का एकमात्र उपाय यही है कि दोनों एक दूसरे के पूरक बनें। ऐसा हुआ तो मनुष्य अनेक प्रकार की त्रासदियों से बच जाएगा।

-आचार्य श्री तुलसी



मैं मूर्तिपूजा में विश्वास नहीं करता, इसका अर्थ यह नहीं कि मैं उसकी निंदा करूं या मंदिर में जाने का विरोध करूं।

—गणाधिपति आचार्य श्री तुलसी



बुरा काम जितना बुरा है उससे बुरी है उसकी स्मृति। चेतना को स्थिर बनाने के लिए मन, वाणी, शरीर और श्वास की साधना जरूरी है।

-गुरुदेव श्री तुलसी

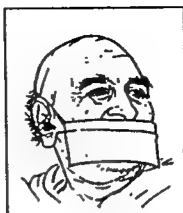
गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी की
प्रथम पुण्यतिथि पर

श्रद्धासुमन समर्पित

सभी सदस्यगण

तेरापंथ युवक परिषद,

मुलण्ड (मुम्बई)



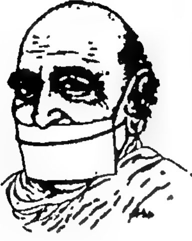
मिछले सौ साल में जैन धर्म में तीस प्रमुख घटनाएँ हुई जिनमें से एक है तेरापंथ का कायाकल्प । इसे मैं एक क्रांति मानता हूँ । इसकी विशेषता यह है कि आचार्य श्री तुलसी ने जन-समूह को साथ लेकर यह क्रांति की है और क्रांति के बाद भी उनके अनुयायियों की संख्या बढ़ती गई है । क्रांति में भी लोग पीछे छूट जाते हैं पर आचार्यश्री समाज को साथ लेकर चलते हैं ।

—डॉ० कुमार पाल देसाई



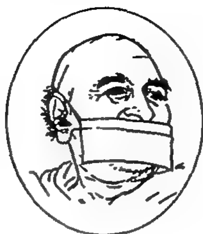
मैं कहूंगा कि मैं राम नहीं कृष्ण नहीं, बुद्ध नहीं, महावीर नहीं, मिट्टी के दीए की भांति छोटा दीया हूं। मैं जलूंगा और अंधकार को मिटाने का प्रयास करूंगा, यह मेरा काम है।

—आचार्य श्री तुलसी



आप गरीब माने तो मैं सबसे बड़ा गरीब हूं और अमीर मानें तो मैं सबसे बड़ा अमीर हूं। गरीब इसलिए हूं कि पूंजी के नाम पर मेरे पास एक नया पैसा भी नहीं है और अमीर इसलिए हूं कि मेरी कोई चाह नहीं है।

–आचार्य श्री तुलसी



आचार्य श्री तुलसी भारतीय सन्त-परम्परा में विशिष्ट कोटि के सन्त हैं। आप द्वारा मानव-कल्याणकारी प्रवृत्ति धर्म की सुरक्षा के लिए संबल है। भगवान् बुद्ध और महावीर की समकालीन परम्परा आज भी जीवंत है। उनके उपदेशों को जन-जन तक पहुंचाने का प्रयास सफल हो।

-दलाई लामा

सचमुच हम कितने सौभागी सदा त्रिवेणी न्हायेंमानव जीवन,
जैनधर्म और भैक्षव शासन पाये।

-गुरुदेव श्री तुलसी

प्रथम पुण्यतिथि पर

श्रद्धानत

सभी सदस्यगण

तेरापंथ युवक परिषद,

मलाड़ (मुम्बई)

प्रशंसा सुनकर खुश होना और विरोध में नाराज होना कमजोरी है।

-आचार्य श्री तुलसी



" खूबसूरती बड़े-बड़े भवनों, कल-कारखानों, सड़को, बसों, ट्रेनों, कालेजों आदि से नहीं बढ़ती । उसके लिए अपेक्षित है आन्तरिक " ऐसे तत्व, जो बिखराव की चेतना को सृजन में बदल देते है ।

—आचार्य श्री तुलसी



हार्दिक श्रद्धांजलि!!
राष्ट्रसंत आचार्य श्री तुलसी को प्रथम पुण्यतिथि पर
विनम्र प्रणाम!

श्रद्धानत

तेरापंथ युवक परिषद्

अहमदाबाद



राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह के साथ आचार्य श्री तुलसी



आचार्य श्री तुलसी बालमुनियों को श्रावक सम्बोध का अध्ययन कराते हुए



...सी एवं आचार्य महाप्रज्ञ के साथ साहित्यकार जैनेन्द्रकुमार



राष्ट्रसंत आचार्य श्री तुलसी को प्रथम पुण्यतिथि के अवसर पर श्रद्धासुमन अर्पित



पूर्व प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई आचार्य श्री तुलसी के अमृत महोत्सव अभिनन्दन समारोह में



...उगता है। वह प्रतिदिन अपने उदग्र तेज के साथ आता है और ...चला जाता है ? पर क्या अंधकार का नाम शेष हुआ है ? क्या ...अस्तित्व कुछ भी कम हुआ है ? सूरज इन प्रश्नों में उलझे बिना ...काम कर रहा है और करता रहेगा।

—आचार्य श्री तुलसी



... विवेक की जागृति सबसे बड़ा धर्म है।

-आचार्य श्री तुलसी